धारा...90 ग्रंथांक...303

आत्मदर्शन गीताञ्जली

(गद्य-पद्यमय)

- आचार्य कनकनन्दी

पुण्य-स्मरण

नन्दौड़ में एक परिवार द्वारा आयोजित द्वितीय चातुर्मास 2018
के उपलक्ष्य में

स्वैच्छिक अर्थ सौजन्य (ज्ञानदानी)

1. धर्म दर्शन-विज्ञान शोध संस्थान बड़ौत (उ.प्र.)
2. धर्म दर्शन सेवा संस्थान, उदयपुर (राज.)

ग्रंथांक-303 संस्करण-प्रथम 2018
प्रतियाँ - 500 मूल्य - 121/- रु.

प्राप्ति स्थान एवं सम्पर्क सूत्र

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा आशीर्वाद प्राप्त

(1) धर्म-दर्शन सेवा संस्थान

द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा

चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,
उदयपुर (राज.)-313001/मो. 097832-16418

(2) डॉ. नारायणलाल कछारा

सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान, 55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001
फोन नं. 0294-2491422/मो. 092144-60622
E-mail:nlkachhara@yahoo.com

जहाँ समस्या वहाँ ही समाधान

(मेरे गुणों को दोष मानने-कहने वालों से प्रभावना)

(अन्य की शंका (निन्दा) से स्व-पर लाभान्वित)

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल:आत्मशक्ति....)

जहाँ समस्या वहाँ ही समाधान,
जहाँ गाँठ वहाँ ही गाँठ खुले निदान।
परतंत्रता दूर से यथा मिले स्वाधीन,
कर्म क्षय से यथा मिले परिनिर्वाण।। (1)

अन्धेरा ही प्रकाश में होता परिवर्तन,
'दीपस्तमः पुद्गल भावतोअस्ति' प्रमाण।
''नैवाऽसतो जन्मः सतो न नाशो'' न्याय
''न सर्वथा नित्यमुदेत्यपैति'' प्रमाण।। (2)

हर क्षेत्र में हुआ अनुभव अनेक,
बाल्यकाल से सम्प्रति कार्य पर्यन्त।
इस सम्बन्धी मेरे अधिक ग्रन्थ,
अधिकांश वैज्ञानिक अनुसन्धान तक।। (3)

नवीन कुछ अनुभव यहाँ करूँ वर्णन,
स्वयं दृष्टान्त स्वयं द्राष्टान्त मान्य।
शिष्य/ (भक्त) मणिभद्र दीपेश खुशपाल,
मेरे 'मैं' प्रयोग को मान थे भूल।। (4)

किन्तु जब 'मैं' पढ़ाया उन्हें 'मैं' का सत्य,
व्याकरण से आध्यात्मिक भी रहस्य।
''अहमेक्को खलु सुद्धो'' का बताया रहस्य,
स्वयं प्रति व मेरे प्रति बढ़ा उत्साह।। (5)

अन्य भी जो 'मैं' का कर रहे स्वाध्याय,

उनमें भी बढ़ रहा आत्मिक प्रभाव।
आनन्द उत्साह की हो रही वृद्धि,
'अहंकार' ममकार की हो रही हानि/(क्षति)।। (6)

'आध्यात्मनन्दी' को था भाषा का गर्व,
मेरी भाषा की निन्दा की ग्यारह वर्ष तक।।
जब उन्हें सिखाया हिन्दी व्याकरणादि,
स्व-दोष-कमियों को कर रहे कमी/ (हानि, दूर)।। (7)

अन्य भी जो कर रहे हैं अध्ययन,
उन्हें भी ज्ञात हुआ नहीं है हिन्दी ज्ञान।
मैं भी कर रहा हूँ सरल हिन्दी प्रयोग,
जिससे लाभान्वित हो रहे बहुत लोग।। (8)

'विमल' बोला आप (कनक सूरी) की हो रही निन्दा,
ग्रन्थ प्रकाशन की हो रही बहुत निन्दा।
आगम से जब पढ़ाया ज्ञानदान महिमा,
स्वेच्छा से कर रहे ज्ञानदान प्रचुर।। (9)

मैं करता हूँ गुरु-शास्त्र-शिष्य-प्रशंसा,
अध्ययन-अध्यापन-ग्रन्थ लेखन।
देश-विदेशों में शिष्यों द्वारा ज्ञान प्रचार,
इसे भी अनेक लोग माने मेरा अहंकार।। (10)

जब उन्हें पढ़ाया मैं विनय पंचप्रकार,
निह्नव/(छिपाना) आदि से बन्धे घाती प्रचुर।
पूजा-अर्चना-आरती आदि गुण प्रशंसा,
इसके बिना न होता धर्म प्रारंभ।। (11)

परनिन्दा-अपमान मैं न करूँ सर्वथा,
''गुणगणकथा दोषवादेच मौनं'' सर्वदा।
इसे भी अनेक शिष्य माने गलत,

पर निन्दा को मानते थे कथन सत्य।। (12)

आगम से पढ़ाया जब बहुत विस्तृत,
'पृष्टमांस भक्षी' होते निन्दक लोग।
देव-शास्त्र-गुरु निन्दा से होता मिथ्यात्व,
तब से हो रही क्रान्ति विशेष।। (13)

गौतम गणधर की शंका से दिव्यध्वनि निर्गत, जिससे हुआ जिनशासन प्रवृत्त।
तथाहि अन्य कि शंका से हो रही प्रभावना, स्वाध्याय से ज्ञानदान की भावना।। (14)
'सत्यमेव जयते' भी हो रहा प्रसिद्ध, समता-शान्ति-क्षमा हो रही प्रसिद्ध।
इससे हो रही मेरी आत्मविशुद्धि, 'सूरी कनक' का लक्ष्य आत्मसिद्धि।। (15)

सागवाड़ा दि 23/06/2018 रात्रि 09:53

कनक गुरु पारस

कवयित्री: साध्वी आर्यिका सुवत्सलमति

(चाल: मधुबन खुशबु देता है...)

कनक गुरु पारस है, मैं तो तुच्छ लोहा हूँ।
पारस कि संगति पाने से...लोहा कनक बनता है।। (ध्रुव)
अथवा
जीवन कैसे जीना है? कनक गुरु से जाना है...।
गुरुवर ज्ञान देते हैं, ज्ञानज्योति हम पाते हैं।। (ध्रुव)

धारा समय की बह जाये जब,
फिर तो हम पछतायेंगे....2
अमूल्य मानव जीवन पाया,
व्यर्थ ना हम गवायेंगे....2
मैं को ही मैं में पाना है, मोक्ष महल तक जाना है।। पारस...(1)

निश्चल हंसी को लखकर, सभी हर्षित होते हैं...2
स्वाध्याय सभा में आने पर, पूर्वाग्रह मिट जाते हैं...2
अनादि भ्रमों को दूर कर, सम्यक् श्रद्धानी बनते हैं।। गुरुवर....2

राजनीति में जब पहुँचे तो, भ्रष्टाचार देखा था....2
वैज्ञानिक बनना चाहा, वो भी मन को ना भाया....2
श्रमण बनकर तीनों लक्ष्य, कनक गुरु ने पाए हैं।। पारस...(3)

सागवाड़ा दि 13/06/2018 मध्याह्न 02.00

गुरुवर कनकनन्दी श्री मुझे सन्मति हेतु आशीर्वाद दो

- क्षु. सुवीक्षमती

(चाल: एक तू ना मिला...)

'कनक' गुरुवर मेरे ऽऽ
'कनक' गुरुवर मेरे, आयी हूँ चरणों में तेरे ऽऽ ...'कनक'...
भाव है ये मेरे ऽऽ
भाव है ये मेरे, हर लो सारे विभाव मेरे ऽऽ... 'कनक'....।। (ध्रुव)।।

धीर-वीर-गम्भीर गुरुवर हो तुम, मेरे लिए तो प्रभुवर हो तुम-2
मोह क्षोभ त्यजूँ, ऐसा वैराग्य दे दो मुझे... 'कनक'...।। (2)।।

करुणा के सागर सूरीवर हो तुम, आत्मोपदेशी ऋषिवर हो तुम-2
तुम-सा कोई नहीं, इस धरा पर मिला है मुझे...'कनक'...।। (3)।।

मूढमति हँ 'मैं' गुरुवर अति, कर दो मेरी दुर्मति सन्मति-2
दुराग्रह त्यजूँ, ऐसा सुज्ञान दे दो मुझे...'कनक'...।। (4)।।

चरणों में तेरे रहूँ 'मैं' सदा, कृपादृष्टि तेरी हो मुझ पर सदा-2
'सुवीक्ष' तव सम बनूँ, ऐसा वरदान दे दो मुझे...'कनक'...।।(5)।।

सागवाड़ा, दि. 13/05/2018, मध्याह्न-1:30
(यह कविता ब्र. पल्लवी की भावना से बनी)

जिनवाणी माता की आरती

- बा.ब्र.उमंग जैन

(चालः चिंतामणि पारसनाथ की....)

जिनवाणी की करुँ आरती करुँ आरती करुँ आरती
जय जिनवाणी जय जिनवाणी जय जिनवाणी माता
आए हैं चरणों में हम दो मार्गदर्शन माता

ज्ञानदायिनी माता है तू तीर्थंकर के मुख से निकली
गणधरों ने तुझे झेला है जैन धर्म की रक्षाकरणी
आ...आ...आ... ज्ञानदायिनी माता - जय हो
जैन धर्म की माता - जय हो
प्यारी प्यारी माता - जय हो
सबके मन को भाती है जिनवाणी की करुँ आरती करुँ आरती करुँ आरती
जय जिनवाणी जय जिनवाणी जय जिनवाणी माता (आए है चरणों... (1))

जिनवाणी को जो भी ध्याता उसका बेड़ा पार लग जाता
'कनक' गुरु तुझको ही ध्याते तेरा पर्व अवश्य मनाते
आ...आ...आ... जैन विज्ञान की माता - जय हो
साधुओं की माता - जय हो
उच्चतम यह माता - जय हो
झुम-झुम कर करुँ आरती करुँ आरती करुँ आरती
जय जिनवाणी जय जिनवाणी जय जिनवाणी...(आए है चरणों.... (2))

बडे-बडे आचार्य तुझको ध्याते तेरी वाणी का अनुसरण करते
तेरी वाणी में जो सत्य होता वो किसी की वाणी में न होता
आ...आ...आ... सत्य तथ्य दायिनी - जय हो
आत्म स्वरूप दर्शनी - जय हो
मोक्ष महल दात्रि - जय हो
ऐसी मोक्ष दायिनी की करुँ आरती करुँ आरती करुँ आरती

जय जिनवाणी जय जिनवाणी जय जिनवाणी - आए हैं चरणों...(3)

जो भी तुझको श्रद्धा से सुनता भले ही आगे भूल भी जाता
उसका पुण्य जो भी मिलता आगे भवों में फलीभूत होता
आ...आ...आ... शुद्ध फल दायिनी - जय हो
अरिहंत रूप माता - जय हो
मार्गदर्शिनी माता - जय हो
'उमंग' भी तुझको ध्याना चाहे करुँ आरती करुँ आरती करुँ आरती
जय जिनवाणी जय जिनवाणी जय जिनवाणी...(आए है चरणों...(4))

सागवाड़ा दि. 14/6/2018 समय मध्याह्न 01:30

मुझे आत्मज्ञान देने वाले आध्यात्मिक अनुभवी ज्ञानी कनकनन्दी गुरुवर!

रचयित्री-श्रीमती प्रेरणा शाह

(चालः मधुबन खुशबू देता है...)

कनक गुरुवर ज्ञानी है...मैं/(आत्मा) को बोध कराते हैं...
/(सबको सुज्ञान देते हैं)....
अनुभव इनका गहना/(गहरा) है...आत्मा रमण करते हैं...
कनक...(ध्रुवपद)...
ज्ञानी वही होते हैं जो...अन्य को ज्ञान कराते हैं...2
बाल्यावस्था से गुरुवर... निःस्वार्थ ज्ञान-दानी हैं...2
समताधारी यतिवर हैं...सरलता की मूरत हैं...कनक (1)
कनक गुरु ना मिलते मुझे तो...आत्मा परिचय कराता कौन?....2
शरीर और आत्मा में...भेद करना सिखाता कौन...2
गुरुवर करुणाधारी हैं...सब को वात्सल्य देते हैं...कनक (2)
ऐसे सद्गुरु को पाकर...जीवन धन्य हुआ मेरा...2
जब तक मुक्ति ना मिले...भव-भव में गुरुवर मिलते रहे...2

'प्रेरणा' भावना भाती है...गुरुवर को शीश झुकाती है...कनक...(3)

सागवाड़ा, दि-12/06/2018, मध्याह्न 3.00

प्रेरणा शाह

अध्यक्षा

18000 दशा हुमड महिला महासभा

आत्म तत्त्व ज्ञाता कनकनन्दी गुरुवर-चातुर्मास हेतु निवेदन

- सुरेखा जैन (भूतपूर्व शिक्षिका)

(चालः गोरी तेरा गांव)

गुरुवर कनकनन्दी न्यारे, हम भावों से पुकारे
आशीष हमें दो, आशीष हमें दो
प्रशान्त तेरी मूरत, सबके मन को भाये
समताधारी हो, समता धारी हो

मंजिल मेरी तेरे चरणों में, रखना गुरु शरणों में
तेरे चरणों में शीश झुकाके, करुँ वन्दन गुण गाके
गुरु तुम करुणा निधान, कीजे आप समान
आशीष हमें दो, आशीष हमें दो

जी करता है जीवन अपना, चरणों में अर्पण कर दूँ
जनम जनम के दुःख को हरने, भावों से वन्दन कर दूँ
गुरुवर आप ही सहारा, दिल से हमने माना
आशीष हमें दो, आशीष हमें दो

वर्षायोग का योग बने गुरु, भावना हम यही करते
गुरु मुख से ज्ञानामृत बरसे, भव्यजीव ही पीते हैं
(मैं) आत्मा स्वरूप समझावे, स्वाध्याय करावे
चौमासा आपो रे या निवास करो रे
आशीष हमें दो, आशीष हमें दो

सागवाड़ा दि.- 13/06/2018

Acharya Kanaknandiji Gurudev

My name is Sanshi Jain. I am 12 years old. My family is blessing by Acharya kanaknandji gurudev. Kanaknandji Gurudev is very simple & kind. He is scientist. He is the sea of knowledge. He is son of "Sarsawati Maa". He never gets angry. He teaching scientist. He has written 303 books. In eyes of Acharya Kanaknandji all are same for him. He is puntual of time. He is loyal and he don't know what is hopper. He think that all are loyal. He is so kind.

JAI KANAKNANDIJI

By-Sanshi Madhok Jain
Chitri

क्रान्तिकारी श्रुत पञ्चमी (ज्ञान पर्व) सम्पन्न

भारत भूमि में श्रद्धा-भक्ति-सद्भावना-शालीनता-समर्पण का आदर्श स्थान वाग्वर अञ्चल के सांस्कृतिक कस्बा सागवाड़ा (सज्जनवाड़ा) में ग्रीष्मयोग प्रवासरत आध्यात्मिक क्रान्तिकारी स्वाध्याय तपस्वी वैज्ञानिक श्रमणाचार्य श्री कनकनन्दी गुरुवर संसघ सानिध्य में अनूठा क्रान्तिकारी ज्ञान पर्व श्रुत पञ्चमी सोल्लास सम्पन्न हुआ। सागवाड़ा में जिस महान् आध्यात्मिक जागरण हेतु आचार्य श्री ने स्वप्न देखा था, वह इस प्रवास में साकार हुआ जिसके फलस्वरूप यहाँ के आबाल-वृद्धि-वनिता व युवकों में अभूतपूर्व आनन्ददायी आत्मबोध से लेकर आगमज्ञान का सञ्चार हुआ। इस सन्दर्भ में विशेष उल्लेखनीय विषय यह है कि सागवाड़ा के भक्त-शिष्यगण अनेक वर्षों से आचार्य श्री से निवेदन कर रहे थे कि हे! गुरुदेव आप हमारे कमियों व दोषों से अवगत कराएँ जिससे यहाँ के जन-गण-मन में नवजागरण-नवाचार हो, जिससे हम व्यापक भाव धारी प्रगतिशील बन सकें। अतः दयालु गुरुदेव ने हिन्दी भाषा से लेकर आगमज्ञान सह आध्यात्मिक (मैं) बोध कराया जिसके परिणाम स्वरूप यहाँ के

धार्मिक जनों में भावाभिव्यक्ति-लेखन व काव्य सृजन के साथ ज्ञानदान-प्रशंसा-अनुमोदन आदि गुण व कलाओं का सूत्रपात हुआ।

उपरोक्त उपलब्धि से अत्यन्त अभिभूत समानजनों ने गुरुदेव को अपना प्रमुख गुरु निरूपित करते हुए भावना-भक्ति-समर्पण करते हुए आचार्य श्रीसंघ के आजीवन चातुर्मास-प्रवास आदि कराने का आत्मीय निवेदन किया। नन्दौड़ ग्राम से पधारे कलिकाल श्रेयांस श्री प्रवीणचन्द्रशाह परिवार द्वारा भी आचार्य श्रीसंघ को वर्ष 2018 के चातुर्मास-प्रवास आदि कराने का आत्मीय निवेदन किया। नन्दौड़ ग्राम से पधारे कलिकाल श्रेयांस श्री प्रवीणचन्द्रशाह परिवार द्वारा भी आचार्य श्री संघ को वर्ष 2018 के चातुर्मास के साथ-साथ आगामी वर्षों में सीमारहित चातुर्मास हेतु पुनर्निवेदन किया गया। श्री गुरुदेव ने ऊर्जावन्त श्राविका श्रीमती नन्दा देवी प्रवीणचन्द्रशाह की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए उन्हें अदम्य साहस श्रद्धा भक्ति की ऐतिहासिक नारी सिद्ध करते हुए सभा मध्य में अत्यन्त भावभीनी अनुमोदना की।

स्वैच्छिक ज्ञानदानियों द्वारा प्रकाशित व आचार्य श्री सृजित 4 ग्रन्थों का विमोचन हुआ। कृतियो के नाम क्रमशः 1. आत्मविश्वास से आत्मविकास गातीञ्जली धारा...78, ग्रन्थांक-291/2. आत्मविकास गीताञ्जली धारा...79, ग्रन्थांक-292/3. समाधितन्त्र गीताञ्जली धारा...80, ग्रन्थांक-293/ 4. स्वरूप सम्बोधन गीताञ्जली धारा...81, ग्रंन्थांक-294। इस अवसर पर आचार्य श्री ने ज्ञानदानी व स्वाध्यायी जनों को स्व-रचित साहित्य आदि देकर शुभाशीष प्रदान किया। भक्त शिष्यों द्वारा स्वचरित कविताओं का प्रस्तुति व स्व के अनुभवों की भावभिव्यक्ति की गई।

शुभभावना सह-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

''सबसे प्यारे हमारे *कनकनन्दी गुरुदेव''

- रचयिता-कुमार कुशाग्र वेड़ा

(चालः-नन्हा मुन्ना राही हूँ)

कनकनन्दी प्यारे है विश्व के उजियारे है।
बोलो मेरे संग जय जय जय जय गुरुदेव
जय जय गुरुदेव....

(1) आपकी निश्रा में मैं जब से आया....
मेरा ज्ञान अनुभव बढता गया....
आप से मैंने जो ज्ञान सीखा है
उसी ज्ञान से जीवन परिवर्तन हुआ
ज्ञान के साथ, निष्ठा के साथ हूँ
कनकनन्दी.....

(2) आपने जो ''मैं'' का बोध कराया...
शरीर व आत्मा का भेद समझाया
आपको श्रद्धा से मैं करता हूँ नमन
आपके साथ बीते ये मेरा जीवन
सत्य के साथ....ज्ञान के साथ हूँ
कनकनन्दी.....

(3) आप जैसे गुरुवर कहीं न देखे
आप जैसा गुरुकुल कभी न मिला
आप के संघ से गुणग्राहिता सीखी
आप जैसा बनूँ ऐसा आशीष दे दो
श्रद्धा के साथ, भक्ति के साथ हूँ
कनकनन्दी.....

सागवाड़ा, दि-18/06/2018, मध्याह्न 2.00

मेरे उपकारी कनक गुरु

- बा.ब्र. उमंग जैन

(चाल-नजर के सामने....)

हर क्षण पास में दिल में मेरे गुरु रहते हैं ऽऽ कनक गुरु...ऽऽ (स्थायी)
आत्मा क्या होता है पूछूँ जरा इनसे
मारा मारा फिरता हूँ मैं इस संसार में
मर ना जाऊँ कही कही आत्म बोध के बिना ऽऽऽ हर क्षण...(1)

घमण्ड आगे बढ़ने ना दे, सीखना ही रूक जाएँ
गुरुवर तुम ना होते तो, घमण्ड में ही जीता मैं
अब तुझे छोड़ कर कही और जाना नहीं ऽऽऽ हर क्षण...(2)

कनक गुरु के स्वाध्याय में, अनुभव मोती बिखरते
यह तो पूरे विश्व में, सूरज सा है चमकते
अब गाऊँ यूहीं 2 तेरे ही गुण ऽऽऽ हर क्षण...(3)

मुझे मार्ग बताया है, प्यारे कनक गुरु ने
मैं तो निकल पड़ा था, बिना किसी पते के
कनक गुरु ज्ञानी है उमंग के शिक्षा गुरु ऽऽऽ हर क्षण...(4)

हिन्दी सिखाई इन्होंने अनुस्वार का भी ज्ञान न था
इतनी लौकिक शिक्षा की फिर भी हिन्दी न आती थी
फिर भी घमण्ड भरा था अब नाश/(चूर) हो गया ऽऽऽ हर क्षण...(5)

मेरे उपकारी गुरु है, तपस्वी कनक गुरुवर
बहुत बडा उपकार किया मुझको संघ में ले कर
संघस्थ शिष्यों का भी मुझ पर उपकार बडा ऽऽऽ हर क्षण...(6)

विषयानुक्रमणिका

अ.सं.	विषय	पृ. सं.
1.	जहाँ समस्या वहाँ ही समाधान	02
2.	कनक गुरु पारस	04
3.	गुरूवर कनकनन्दी श्री मुझे सन्मति हेतु आशीर्वाद दो	05
4.	जिनवाणी माता की आरती	06
5.	मुझे आत्मज्ञान देने वाले आध्यात्मिक अनुभवी ज्ञानी कनकनन्दी गुरुवर	07
6.	आत्मतत्त्व ज्ञाता कनकनन्दी गुरुवर चातुर्मास हेतु निवेदन	08
7.	Acharya Kanaknandiji Gurudev	09
8.	क्रान्तिकारी श्रुत पंचमी (ज्ञान पर्व) सम्पन्न	09
9.	सबसे प्यारे हमारे 'कनकनन्दी गुरुवर'	11
10.	मेरे उपकारी कनकगुरु	12
11.	मैं हूँ निश्चय से शुद्ध-बुद्ध आनन्द	14

आत्मदर्शन गीताञ्जली

1.	निस्पृह स्वपर उद्धारक श्रमण	15
2.	निजशुद्धात्म श्रद्धान बिन समस्त धर्म कार्य व्यर्थ-संसार वर्द्धक	16
3.	आत्मन्! स्व शुद्धात्मा श्रद्धान बिना सभी धर्म संसार वर्धक	34
4.	मेरे वैश्विक आत्म चिन्तनः-मेरे द्रव्य-तत्त्व-पदार्थ में मैं ही प्रमुख	42
5.	'सत्यमेव जयते' नानृतम्...!?	50
6.	हिंसा का वैश्विक रूप	70
7.	आहारदाता करते चारों दान से मोक्ष दान तक	108
8.	मानव तू महामानव बन!	134
9.	कट्टर धार्मिक होते हैं संकीर्ण मानसिक	143
10.	अज्ञानी-मोही-लाभ से वंचित-अदर्शनी बनने के कारण	152
11.	भय की आत्मकथा	160
12.	भोजनदाता व रोगी के शोषक (भक्षक) अन्यायी देश इंडिया	175

13. अन्धेरा नाशक प्रकाशसम दुर्गुण नाशक सुगुण (सुगुणी) 191
14. स्वआत्मसाधना हेतु... 205
15. मुझ से कोई न छोटा न कोई महान् 206
17 मैं हूँ निश्चय से शुद्ध-बुद्ध-आनन्द 207

मैं हूँ निश्चय से शुद्ध-बुद्ध-आनन्द

- आचार्य कनकनन्दी

(चालः पायोजी मैंने...)

जाना है मैंने मैं हूँ निश्चय से शुद्ध जीव।/(आत्मधर्म)।
आगम अनुभव नय प्रमाण से मैं हूँ चैतन्य द्रव्य।। (स्थायी)
भले अनादि कर्म सम्बन्ध से बना हूँ अशुद्ध जीव।
तथापि मैं हूँ द्रव्यदृष्टि से शुद्ध-बुद्ध-आनन्द।।(1)
शुद्ध-बुद्ध व आनन्द हेतु ही कर रहा हूँ मैं धर्म।
तप-त्याग व ध्यान-अध्ययन समस्त श्रमण धर्म।।(2)
जिससे शुद्ध-बुद्ध-आनन्द मिले वह ही यथार्थ धर्म।
जिससे शुद्ध-बुद्ध-आनन्द न मिले वह ही पक्का अधर्म।।(3)
राग-द्वेष-मोह-काम-क्रोध-मद-ईर्ष्या-घृणा-तृष्णादि अशुद्ध।
परनिन्दा-अपमान-वैर-विरोध आदि कुभाव है अशुद्ध।।(4)
ख्याति-पूजा-लाभ-प्रसिद्धि-वर्चस्व-पुरस्कार-तिरस्कारादि अशुद्ध।
अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा-आकर्षण-विकर्षण द्वन्द्व अशुद्ध।(5)
अशुद्ध भाव से रहित ज्ञान होता है यथार्थ से बोध।
जितने अंश में होता है बोध उतने अंश होता है बुद्ध।।(6)
जितने अंश में होते शुद्ध-बुद्ध उतने अंश में आनन्द।
पूर्ण शुद्ध-बुद्ध से होता पूर्ण आनन्द यह परम आध्यात्म।।(7)
यह ही मेरा परम धर्म है यही मेरा स्व-धर्म।
यह ही मेा परम लक्ष्य है 'कनक' चाहें आत्मधर्म।।(8)

आत्म दर्शन गीताञ्जली

निस्पृह स्वपरउद्धारक श्रमण

- आचार्य कनकनन्दी

(चालः मधुबन खुशबू देता है...)

आचार्य/(पाठक) गुरुवर ज्ञानी है...ज्ञान-विज्ञान सिखाते हैं।
आत्मा को परमात्मा बनाने का...भेद-विज्ञान सिखाते हैं।। (ध्रुव)

स्वयं सीखते व सिखाते हैं...स्वयं चलकर दिखाते हैं...
स्व-पर प्रकाशी बनकर वे...तरण-तारण बनते हैं...2
राग-द्वेष-मोह वे त्यागते हैं...ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा छोड़ते हैं...(1)

ख्याति-पूजा-लाभ-वर्चस्व परे...निस्पृह-समता धरते/(साधते) हैं...
ज्ञान-ध्यान-तप वे करते हैं...आत्मविशुद्धि वे करते हैं...2
संकल्प-विकल्प त्यागते हैं...आत्मा में रमण करते हैं...(2)

आत्म प्रभावना ऐसी करते...धर्म प्रभावना भी स्वयं होती...
दबाव-प्रलोभन-ताम-झाम बिन...अच्छी भावना से होती है...
केवल वे परोपदेशी न बनते...उसी हेतु वे (बाह्य) आडम्बर न करते हैं (3)

याचना-भय-चन्दा-भीड़ से...राग-द्वेष-मोह न बढ़ाते हैं...
जो ऐसे करते हैं आडम्बर...आत्मपतन तो वे करते हैं...2
लोभी गुरु लालची चेला सम...नरक (जेल) में ठेलम ठेला करते हैं...(4)

आप तो वीतरागी निस्पृह सन्त...सूर्यसम प्रकाशी होते हो...
अहेतुक विश्व बन्धु आप हो...'कनक' आप को पूजते हैं...
आचार्य गुरुवर ज्ञानी है...ज्ञान-विज्ञान सिखाते हैं...(5)

सागवाड़ा दिनांक 24/6/2018 समय मध्याह्न 10:20

निजशुद्धात्म श्रद्धान बिन समस्त धर्म कार्य व्यर्थ-संसार वर्द्धक

-आचार्य कनकनन्दी

(चालः-छिप गया कोई रे...)

सम्यग्दृष्टि महान् है...आत्मश्रद्धानी होते,
स्व-पर भेद ज्ञान से...सम्यग्ज्ञानी होते।
श्रद्धा-प्रज्ञा सहित वे...सदाचारी होते,
सातिशय पुण्यशाली...मोक्षमार्गी होते।। (1)

देव-शास्त्र-गुरु भक्ति...सहित वे होते,
तत्त्वार्थ श्रद्धान युक्त...तत्त्वज्ञानी होते।
इसी से युक्त वे श्रावक-साधु बनते,
आत्मसाधना से वे अर्हन् सिद्ध बनते।। (2)

आत्मश्रद्धान से वे स्व को जीव द्रव्य मानते,
निश्चय से शुद्ध-बुद्ध-आनन्दमय मानते।
अनादि कर्म बन्ध से स्व को अशुद्ध मानते,
आत्मसाधना से शुद्ध/(सिद्ध) बनूँ यह लक्ष्य धरते।। (3)

आत्मश्रद्धान बिन सभी कार्य व्यर्थ,
आत्मश्रद्धान बिन सभी ज्ञान है कुज्ञान।
आत्मश्रद्धान बिन (सभी) आचरण मिथ्याचार,
मिथ्या श्रद्धा-ज्ञान आचरण संसार कारण।। *(4)*

बीज बिन यथा न होता है वृक्ष,
ईकाई बिन यथा शून्य का मूल्य शून्य।
आत्मा बिन यथा शरीर होता है शव,
आत्मश्रद्धान बिन सभी धर्म है अधर्म।। (5)

आत्मश्रद्धान बिन लक्ष्य न होता मोक्ष,
आत्मश्रद्धान बिन तप होता है कुतप।
आत्मश्रद्धान बिन त्याग होता भोग/(संसार, दुःख) हेतु,
धर्म कार्य होते सभी ख्याति-पूजा-वर्चस्व हेतु।। (6)

आत्मश्रद्धा-प्रज्ञा-चर्या बिन न होता मोक्षमार्ग,
रत्नत्रय बिन न होते राग-द्वेष-मोह क्षय।
समता-शान्ति-शुचिता न होती संभव,
निस्पृह-वीतरागता न होते संभव।। (7)

सातिशय पुण्य बन्ध भी न होता संभव,
संवर-निर्जरा-मोक्ष भी न होते संभव।
अतः आत्मश्रद्धान ही प्रथम/(प्रधान) करणीय,
सर्वज्ञ कथित सत्य यह 'कनक' को मान्य।। (8)

सागवाड़ा दिनांक 24/6/2018 मध्याह्न 01:45

संदर्भ-

मद का लक्षण और भेद

ज्ञानं पूजां कुलं जातिं, बलमृद्धिं तपो वपुः।
अष्टावाश्रित्य मानित्वं, स्मय माहुर्गतस्मयाः।।25 रत्नक.

अर्थः-ज्ञान, पूजा, कुल, जाति, बल, ऋद्धि, तप और शरीर इन आठों का आश्रय लेकर जो गर्व करता है, मद रहित पुरुष (सर्वज्ञ भगवान्) उसे मद कहते हैं।

मद से हानि

स्मयेन योऽन्यान्येति, धर्मस्थान गर्विताशयः।
सोऽत्येति धर्ममात्मीयं, न धर्मो धार्मिकैर्बिना।।26।।

अर्थ : जो घमण्डी घमण्ड से दूसरे रत्नत्रय के धारक धर्मात्मा जनों को अपमानित करता है, वह व्यक्ति अपने धर्म को ही अपमानित करता है, क्योंकि धर्मात्माओं के बिना धर्म नहीं होता है।

सम्पदा से क्या प्रयोजन

यदि पापनिरोधोऽन्य, संपदा किं प्रयोजनम्।
अर्थ पापास्त्रवोऽस्त्यन्य, संपदा किं प्रयोजनम्।।27।।

अर्थ : यदि पाप का निरोध हो गया है तो अन्य सम्पदा से क्या प्रयोजन है, यदि पाप का आस्त्रव है तो दूसरी सम्पदाओं से क्या प्रयोजन है।

सम्यग्दर्शन की विशेषता

सम्यग्दर्शन सम्पन्नमपि मातङ्ग देहजम्।
देवा देवं विदुर्भस्म गूढाङ् गारान्त रौजसम्।।28

अर्थ : जिनेन्द्र देव सम्यग्दर्शन सहित भंगी (जमादार) को भी राख के भीतर ढके हुए अंगार के भीतरी प्रकाश के समान पूज्य (श्रेष्ठ) कहते हैं।

धर्म और पाप का फल

श्वापि देवोऽपि देवः श्वा, जायते धर्मकिल्विषात्।
कापि नाम भवेदन्या, संपद्धर्माच्छरीरिणाम्।।29।।

अर्थ : धर्म के प्रभाव से कुत्ता भी देव हो जाता है और पाप के कारण देव भी कुत्ता हो जाता है धर्म के प्रभाव से जीवों को अन्य भी अनिर्वचनीय (अहमिन्द्र, मोक्षादि) सम्पदा प्राप्त होती है।

मोक्षमार्ग में सम्यग्दर्शन की प्रधानता

दर्शनं ज्ञानचारित्रात्साधिमान मुपाश्नुते।
दर्शनं कर्णधारं तन्मोक्षमार्गे प्रचक्षते।।31।।

अर्थ : सम्यग्ज्ञान और चारित्र की अपेक्षा सम्यग्दर्शन उत्कृष्टपने को प्राप्त होता है, इसलिये सम्यग्दर्शन को मोक्षमार्ग में खेवटिया के समान कहा गया है।

मोक्षमार्ग में सम्यग्दर्शन की प्रधानता का कारण

विद्यावृत्तस्य संभूति, स्थितिवृद्धि फलोदयाः।
न सन्त्यसति सम्यक्त्वे, बीजाभावे तरोरिव।।32।।

अर्थ : जिस तरह बीज के न होने पर वृक्ष की उत्पत्ति, स्थिति, वृद्धि और फल की सम्पत्ति नहीं बनती उसी प्रकार सम्यग्दर्शन के न होने पर सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र की उत्पत्ति, वृद्धि और फलों की सम्पत्ति नहीं बनती।

सम्यग्दर्शन का प्रभाव

गृहस्थो मोक्ष मार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान्।
अनगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहिनो मुनेः।।33।।

अर्थ : दर्शन मोह रहित सम्यग्दृष्टि गृहस्थ मोक्षमार्ग में स्थित है किन्तु दर्शन मोह सहित द्रव्यलिंगी मुनि मोक्षमार्ग में स्थित नहीं है इस कारण से द्रव्यलिंगी मुनि से दर्शन मोह रहित गृहस्थ श्रेष्ठ है।

सम्यग्दर्शन उत्कृष्ट क्यों है?

न सम्यक्त्वसमं किञ्चित्त्रैकाल्ये त्रिजगत्यपि।
श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्व, समं नान्यत्तनूभृत्ताम्।।34।।

अर्थ : तीनों कालों में और तीनों लोकों में जीवों को सम्यक्त्व के समान कोई दूसरा उपकारक नहीं है। और मिथ्यात्व के समान कोई दूसरा अनुपकारक (अहित रूप) नहीं है।

सम्यग्दृष्टि की उत्पत्ति का निषेध

सम्यग्दर्शन शुद्धा नारक तिर्यङ् नपुंसकस्त्रीत्वानि।
दुष्कुल विकृताल्पायु र्दरिद्रतां च व्रजन्ति नाप्यव्रतिकाः।।35।।

अर्थ : व्रत रहित भी शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीव नारकी, तिर्यंच, नपुंसक और स्त्रीपने को प्राप्त नहीं होते हैं और निन्द्य कुल, विकलांगता, अल्पायु और दरिद्रता को भी प्राप्त नहीं होते।

सम्यग्दृष्टि मरने पर कहाँ उत्पन्न होते हैं?

ओजस्तेजोविद्या वीर्य यशोवृद्धिविजय विभव सनाथाः।
महाकुला महार्था, मानवतिलका भवन्ति दर्शनपूताः।।36।।

अर्थ : शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीव, ओज, कांति, विद्या, उन्नति, विजय और सम्पत्ति के स्वामी, उच्चकुली और मनुष्यों में शिरोमणि होते हैं।

सम्यग्दृष्टि की विशेषता

अष्टगुण पुष्टितुष्टा, दृष्टि, विशिष्टाः प्रकृष्ट शोभाजुष्टाः।
अमराप्सरसां परिषदि, चिरंरमन्ते जिनेन्द्रभक्ताः स्वर्गे।।37।।

अर्थ : सम्यग्दृष्टि जीव जिनेन्द्र देव के भक्त होते हुए स्वर्ग में अष्ट ऋद्धियों की पूर्णता से संतुष्ट और विशेष सुन्दरता सहित होते हुए देवों तथा अप्सराओं की सभा में चिरकाल तक रमण करते हैं।

सम्यग्दृष्टि चक्रवर्ती होते हैं

नवनिधि सप्तद्वय रत्नाधीशाः सर्व भूमिपतयश्चक्रम।
वर्त्तयितुं प्रभवन्ति, स्पष्टदृशः क्षत्र मौलिशेखर चरणाः।।38।।

अर्थ : शुद्ध सम्यग्दृष्टि जीव अनेकानेक मुकुटबद्ध राजाओं से सेवनीय नवनिधि और चौदह रत्नों के स्वामी समस्त छः खण्डों के स्वामी होते हुए चक्ररत्न को प्रवर्ताने (चलाने) में समर्थ होते हैं।

सम्यग्दृष्टि ही तीर्थंकर होते हैं

अमरासुर नरपतिभिर्यमधरपतिभिश्च नूतपादाम्भोजाः।
दृष्टया सुनिश्चितार्था, वृषचक्रधरा भवन्ति लोकशरण्याः।।39।।

अर्थ : जिन्होंने अनेकान्त दृष्टि से तत्त्व (अर्थ) का भलीभाँति निश्चय किया है ऐसे सम्यग्दृष्टि जीव देवेन्द्र, धरणेन्द्र, चक्रवर्ती और गणधरों से पूजनीय हैं चरण कमल जिनके ऐसे तीनों लोकों के शरणभूत धर्मचक्र के धारक तीर्थंकर होते हैं।

सम्यग्दृष्टि जीव ही मोक्ष पद पाते हैं

शिव मजर मरुज मक्षय मव्याबाधं विशोक भय शङ्कम्।
काष्ठागत सुख विद्या विभवं विमलं भजन्ति दर्शनशरणाः।।40।।

अर्थ : सम्यग्दृष्टि जीव बुढ़ापा रहित, रोग रहित, क्षय रहित, बाधा रहित,

शोक, भय और शंका से रहित, अनंत सुख तथा अनंत ज्ञान सहित और द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म रहित मोक्ष को भी प्राप्त करते हैं।

सम्यग्दृष्टि की उत्पत्ति के स्थानों पर उपसंहार

देवेन्द्रचक्र महिमान ममेय मानम्, राजेन्द्र चक्र मवनीन्द्र शिरोर्चनीयम्।
धर्मेन्द्रचक्र मधरी कृतसर्वलोकम्, लब्ध्वा शिवं च जिनभक्तिरुपैति भव्यः।।41।।

अर्थ : जिनेन्द्र भगवान में भक्ति रखने वाला भव्य सम्यग्दृष्टि जीव अपरिमित इन्द्र के ऐश्वर्य को और राजाओं के द्वारा मस्तक से पूजनीय चक्रवर्ती के चक्ररत्न को और समस्त लोक को अपना उपासक बनाने वाले धर्मचक्र (तीर्थंकर पद) को प्राप्त कर मोक्ष को भी प्राप्त करता है।

इसे सामान्य जन समझ नहीं पायेंगे और पात्र विशेष को देखते रहेंगे। सो पात्र विशेषता को देखने से पहले अपने विशेष गुणों को भी देखना होगा और दान की महिमा को समझना पड़ेगा। तात्पर्य यह है कि मुनि त्यागी मुद्रा को देखकर आहारदान देना ही होगा।

अज्ञानी का तप

णवि जाणइ जिणसिद्धसरूवं तिविहेण तह णियप्पाणं।
जो तिव्वं कुणइ तवं सो हिंडइ दीहसंसारे।।124।।(रयणसार)

अर्थ : जो मुनि न तो अरहंत देव का स्वरूप जानता है और न भगवान् सिद्ध परमेष्ठि का स्वरूप जानता है। तथा वह परमात्मा अंतर आत्मा और बहिरात्मा इन तीन भेदों को भी नहीं जानता है। फिर तो निजात्मा को कैसे जान पायेगा? नहीं जानता है। ऐसे साधु तीव्र तपश्चरण करते हैं वे द्रव्यलिंगी है। उनका जन्म मरण नहीं छूटता है, वे संसार से मुक्त नहीं होते हैं बल्कि संसार में दीर्घ काल तक भ्रमण करते हैं।

भावार्थ : पंचपरमेष्ठी का स्वरूप और आत्मा के स्वरूप को जानना और श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है। जो पंचपरमेष्ठी और आत्मा का स्वरूप नहीं जानता उनको सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं होती है। सम्यग्दर्शन के बिना तपश्चरण संसार में दीर्घकाल तक भ्रमण कराता है।

निश्चय व्यवहार जाने बिना सब मिथ्या

णिच्छयववहारसरूवं जो रयणत्तय ण जाणइ सो।
जं कीरइ तं मिच्छारूवं सव्वं जिणुद्दिटठं।।125।।

अर्थ : जो भी हो निश्चय नय और व्यवहार नय रूप रत्नत्रय को नहीं जानता है, वह जो कुछ कितना भी तपश्चरण आदि करे तो भी वह सब मिथ्यारूप होता है, मोक्षमार्ग में कर्म निर्जरा रूप से काम में नहीं आता है। क्योंकि रत्नत्रय ही मोक्ष का कारण है। अगर निश्चय व्यवहार रूप से न जानकर तपस्या अनुष्ठान करता है तो मोक्ष मार्ग में प्रापक नहीं है। उसको मिथ्यातप कहना चाहिये और ऐसे मिथ्यातप को करने वाला मिथ्यात्वी समझना चाहिए। ऐसे श्री जिनेन्द्र देव ने कहा है।

भव बीज

किं जाणिऊण सयलं तच्चं किच्चा तवं च किं बहुलं।
सम्मविसोहि विहीणं णाणं तवं जाण भवबीयं।।126।।

अर्थ : आचार्य कहते हैं कि शुद्ध सम्यग्दर्शन के बिना समस्त तत्त्वों को जान लेने से भी क्या लाभ है? तथा बिना शुद्ध सम्यग्दर्शन घोर तपश्चरण करने से भी क्या लाभ है? क्योंकि शुद्ध सम्यग्दर्शन के बिना ज्ञाप तप दोनों ही संसार के कारण समझना चाहिये।

भावार्थ : समस्त तत्वों को जानकर अपना मुक्ति का प्रयोजन सिद्ध नहीं हुआ तथा विशेष रूप से बहुत ही तपश्चरण करने पर कार्य सिद्धि नहीं हुई लेकिन ये ज्ञान और तप संसार को बढ़ाने वाला बीज वृक्ष के समान हुआ। अर्थात् मूल में विशुद्ध सम्यग्दर्शन ही ज्ञान तप चारित्र के लिए मूल कारण है। इसे जानकर प्रथम पक्के श्रद्धानी बने उसके साथ-साथ ज्ञान तप चारित्र से मोक्ष सिद्धि होती है।

संसार की वृद्धि

वय गुण सील परिसहजयं च चरियं च तवं सडावसयं।
ज्झाणझयणं सव्वं सम्मविणा जाण भववीयं।।127।।

अर्थ : मुनिजन तथा श्रावक देशव्रती भी जब तक सम्यग्दर्शन के अभाव में

व्रत पालन करना, गुप्ति समिति पालन करना, शीलव्रत पालन करना, परीषहों को जीतने का प्रयास-श्रम करना, चारित्र का पालन करना, घोर तपश्चरण करना, छह आवश्यकों का पालन करना, ध्यान अध्ययन करना ये सब संसार के कारणभूत बीज ही है ऐसा समझना।

ये सब क्रियायें करना तो अत्यन्त आवश्यक है, इनके करने से कर्मों की निर्जरा होती है, मुक्ति फल मिलता है परन्तु वह सम्यग्दर्शन सहित हो, इसे हमें जानकर श्रद्धान के साथ सब क्रियायें कार्यकारी बनते हैं। यही इसका तात्पर्य हैं।

परलोक कैसे सुधरेगा?

खाई पूया लाहं सक्काराइं किमिच्छसे जोई।
इच्छइ जइ परलोंय तेहिं किं तव परलोयं।।128।।

अर्थ : आचार्य बड़े प्रेम से कहते हैं कि-हे वत्स योगी! हे मुनिराज! यदि तू अपने परलोक को सुधारने की इच्छा करता है तो फिर अपनी ख्याति-प्रसिद्धि, सम्मान, पूजा, लाभ आदि इनकी क्यों इच्छा करता है? मान आदर सत्कार इनकी इच्छा रखने से अपना क्या लाभ है? वास्तव में हानि है।

जो परलोक-मोक्षस्थान को पहुँचना है, तो ये सभी लाभकारी नहीं होकर हानि करने वाले हैं। लोक विरूद्ध और निश्चय मोक्षमार्ग और मोक्ष के विरूद्ध है। इससे-हे मुनि! इन बातों से तेरा परलोक सुधार कभी नहीं हो सकेगा। मुक्ति स्थान अभी बहुत दूर है। और तू यहीं पर अटक रहा है। सावधान होकर आगे गमन कर। इससे अधिक क्या कहे।

भावार्थ: परलोक में आत्मा को सुख की प्राप्ति होना, मोक्ष की प्राप्ति होना, यह अपनी आत्मा का सुधार कर लेना इसे ही परलोक का सुधारना कहते हैं।

मोक्ष की प्राप्ति आदर सत्कार ख्याति लाभ से, पूजा प्रशंसा से नहीं हो सकती है। इसलिए इनकी इच्छा या भाव करना मोक्ष के लिए निरर्थक है। रत्नत्रय की प्राप्ति से मोक्ष की प्राप्ति होती है। हे मुनिराज! तू रत्नत्रय का पालन कर। यही जिनेन्द्र भगवान् का उपदेश और आचार्यों का कहना है।

अपनी शुद्ध आत्मा में रूचि

कम्माइ विहाव सहावगुणं जो भाविऊण भावेण।

णियसुद्धप्पा रूच्चइ तस्स य णियमेण होइ णिव्वाणं।।129।।

अर्थ : जो मुनिराज कर्म के उदय से होने वाले आत्मा के वैभाविक गुणों का (राग-द्वेष मोह मद मत्सर कषाय आदि भावों का) चिंतवन करता है, तथा उन कर्मों के नाश होने का भी प्रयास करता है, पुरुषार्थ करता है तब उस चिंतवन और पुरुषार्थ से अपने स्वाभाविक आत्मा के गुणों का चिंतवन होता है, और अपने निज आत्मा के उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव आदि अपने आत्मा में स्पष्ट रूप से प्रकट होते हैं। जिसको अपने शुद्ध आत्मा का प्रेम होता है वह इन दोनों के यथार्थ स्वरूप का चिंतवन करते हैं। जो अपने शुद्ध आत्मा का श्रद्धान करता है उसको अवश्य ही मोक्ष की प्राप्ति होती है।

भावार्थ : जो भव्यात्मा मुनिराज इन सब भावनाओं को यशरूप रूचिपूर्वक ध्याता है, वह मुनिराज-योगी नियम से निर्वाण सुख को प्राप्त होता है। इसमें कोई संदेह नहीं है।

कर्म रहित होना

मूलुत्तरुत्तर दव्वादो भावकम्मदो मुक्को।

आसव बंधण संवर णिज्जर जाणेइ किं बहुणा।।130।।

अर्थ : जो भव्य साधु उत्तरोत्तर द्रव्य कर्मों और भाव कर्मों से रहित होता है तथा आस्रव प्रकृति बंध, स्थिति बंध, अनुभाग बंध और प्रदेश बंध को रोकने रूप संवर निर्जरा का कार्य बहुत प्रकार से जानता है। द्रव्य और भाव कर्म का क्षय कर देता है वह योगी मोक्ष को पाता है।

बंध व मुक्ति के भाव

विसयविरत्तो मुंचइ विसयासत्तो ण मुंचए जोई।

बहिरंतरपरमप्पाभेयं जाणेहि किं बहुणा।।131।।

अर्थ : जो मुनि इन्द्रियों के विषय वासनाओं से विरक्त है वह इस द्रव्यकर्म और भाव कर्म से छूट जाता है और संसार से मुक्त होकर परमात्मा बनता है। तथा

जो मुनि विषयासक्त है वह इन कर्मों से कभी नहीं छूट सकता है। इसलिए हे मुनि! बहुत कहने से क्या लाभ है। जो आत्मा है वह-बहिरात्मा, अंतरात्मा और परमात्मा के भेद से तीन प्रकार का है। इसका प्रथम स्वरूप जान लेना चाहिए।

भावार्थ : हे योगीराज! तुझे प्रथम विषयवासनाओं से विरक्त होना है, अर्थात् त्याग करना चाहिये। जो विषय वासनाओं का त्याग करता है वह परमात्मा बनता है। और जो विषयों में आसक्त रहता है वह संसार से कभी मुक्त नहीं होता है वह बहिरात्मा है। तथा जो आत्मा का विचार करता वह अंतरात्मा है। इस प्रकार तीन भेदों को जानकर तू तेरे आत्मा को परमात्मा बना ले। इससे अधिक क्या लाभ है।

बहिरात्मा का लक्षण

णिय अप्प णाण ज्झाण ज्झयण सुहामियरसायणपाणं।

मोत्तूणक्खाणसुहं जो भुंजइ सो हु बहिरप्पा।।132।।

अर्थ : जो मुनि अपने निज आत्मा को ज्ञान ध्यान अध्ययन से उत्पन्न होने वाला सुखामृत का पान करता है वह सुखरूप अमृत केवल अपने आत्मा से उत्पन्न होता है। आत्मा से उत्पन्न होने वाला वह सुखामृत एक अपूर्व रसायन के समान है। इस आत्मजन्य सुखामृत रूपी रसायन को पीने वाला या अनुभव करने वाला परमात्मरूप कहलाता है। तथा इससे विपरीत कर्मबंधयुक्त संसार को बढ़ाने वाला जो इन्द्रियजन्य सुखों का अनुभव करता है, इन्द्रिय वासनाओं के भोगों में लीन रहता है वह दुःख का अनुभव करता है उसे बहिरात्मा समझना चाहिये। बहिरात्मा ही है।

जागिए, उठिए और चल पड़िए-जीवन विज्ञान के इस आधार सूत्र को समझना होगा। जानना होगा, हमारी हक़ीक़त क्या है। हक़ीक़त में आया भूकम्प बनावटी महल की तरह हमारे स्व को धराशायी कर देगा। फूल का खिलना, महकना और बिखर जाना भी तो हक़ीक़त है।

आओ, खुद को खोजें....(अखिलेश आर्येन्दु)

कभी खुद से पूछा है - आप क्या हैं? यक़ीनन, खुद को उच्च, विराट और विजेता कहा गया, लेकिन हक़ीक़त? हमने यदि स्व की तलाश न की तो अस्तित्व खो

जाएगा, चुक जाएगा और फिर ख़ुद का कुछ बचेगा ही नहीं। सब कुछ जानकर भी कुछ नहीं जानना और कुछ न जानकर सब जानने का दावा करना - ये और कुछ नहीं, आत्महीनता और आत्मदीनता के कुचक्र में फँस जाना है। एक पल को तो सोचें - जीवन क्या है? सिर्फ अच्छा खाना, अच्छा पहनना, अच्छे मकान में रहना और सुख-सुविधाओं का गुलाम होकर जिंदगी गुजार देना?

नहीं, जीवन जीना कला है, जिसे खुद सीखना पड़ता है। दूसरों के जीवन जीने का ढंग अपनाकर जिंदगी काटी जा सकती है, लेकिन सजाई नहीं जा सकती। जीवन सजाने के लिए मूल्य, सुकृत्य और सद्-व्यवहार के गुणन-फल हल करने पड़ते हैं। जिसने हल कर लिए, वह सांसारिक कसौटियों पर हार कर जीत गया और जो हल नहीं कर पाया, वह सब कुछ भौतिक हासिल कर भी हार गया।

आत्महीनता में बढ़कर कोई दीनता नहीं। ऐसा होना उस भिक्षुक से भी गया बीता हो जाना है, जो भीख माँगकर भी स्वयं को सबसे बड़ा स्वाभिमानी मानता है। कभी नगर के सबसे बड़े खंडहर पर नज़र डालिए। खंडहर में तब्दील होने से पहले वह भी आलीशान भवन के रूप में शहर के बीचोंबीच सीना तानकर खड़ा होकर भव्यता का प्रदर्शन करता था। सामने की झोपड़ी को देखकर उसकी दीनता का मजाक उड़ाता था। एक दिन शहर में भूकंप आया। झोपड़ी का कुछ नुकसान नहीं हुआ और महल सबसे पहले खंडहर हो गया।

चुके हुए आदमी और खंडहर में कोई अंतर नहीं है। जैसे वह अंदर से मजबूत नहीं था, इसलिए ढह गया, इसी तरह बाहरी चमक-दमक, सुख-सुविधा और अहंकार में डूबा मनुष्य जीव संघर्ष में टिक नहीं पाता। जब तक बोध नहीं, बातें ही बातें रहती हैं और जब जीवन के व्यर्थ होने का एहसास होता है, फिर पछताने को भी कुछ नहीं बचता। अंदर की कलात्मकता और भावात्मकता जीवंत रहती है तो अंतर्मन जीवित रहता है, ऐसा न होने पर प्लास्टिक मन और जीवन ही शेष रहता है। अंदर से खोखला होने के बाहर के रंग-रोगन से दूसरों को तो भ्रमित किया जा सकता है, लेकिन खुद को स्वयं से छिपा पाना असंभव ही होता है।

सच के आनन्द और झूठ के सुख की तुलना करके देखिए। एक जीवन बिंब के साथ सत्य-आनंद की अनुभूति ही बताती है कि हम कितने पूर्ण हैं। जब पूर्णता का

बोध होने लगे तो समझ लेना चाहिए, अब हम दूसरों को भी आधार दे सकते हैं। इससे उलट, झूठ के काल्पनिक सुख में ही स्वयं को डुबो दिया तो तय है कि स्व के नष्ट होने की घड़ी आ गई। 'स्व' को खोजने के लिए जरूरी है कि खुद पर खुलकर हँसने की हिम्मत पैदा कर ली जाए। ऐसा होने पर झूठ का झूठ सुख बालू की भीत की तरह एक दिन ढह जाएगा।

हम क्यों स्वयं से दूर हैं....

एक बार शहर में रुचिकर और लोकप्रिय नाटक का भव्य मंचन होना, प्रस्तावित था। एक बड़े महंत का मन भी ललचाया कि नाटक देखने का अवसर मिले, लेकिन चिंता थी कि अगर वह मंचन में बतौर दर्शक शामिल हुआ तो लोग क्या कहेंगे? एक तरफ नाटक देखने का लोभ, दूसरी तरफ 'कथित सम्मान' की चिंता - उसने नाट्य मंचन संयोजक से समाधान तलाशने को कहा। संयोजक ने पत्र पढ़ा, मुस्कुराया और जवाब लिखा-आप जैसे महंतों के लिए थिएटर के पिछले द्वार से हमने प्रवेश का प्रबंध किया है। वहाँ से आएँ और उसी रास्ते में वापस चले जाएँ। आप नाटक का आनंद आराम से उठा सकेंगे और कोई अन्य आपको देख नहीं सकेगा, लेकिन परमात्मा की अनंत आँखें आप को न देख सकें, इसकी गारंटी मैं कदापि नहीं ले सकता हूँ।

ऐसी ही गति तब हमारी होती है, जब हम वह सब कुछ हासिल कर लेना चाहते हैं जो त्याज्य है, लेकिन लालच पर काबू नहीं कर पाते, उस पर भी विडंबना ये कि उसे स्वीकारना नहीं चाहते। बड़े पद-सम्मान के साथ हम स्वयं को इतना बड़ा समझने लगते हैं कि खुद की वास्तविकताओं से ही दूर हो जाते हैं। जिन्दगी के थिएटर में जिस नाटक का मंचन हम कर रहे होते हैं, उसकी आत्मा को नहीं पहचान पाते। एक किरदार के रूप में हम जो भी काम करते हैं, उसमें इतने आबद्ध हो जाते हैं कि उससे फिर अलग नहीं हो पाते। इस बात को स्वीकार लेते तो शायद फिर कुछ निष्कर्ष निकल पाते।

इस पर कभी ध्यान दीजिए कि जिन प्रवृत्तियों, मान्यताओं और धारणाओं को हम सबसे श्रेष्ठ समझते हैं, वे कितनी उच्च और सर्वग्राह्य हैं? खुद की हकीकत से इतनी दूरियाँ हैं तो उन्हें कैसे भर सकेंगे? जिन आँखों पर हम भरोसा करते हैं, वे

आँखें स्वयं को कभी नहीं देख पातीं। और फिर जो स्वयं को न देख पाएँ, वे दूसरों को कैसे वास्तविक रूप में देख सकती है।

यही हाल मन की आँखों का भी है। मन की आँखों को पहले तो हम खोल ही नहीं पाते और यदि खोल भी लेते हैं तो धारणाओं, मान्यताओं, आग्रहों और दुराग्रहों से इतने अधिक जकड़ रहते हैं कि अपनी वास्तविकताओं को फिर भी नहीं देखना चाहते या ऐसा होना मुमकिन नहीं रहता।

यह जीवन दर्शन की एक सच्चाई है। इसे समझना होगा। मन के विज्ञान का जीवन के विज्ञान से जब हम संतुलन बिठा लेंगे तो स्वयं को जगाने के लिए चल पड़िए। जो स्वयं में कभी देखा नहीं, उसे देखने के लिए मन की आँखों को खोलकर देखिए। आपका जीवन विज्ञान एक खोजकर्त्ता के रूप में मार्गदर्शन करता मिलेगा। फूल खिला, फूल महका और फूल कुछ दिन में मुरझाकर अपने स्व में विलीन हो गया, लेकिन उसका खिलना, महकना और बिखर जाना उसकी वास्तविकता का ही रूप था। उसके खिलने, महकने और बिखरने में कहीं अवास्तविकता नहीं थी। सब कुछ सहज हुआ। यही सहजता तो स्वयं को स्वयं से जोड़ने का आधार है। वास्तविकता को जितनी सहजता के साथ स्वीकार करते जाएंगे, जिन्दगी उतनी ही सहज, सच और आनंदधाम बनती जाएगी।

विश्वास इंसान की जरूरत है। वह अभागा है, जो किसी चीज में यकीन नहीं करता है।- विक्टर ह्यूगो

खुद में विश्वास पहला कदम है...

यह अनिवार्य पहला कदम है। यह एक ऐसी स्थिति है, जो यह कहने से शुरू होती है हालांकि मैं यह नहीं जानता के भविष्य में सटीकता से क्या आने वाला है, लेकिन मैं जानता हूँ कि यह सही होगा।

यह सुनने में बहुत आसान लगता है, लेकिन करने में बहुत मुश्किल हो सकता है। आपकी आँखों और कानों का प्रमाण इसके विपरीत हो सकता है। निश्चित रूप से, जब मैं बस अड्डों पर सो रहा था, तब मैं अपने आस-पास ऐसे लोगों को देखता था, जो कहीं जा रहे थे - परिवार और जोड़े एक-दूसरे का हाथ थामे थे,

व्यवसायी और विद्यार्थी अपना व्यस्त जीवन जी रहे थे, जो रोचक व संतुष्टिदायक दिखता था, जबकि मैं अपना पेट भरने और हर रात सोने की जगह खोजने के लिए जूझ रहा था। मैं जिस संसार में रहता था, वह संभावना और आशा का संसार नहीं था; यह तो निराशाजनक और जिंदा रहने का दैनिक संघर्ष नज़र आता था। सिसिफ़स की यूनानी दंतकथा एक ऐसे इंसान की कहानी है, जिसे शाप दिया गया कि वह नरक में हर दिन एक भारी चट्टान को पहाड़ के ऊपर लुढ़काकर ले जाएगा, जो वहाँ से एक बार फिर तलहटी में पहुँच जाएगी, जिससे वह निरर्थक श्रम के अंतहीन चक्र में फँस गया। मेरे आस-पास का माहौल भी वैसा ही महसूस हो रहा था। मैं उसी तरह के संसार में रह रहा था।

लेकिन मैं जहाँ था, वहाँ में पढ़ सकता था और यह पढ़ना था, जिसने मेरे दिमाग़ की बत्ती जला दी। इससे मैंने वह छलाँग लगाई, जो मुझे इन्द्रियों से दिखने वाले संसार से कल्पना के संसार में ले गई। इसकी बदौलत मुझे ऐसे विचार मिले, जिन्होंने मुझे प्रेरित किया। इसने मेरी सृजनात्मक प्रेरणा को पोषण दिया। मैं लिखता रहा और खुद पर काम करता रहा, जब तक कि मेरा स्वप्न असली संसार में आकार नहीं लेने लगा। मैं बेघरबारी और गरीबी की सीमाओं के आगे देख सकता था और जानता था कि मुझमें वह माद्दा था, जो इस जगह से बाहर निकलकर मनचाही जगह तक पहुँचने के लिए ज़रूरी था।

क्या विश्वास वास्तविक है? निश्चित रूप से, यह आपके लिए कारगर रहा, लेकिन क्या मैं अपने जीवन में इसका इस्तेमाल कर सकता हूँ?

आप पहले पहल शंका महसूस कर सकते हैं और यह स्वाभाविक है। विश्वास की शक्ति कोई ऐसी चीज नहीं है, जिसे नापा या ''देखा'' जा सके। आपका तार्किक मन और सोचने का यह तरीका जिसे हमारे शैक्षणिक तंत्र ने प्रोत्साहित किया है, प्रमाण माँगता है, लेकिन आप अपने विश्वास को जो इकलौता प्रमाण दे सकते हैं, वह अंतिम परिणाम है। वहाँ पहुँचने की प्रक्रिया के दौरान बहुत कम प्रमाण या ठोस परिणाम हो सकते है। मेरी खुद की सफलता इस बात का ठोस प्रमाण है कि आप ग़रीबी से अमीरी तक वाक़ई पहुँच सकते हैं और ऐसी कई अन्य कहानियाँ हैं, जिन्हें आप इस पुस्तक में पढ़ेंगे। उनसे प्रेरणा लें। आप अपने बलबूत्ते पर अपने लक्ष्य

हासिल कर सकते हैं - बशर्ते आप विश्वास करें।

आस्था उसमें विश्वास करने में निहित होती है, जब यह विश्वास करने की तर्क की शक्ति के परे हो। - वोल्तेयर

तर्कसंगत और विवेकपूर्ण सोच अकेले आपके विकल्पों को सीमित कर देगी, लेकिन खुद में विश्वास खुद के ज्ञान के साथ शुरू होता है। बेघर रहने के बावजूद मैं जानता था कि मैं संप्रेषण में बेहतरीन था और मुझमें जोश था - न सिर्फ़ लिखने के लिए, बल्कि अपने लेखन से लोगों की मदद करने के लिए भी। मैं जानता था कि मेरी योजनाओं से सकारात्मक और मददगार परिणाम मिलेंगे। अपनी खुद की योग्यताओं और जोश का यह ज्ञान ही था, जिसने मुझे संचालित किया और विश्वास दिया। मैं जानता था कि अगर मैं लगन से जुटा रहा, तो मेरी प्रतिभाओं को अंततः पहचाना जाएगा।

आशावाद यह विश्वास है, जो उपलब्धि की ओर ले जाता है। आशा और विश्वास के बिना कुछ नहीं किया जा सकता। - हेलेन केलर

हेलेन केलर का जन्म 1880 में अलबेमा में हुआ था। जब वे 19 महीने की थी, तो वे एक ऐसे रोग का शिकार हुई, जिसे आज कई लोग स्कालेट फ़ीवर या मेनिंजाइटिस मानते हैं। चाहे रोग जो भी हो, उसकी वजह से उनकी आँखों की रोशनी और सुनने की शक्ति चली गई। वह भी एक ऐसे युग में, जब बधिरों और दृष्टिहीनों को शिक्षित करने के साधन ज़्यादा अच्छी तरह जाने या समझे नहीं जाते थे।

सौभाग्य से, उनकी माँ ने बधिरों और दृष्टिहीनों को प्रशिक्षण देने की विधियों के बारे में पढ़ रखा था। हेलेन के माता-पिता ने इस बारे में कुछ लोगों से संपर्क किया। आख़िरकार, वे एक प्रतिभाशाली युवा महिला से मिले, जिनका नाम एन सुलिवन था, जिनकी खुद की आँखें क्षीण थीं। वे हेलेन के जीवन में आई, पहले गवर्नेंस के तौर पर और फिर साथी के रूप में। उनका यह संबंध 49 साल तक चला और इसके ज़रिये हेलेन ने सीखा कि संवाद कैसे किया जाए, एक प्रभावी लेखक कैसे बना जाए और राजनीतिक दृष्टि से सक्रिय कैसे हुआ जाए।

हेलेन की जिन्दगी में इतनी सारी चुनौतियाँ थीं कि उनके पास खुद में विश्वास करने के सिवा कोई दूसरा विकल्प नहीं था। उन्होंने अपने हाथ में स्पेलिंग लिखवाकर शब्द सीखे। बाद में उन्होंने ब्रेल सीखी और हाथों से होठों की भाषा पढ़ना सीखा। उन्होंने यह भी सीख लिया कि कैसे बोलना है। उन्होंने इस बारे में जितना ज़्यादा सीखा कि ज़्यादा व्यापक संसार के साथ संवाद कैसे करें, खुद में उनका विश्वास और ज्ञान उतना ही ज़्यादा शक्तिशाली हुआ और इसके बाद उनकी महत्त्वाकांक्षाओं की कोई सीमा नहीं थी। वे बी.ए. की डिग्री लेने वाली पहली बधिर और दृष्टिहीन महिला बनीं। उनकी शिक्षिका एन सुलिवन ने उन्हें जो सबसे बड़ा उपहार दिया था, वह संप्रेषण के जरिये संसार के द्वार खोलना ताकि वे अपनी चुनौतियों के बावजूद संसार में सफल होने की योग्यता में विश्वास रखें।

यही महान शिक्षक की प्रतिभा होती है - विद्यार्थियों की क्षमता के बारे में उन्हें जाग्रत करने की योग्यता। स्वयं में विश्वास खुद के तथा अपनी योग्यताओं के ज्ञान पर आधारित होता है। अक्सर कोई शिक्षक या दूसरा मार्गदर्शक ही होता है, जो इस तरह की आत्म-जागरूकता को चिंगारी दे सकता है या बढ़ावा दे सकता है। यह काम किसी बेहतरीन पुस्तक को पढ़ने या प्रेरक वक्ता को सुनने से भी हो सकता है। खुद के और अपनी क्षमता के बारे में ज़्यादा जानकारी हासिल करने के तरीक़े तलाशें - अपनी जागरूकता में लगाया गया समय हमेशा सार्थक होता है।

आत्म-ज्ञान से उत्पन्न होने वाला विश्वास आपको शुरुआत से आगे ले जाएगा। यह आपको अनुमति देगा कि आप कोई अवसर देखें और कहें, हाँ, मैं इसकी कोशिश कर सकता हूँ, बजाय इसके कि वे मुझे कभी नहीं लेंगे! लेकिन मान लें, जहाँ आप काम करते हैं, उस कंपनी में एक पद ख़ाली हो जाता है। यह कंपनी की सीढ़ी पर एक पायदान ऊपर का पद है। आप जानते हैं कि आपके पास आवश्यक अनुभव और योग्यता है, इसलिए आप आवेदन करते हैं और इंटरव्यू में जाते हैं, लेकिन फिर...आपको वह पद नहीं मिलता है। क्या आप इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आपका विश्वास गलत था? आप शायद ऑफ़िस की राजनीति पर इसका दोष मढ़ते हैं या फिर अपने नियंत्रण से बाहर के कारणों पर? क्या आप खुद से कहते हैं, जब हर चीज़ मेरे खिलाफ़ है, तो दोबारा कोशिश करने की झंझट क्यों उठाना?

यह डर बोल रहा है। जब असफलता दरवाज़ा खटखटाती है और सफलता बहुत दूर नज़र आती है, तभी खुद में विश्वास सबसे महत्त्वपूर्ण बन जाता है। भविष्य के स्वप्न को थामे रखना और वहाँ पहुँचने की योग्यता में विश्वास रखना कई बार एकमात्र चीज़ होती है, जो आपको वहाँ तक ले जाएगी।

''खुद में विश्वास और अनुशासन रखना तब आसान होता है, जब आप विजेता हों, जब आप नंबर वन हों। विश्वास और अनुशासन तो तब मायने रखता है, जब आप अभी तक विजेता न बन पाए हों।''

– विन्स लॉम्बार्डी

विन्स लॉम्बार्डी का फ़ोर्डहैम युनिवर्सिटी में विद्यार्थी खिलाड़ी के रूप में सफल करियर रहा। ये आक्रमण पंक्ति में बतौर राइट गार्ड खेलते थे, जिसे ''सेवन ब्लॉक्स ऑफ़ ग्रेनाइट'' कहा जाता था। इसके बाद 1937 में विन्स लॉम्बार्डी ने अपनी कॉलेज की पढ़ाई पूरी की, जो महामंदी का चरम उत्कर्ष था। किसी के लिए भी बहुत कम अवसर उपलब्ध थे। नतीजा यह हुआ कि वे कई नौकरियों में संघर्ष करते रहे। उन्होंने दोबारा कॉलेज जाने की भी कोशिश की, लेकिन तभी 1939 में उन्हें एक हाई स्कूल की फुटबॉल टीम में असिस्टेंट कोच की नौकरी मिल गई। उन्हें कुछ कक्षाओं को भी पढ़ाना था और इस नौकरी में 1,000 डॉलर प्रतिवर्ष से कम तनख्वाह मिलती थी, लेकिन यह किसी भी पेशेवर खेल के सबसे मशहूर करियरों में से एक की शुरुआत थी।

कोच के रूप में उनका रिकॉर्ड किंवदंती है, मगर दिलचस्प बात यह है कि उन्होंने अपने करियर की एनएफ़एल वाली पारी 1954 तक शुरू नहीं की थी। यानी कोचिंग शुरू करने के 15 साल बाद तक। वे अपने खिलाड़ियों पर कठोर रहते थे, लेकिन उन्होंने ऐसे परिणाम दिए, जिन्होंने उन्हें हॉल ऑफ़ फ़ेम में पहुँचा दिया और उनका नाम सुपर बाउल ट्रॉफ़ी पर आ गया। उनके पूरे एनएफ़एल करियर में एक भी सीज़न ऐसा नहीं रहा, जब वे पराजित हुए हों, हालाँकि इस दौरान वे न्यू यॉर्क जाएंट्स से ग्रीन वे पैकर्स और आख़िरकार वाशिंगटन रेडस्किन्स में गए और यह 1969 तक चला। खुद में उनका विश्वास इतना ज्यादा था कि यह संक्रामक था। वे

अपने आस-पास के लोगों और खिलाड़ियों को उतना सफल होने के लिए प्रेरित करते थे, जितना वे कर सकते थे। उनकी जीवन गाथा पर एक सफल ब्रॉडवे शो भी बना।

सतत परिणाम सतत विश्वास का प्रमाण है....

गौर करें कि कोच लॉम्बार्डी के उद्धृत शब्द यहाँ खत्म होते हैं...जब आप अभी तक विजेता न बन पाए हों। उन्होंने यह नहीं कहा, जो ज़्यादा तार्किक लग सकता है - जब आप विजेता न हों, सिर्फ़ इस कारण क्योंकि उन्होंने उस विचार को कभी अपने मन में आने ही नहीं दिया। उन्होंने कोई वैकल्पिक योजना नहीं बनाई कि अगर लंबे समय में वे विजेता के रूप में न उभर पाएँगे, तो क्या करेंगे। असफलता उनकी योजनाओं या उनके सपने के किसी हिस्से में शामिल नहीं थी - और यह उन्हें कभी मिली भी नहीं। अपनी योग्यताओं और अथक परिश्रम से विकसित कोचिंग तंत्र में अटल विश्वास के कारण यह एक खुद पूरी होने वाली भविष्यवाणी बन गई और एनएफ़एल में बाक़ी लोगों की ईर्ष्या का सबब बन गई। विश्वास होने का यही मतलब है : आपके कार्य आपके विचारों का अनुसरण एक ऐसे लक्ष्य की ओर करते हैं, जो अवश्यंभावी बन जाता है।

इसका निश्चित रूप से यह अर्थ कदापि नहीं है कि आप सावधानी छोड़ देते हैं और जो भी सनक उस पल आप पर हावी होती है, उसे ''विश्वास'' का नाम देते हुए उस दिशा में चले जाते हैं। यह कोई जादुई शब्द नहीं है, जिससे चीज़ें आपके पक्ष में हो जाएँगी। दरअसल, सच्चा विश्वास और जोश ही आपको सकारात्मक कर्म की ओर ले जाता है।

कर्म के बिना विश्वास बिना पंख वाली चिड़िया की तरह है; हालांकि यह धरती पर अपने साथियों के साथ फुदक सकती है, लेकिन यह उनके साथ कभी आसमान तक नहीं उड़ पाएगी। – फ्रांसिस ब्यूमॉन्ट

मैं बारंबार इस बात पर जोर दूँगा कि विश्वास के बाद कर्म करना जरूरी होता है। आप जो कर्म करते है, वह निरंतर होना चाहिए, यानी सभी कार्य आपके लक्ष्यों की ओर केंन्द्रित होने चाहिए। विन्स लॉम्बार्डी की तरह बनें और असफलता को

अपने समीकरण या योजना में आने ही न दें। निश्चित रूप से, राह में झटके लग सकते हैं और आप हर मोड़ पर ज़बर्दस्त सफलता की उम्मीद नहीं कर सकते। लेकिन जब आपको विश्वास होता है, तो आपके पास अपनी पद्धतियों को आज़माते रहने और नवाचार करने का स्टैमिना भी होगा, जब तक कि आप विजेता फ़ॉर्मूला नहीं खोज लेते।

विश्वास के बिना इंसान कुछ नहीं कर सकता; इसके साथ सारी चीज़ें संभव हैं। -सर विलियम ऑसलर

स्वयं में विश्वास का मतलब है कि हमेशा उम्मीद है...

मेरे लिए, विश्वास यह धारणा है, जो कहती है कि आशा है। कोई सकारात्मक परिणाम उपलब्ध है। यह कहती है कि मैं सुरक्षित हूँ। मेरी परवाह की जा रही है।

खुद में विश्वास का यह मतलब भी है कि आप अपने सबसे अच्छे मित्र हैं। आप खुद पर भरोसा कर सकते हैं और आपमें इससे उत्पन्न होने वाला आत्मविश्वास होता है। कई बार आप खुद को किसी ऐसी स्थिति में पा सकते हैं, जहाँ आत्म-ज्ञान और योग्यता कोई भूमिका नहीं निभाते और आशा व आत्मविश्वास ही होते हैं, जिनके सहारे आपको सबसे मुश्किल समय में खुद को खींचना होता है।

विश्वास का संबंध उन चीज़ों से है, जो दिखती नहीं है और आशा का उन चीज़ों से, जो आस-पास नहीं होती है। - टॉमस एक्विनास

आत्मन्! स्व शुद्धात्मा श्रद्धान बिना सभी धर्म संसार वर्द्धक

(स्व-शुद्धात्मा श्रद्धान बिना व्रत-नियम-तप-त्याग-कष्ट सहन आदि संसार बीज-संसार वर्द्धक)

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : मन रे! तू काहे..., सायोनारा....)

आत्मन् तू स्व-शुद्धात्मा श्रद्धान करऽऽऽ
इससे ही होता है सम्यग्ज्ञान... जिससे होता सम्यक् आचरणऽऽऽ(ध्रुव)

तीनों मय ही होता शुद्धात्मा स्वरूप...यह ही है मोक्षमार्ग रूपऽऽऽ
इसकी पूर्णता ही है मोक्षरूप... जो आत्मा का परम रूपऽऽऽ
यह ही धर्म का सार रूपऽऽऽ आत्मन् (1)
इस हेतु ही करो देव-शास्त्र-गुरु-श्रद्धा...तत्त्वार्थ श्रद्धान भी इस हेतुऽऽऽ
निश्चय-व्यवहार धर्म-पालन भी...श्रावक व श्रमणधर्म पालन भीऽऽऽ
तप-त्याग व व्रत नियम भीऽऽऽ आत्मन्।।(2)
आत्मश्रद्धान बिना सभी ही व्यर्थ...सभी ही संसार वर्द्धक कामऽऽऽ
कठोर तप या परीषह-जयादि...सभी ही धर्म-कर्म भी भव बीजऽऽऽ
विपरीत गति से लक्ष्य दूर समऽऽऽ
मिथ्या श्रद्धा-प्रज्ञा-चर्या-संहार-मार्गऽऽऽ आत्मन्! (3)

णावि जाणइ जिणसिद्धसरूवं तिविहेण तह णियप्पाणं।
जो तिव्वं कुणइ तवं सो हिंडइ दीहसंसारे।।(124) (र.सा.)

णिच्छयववहारसरूवं जो रयणत्तय ण जाणइ सो।
जं कीरइ तं मिच्छारूवं सव्वं जिणुद्दिट्ठं।।(125)

किं जाणिऊण सयलं तच्चं किच्चा तवं च किं बहुलं।
सम्मविसोहि विहीणं णाणं तवं जाण भवबीयं।। (126)

वय गुण सील परिसहजयं च चरियं च तवं सडावसयं।
ज्झाणझयण सव्वं सम्मविणा जाण भववीय।। (127)

खाई पूया लाहं सक्काराइं किमिच्छसे जोई।
इच्छइ जइ परलोंय तेहिं किं तव परलोयं।।(128)

कम्माइ विहाव सहावगुणं जो भाविऊण भावेण।
णियसुद्धप्पा रुच्चइ तस्स य णियमेण होइ णिव्वाणं।। (129)

बिना बीज यथा न होता है वृक्ष...तथाहि स्व-श्रद्धा बिना न धर्मऽऽऽ
आत्मा बिन यथा शरीर है शव...तथाहि स्व-श्रद्धान बिना न मोक्षऽऽऽ
सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्गःऽऽऽ
सम्यग्दर्शन से प्रारंभ मोक्षमार्गऽऽऽ आत्मन् (4)

स्व का श्रद्धान करो जीव द्रव्यमय... निश्चय से शुद्ध-बुद्ध-आनन्द ऽऽऽ
कर्म बन्ध से बना तू अशुद्ध जीव...द्रव्य-भाव-नोकर्म से सम्बन्धऽऽऽ
कर्मक्षय से बनो शुद्ध-बुद्धऽऽऽ आत्मन् (5)

कर्मक्षय हेतु ही करो साधना...समता-शान्ति-निस्पृहता से ऽऽऽ
ख्याति-पूजा-लाभ-वर्चस्व त्यागो...संकल्प-विकल्प.संक्लेश आदि ऽऽऽ
भोगाकांक्षा निदान से रहित ऽऽऽ आत्मन् (6)

आत्मविशुद्धि हेतु ही ध्यान-अध्ययन...तप-त्याग व धर्म प्रभावनाऽऽऽ
अध्यापन-प्रवचन-लेखन-चिन्तन....सभी में ही करो आत्मा की आराधना
'कनक' स्व में ही स्व की साधना ऽऽऽ
तू बनो शुद्ध-बुद्ध-परमात्मा ऽऽऽ आत्मन् (7)

सागवाड़ा दि. 25.06.2018 अपराह्न 05:59

दंसणमूलो धम्मो, उपइट्ठो जिणवरेहिं सिस्साणं।
तं सोऊण सकण्णे, दंसणहीणो ण वंदिव्वो।।2।। दर्शन पा.

श्री जिनेन्द्र भगवान् ने शिष्यों के लिए दर्शनमूल धर्म का उपदेश दिया है इसलिए उसे अपने कानों से सुनो। जो सम्यग्दर्शन से रहित है वह वंदना करने योग्य नहीं है।

दंसणभट्ठा भट्ठा, दंसणभट्ठस्स णत्थि णिव्वाणं।
सिज्झंति चरियभट्ठा, दंसणभट्ठा ण सिज्झंति।।3।।

जो सम्यग्दर्शन से भ्रष्ट है वे ही वास्तव में भ्रष्ट है, क्योंकि सम्यग्दर्शन से भ्रष्ट मनुष्य को मोक्ष प्राप्त नहीं होता। जो सम्यक्चारित्र से भ्रष्ट है वे सिद्ध हो जाते हैं परन्तु जो सम्यग्दर्शन से भ्रष्ट हैं वे सिद्ध नहीं हो सकते।

सम्मत्तरयणभट्ठा, जाणंता बहुविहाइं सत्थाइं।
आराहणाविरहिया, भमंति तत्थेव तत्थेव।।4।।

जो सम्यक्त्वरूपी रत्न से भ्रष्ट हैं वे बहुत प्रकार के शास्त्रों को जानते हुए भी आराधनाओं से रहित होने के कारण उसी संसार में भ्रमण करते रहते हैं।

सम्मत्तविरहियाणं, सुट्ठ वि उग्गं तवं चरंताणं।
ण लहंति बोहिलाहं, अवि वाससहस्सकोडीहिं।।5।।

जो मनुष्य सम्यग्दर्शन से रहित हैं वे भले ही करोड़ों वर्षों तक उत्तमतापूर्वक कठिन तपश्चरण करें तो भी उन्हें रत्नत्रय प्राप्त नहीं होता है।

सम्मत्तसलिलपवहे, णिच्चं हियए पवट्टए जस्स।
कम्मं वालुयवरणं, बंधुच्चिय णासए तस्स।।7।।

जिस मनुष्य के हृदय में सम्यक्त्वरूपी जल का प्रवाह निरंतर प्रवाहित होता है उसका पूर्वबंध से संचित कर्मरूपी बालूका आवरण नष्ट हो जाता है।

जे दंसणेसु भट्ठा, णाणे भट्ठा चरित्तभट्ठा य।
ऐदे भट्ठविभट्ठा, सेसं पि जणं विणासंति।।8।।

जो मनुष्य दर्शन से भ्रष्ट हैं, ज्ञान से भ्रष्ट हैं और चारित्र से भ्रष्ट हैं वे भ्रष्टों में भ्रष्ट हैं--अत्यंत भ्रष्ट हैं तथा अन्य जनोंको भी भ्रष्ट करते हैं।

जो कोवि धम्मसीलो, संजमतवणियमजोयगुणधारी।
तस्स य दोस कहंता, भग्गा भग्गत्तणं दिंति।।9।।

जो कोई धर्मात्मा संयम, तप, नियम और योग आदि गुणों का धारक है उसके दोषों को कहते हुए क्षुद्र मनुष्य स्वयं भ्रष्ट है तथा दूसरोंको भी भ्रष्टता प्रदान करते हैं।

जह मूलम्मि विणट्ठे, दुमस्स परिवार णत्थि परवड्ढी।
तह जिणदंसणभट्ठा, मूलविणट्ठा ण सिज्झंति।।10।।

जैसे जड़के नष्ट हो जाने पर वृक्ष के परिवार की वृद्धि नहीं होती वैसे ही जो पुरुष जिनदर्शन से भ्रष्ट हैं वे मूल से विनष्ट हैं--उनका मूल धर्म नष्ट हो चुका है, अतः ऐसे जीव सिद्ध अवस्था को प्राप्त नहीं हो पाते हैं।

जह मूलाओ खंधो, साहापरिवार बहुगुणो होई।
तह जिणदंसमूलो, णिद्दिट्ठो मोक्खमग्गस्स।।11।।

जिस प्रकार वृक्ष की जड़ से शाखा आदि परिवार युक्त कई गुणा स्कन्ध उत्पन्न होता है उसी प्रकार मोक्षमार्ग की जड़ जिनदर्शन--जिन धर्म का श्रद्धान है ऐसा कहा गया है।

जे दंसणेसु भट्ठा, पाए पाडंति दंसणधराणं।
ते होंति लुल्लमूआ, बोही पुण दुल्लहा तेसिं।।12।।

जो मनुष्य स्वयं सम्यग्दर्शन से भ्रष्ट होकर अपने चरणों में सम्यग्दृष्टियों को पाड़ते हैं अर्थात् सम्यग्दृष्टियों से अपने चरणों में नमस्कार कराते हैं वे लुले और गूँगे होते हैं तथा उन्हें रत्नत्रय अत्यंत दुर्लभ रहता है। यहाँ लूले और गूँगे से तात्पर्य स्थावर जीवों से है क्योंकि यथार्थ में वे ही गतिरहित तथा शब्दहीन होते है।

जे वे पडंति च तेसिं, जाणंता लज्जगारवभयेण।
तेसिं पि णत्थि बोही, पावं अणुमोयमाणाणं।।13।।

जो सम्यग्दृष्टि मनुष्य मिथ्यादृष्टियों को जानते हुए भी लज्जा, गौरव और भय से उनके चरणों में पड़ते हैं वे भी पाप की अनुमोदना करते हैं अतः उन्हें रत्नत्रय की प्राप्ति नहीं होती।

दुविहं पि गंथचायं, तीसुवि जोएसु संजमो ठादि।
णाणम्मि करणसुद्धे, उब्भसणे दंसणं होई।।14।।

जहाँ अंतरंग और बहिरंग के भेद से दोनों प्रकार के परिग्रह का त्याग होता है, मन वचन काय इन तीनों योगों में स्थित रहता है, ज्ञान कृत, कारित, अनुमोदनासे शुद्ध रहता है और खड़े होकर भोजन किया जाता है वहाँ सम्यग्दर्शन होता है।

सम्मत्तादो णाणं, णाणादो सव्वभाव उवलद्धी।
उवलद्धपयत्थे पुण, सेयासेयं वियाणेदि।।15।।

सम्यग्दर्शन से सम्यग्ज्ञान होता है, सम्यग्ज्ञान से समस्त पदार्थों की उपलब्धि होती है और समस्त पदार्थों की उपलब्धि होने से यह जीव सेव्य तथा असेव्य को--कर्तव्य-अकर्तव्य को जानने लगता है।

सेयासेयविदण्हू, उद्धददुस्सील सीलवंतो वि।
सीलफलेणब्भुदयं, तत्तो पुण लहइ णिव्वाणं।।16।।

सेव्य और असेव्य को जाननेवाला पुरुष अपने मिथ्या स्वभाव को नष्ट कर शीलवान् हो जाता है तथा शील के फलस्वरूप स्वर्गादि अभ्युदयको पाकर फिर निर्वाण को प्राप्त हो जाता है।

जिणवयणमोहसहमिणं, विसयसुहविरेयणं अमिदभूयं।
जरमरणवाहिहरणं, खयकरणं सव्वदुक्खाणं।।17।।

यह जिनवचनरूपी औषधि विषयसुख को दूर करने वाली है, अमृतरूपी है, बुढ़ापा, मरण आदि की पीड़ा हरनेवाली है तथा समस्त दुःखों का क्षय करनेवाली है।

छह दव्व णव पयत्था, पंचत्थी सत्त तच्च णिद्दिट्ठा।
सद्दहद ताण रूवं, सो सद्दिट्ठी मुणेयव्वो।।19।।

छह द्रव्य, नौ पदार्थ, पाँच अस्तिकाय और सात तत्त्व कहे गये हैं। जो उनके स्वरूप का श्रद्धान करता है उसे सम्यग्दृष्टि जानना चाहिए।

जीवादी सद्दहणं, सम्मत्तं जिणवरेहिं पण्णत्तं।
ववहारा णिच्छयदो, अप्पाणं हवइ सम्मत्तं।।20।।

जिनेंद्र भगवान् ने सात तत्त्वों के श्रद्धान को व्यवहार सम्यक्त्व कहा है और शुद्ध आत्मा के श्रद्धान को निश्चय सम्यक्त्व बतलाया है।

एवं जिणपण्णत्तं, दंसणरयणं धरेह भावेण।
सारं गुणरयणत्तय, सोवाणं पढम मोक्खस्स।।21।।

इस प्रकार जिनेंद्र भगवान् के द्वारा कहा हुआ सम्यग्दर्शन रत्नत्रय में साररूप है और मोक्ष की पहली सीढ़ी है, इसलिए है भव्य जीवो! उसे अच्छे अभिप्राय से धारण करो।

जं सक्कइ तं कीरइ, जं च ण सक्कइ तं च सद्दहणं।
केवलिजिणेहि भणियं, सद्दहमाणस्स सम्मत्तं।।22।।

जितना चारित्र धारण किया जा सकता है उतना धारण करना चाहिए और जितना धारण नहीं किया जा सकता उसका श्रद्धान करना चाहिए, क्योंकि केवलज्ञानी जिनेंद्र देवने श्रद्धान करनेवालों के सम्यग्दर्शन बतलाया है।

दंसणणाणचरित्ते, तवविणये णिच्चकालसुपसत्था।
एदे दु वंदणीया, जे गुणवादी गुणधराणं।।23।।

जो दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप तथा विनय में निरंतर लीन रहते हैं और गुणों के धारक आचार्य आदि का गुणगान करते हैं वे वंदना करने योग्य--पूज्य हैं।

सहजुप्पण्णं रूवं, दट्ठुं जो मण्णए ण मच्छरिओ।
सो संजमपडिवण्णे, मिच्छाइट्ठी हवइ एसो।।24।।

मात्सर्य भाव में भरा हुआ जो पुरुष जिनेंद्र भगवान् के सहजोत्पन्न--दिगंबर रूपको देखने के योग्य नहीं मानता वह संयमी होने पर भी मिथ्यादृष्टि है।

अमराण वंदियाणं, रूवं दट्ठूण सीलसहियाणं।
ये गारवं करंति य, सम्मत्तिविवज्जिया होंति।।25।।

शीलसहित तथा देवों के द्वारा वंदनीय जिनेंद्र देव के रूप को देखकर जो अपना गौरव करते हैं--अपने को बड़ा मानते हैं वे भी सम्यग्दर्शन से रहित हैं।

असंजदं ण वंदे, वच्छविहीणोवि तो ण वंदिज्ज।
दोण्णिवि होंति समाणा, एगो वि ण संजदो होदि।।26।।

असंयमी की वंदना नहीं करनी चाहिए और भाव से रहित बाह्य नग्न रूपको धारण करनेवाला भी वंदनीय नहीं है। क्योंकि वे दोनों ही समान है, उनमें एक भी संयमी नहीं है।

ण वि देहो वंदिज्जइ, ण वि य कुलो ण वि य जाइसंजुत्तो।
को वंदमि गुणहीणो, णहु सवणो णेव सावओ होइ।।27।।

न शरीर की वंदना की जाती है, न कुल की वंदना की जाती है और न जातिसंयुक्त की वंदना की जाती है। गुणहीन की कौन वंदना करता है? क्योंकि गुणों के बिना न मुनि होता है और न श्रावक होता है।

वंदमि तवसावण्णा, सीलं च गुणं च बंभचेरं च।
सिद्धिगमणं च तेसिं, सम्मत्तेण सुद्धभावेण।।28।।

मैं तपस्वी साधुओं को, उनके शीलको, मूलोत्तर गुणों को, ब्रह्मचर्य को और मुक्तिगमन को सम्यक्त्वसहित शुद्ध भाव से वंदना करता हूँ।

णाणेण दंसणेण य, तवेण चरियेण संजमगुणेण।
चउहिं पि समाजोग्गे, मोक्खो जिणसासणे दिट्ठो।।30।।

ज्ञान, दर्शन, तप और चारित्र इन चार गुणों से संयम होता है और इन चारों का समागम होने पर मोक्ष होता है ऐसा जिनशासन में कहा है।

णाणं णरस्स सारो, सारो वि णरस्स होइ सम्मत्तं।
सम्मत्ताओ चरणं, चरणाओ होइ णिव्वाणं।।31।।

सर्वप्रथम मनुष्य के लिए ज्ञान सार है और ज्ञान से भी अधिक सार सम्यग्दर्शन है, क्योंकि सम्यग्दर्शन से सम्यक्चारित्र होता है और सम्यक्चारित्र से निर्वाण होता है।

णाणम्मि दंसणम्मि य, तवेण चरियेण सम्मसहियेण।
चोण्हं हि समाजोगे, सिद्धा जीवा ण संदेहो।।32।।

ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्वसहित तप और चारित्र इन चारों के समागम होने पर ही जीव सिद्ध हुए है इसमें संदेह नहीं हैं।

विश्वास है दवा!

प्लेसीबो प्रभाव का रहस्य

बीसवीं शताब्दी की शुरुआत तक चिकित्सकों के द्वारा काम में ली जाने वाली लगभग सभी औषधियाँ निष्क्रिय होती थीं। फिर भी उनका असर होता था, रोगी ठीक होते थे। अच्छे प्रसिद्ध डॉक्टरों के हाथों में ये दवाएं कारगर सिद्ध होती थीं। मगरमच्छ का मल, सूअर के दांत, गेंडे के सींग, मेंढक के शुक्राणु, बीरबहूटी का शोरबा आदि से बनी औषधियाँ काम में ली जाती थीं और कारगर सिद्ध होती थीं। डाम लगाते थे, सींगनी चढ़ाते थे, लीच लगाते थे, खून निकालते थे, वमन, दस्त, धुलाई, और धुनाई द्वारा चिकित्सा की जाती थी और रोगियों को लाभ होता था। इन व्यर्थ के उपचारों के बावजूद चिकित्सक का रुतबा ऐसा था कि इलाज कारगर होता था। झूठी दवाओं से भी लगता था मिर्गी के दौरे कम हुए हैं, रक्तचाप कम हुआ है, माइग्रेन सिरदर्द ठीक हुआ है, आदि। आखिर क्यों? कैसे?

इसे प्लेसीबो प्रभाव कहते हैं। विश्वास प्रभाव। चिकित्सक और चिकित्सा में रोगी के विश्वास का प्रभाव।

पहले यह माना गया कि इसका वास्तविक आधार नहीं है, यह मात्र मरीज़ की सोच है, सच नहीं। क्योंकि मरीज़ को विश्वास है कि दवा से ठीक होगा अतः उसे लगता था वह ठीक हुआ है, लेकिन जब मस्तिष्क की सूक्ष्म परीक्षण विधियाँ यथा पी.ई.टी., एम.आर.आई. और अति सूक्ष्म रायायनिक विधियाँ विकसित हुई, तब देखा गया कि सकारात्मक सोच से मस्तिष्क के सन्दर्भित भाग में ऐसे रसायन उत्पन्न

होते हैं, जो अन्तस्रावी (एंडोक्राइन) द्रव्यों द्वारा उपयुक्त अंगों को प्रभावित कर भौतिक बदलाव लाते हैं। मस्तिष्क में दर्दनाशक और अनेक प्रभावकारी रसायन चिह्नित हुए हैं।

प्लेसीबो का प्रभाव मात्र सोच में ही नहीं वास्तव में होता है। कैसे संभव है इसका भी खुलासा हुआ है। सकरात्मक सोच से व्याधियों से मुक्ति में सहायता मिलती है, नकारात्मक सोच से सही उपचार भी कारगर नहीं होता (नोसीबो इफेक्ट)। विश्वास (प्लेसीबो) प्रभाव से उतने ही लोग ठीक होते हैं, जितने सही उपचार से। आप स्वेच्छा से शरीर से जो कर पाते हैं, उससे कही अधिक अवचेतन की मानसिक प्रक्रियाओं के फलस्वरूप मस्तिष्क शरीर से करवाता है। मनःस्थिति जनित शारीरिक रोगों में तो प्लेसीबो का प्रभाव आसानी से समझा जा सकता है, लेकिन इसका सकारात्मक प्रभाव ह्यमूटोइड ऑर्थराटिस, पेपटिक अलसर और मस्से (वार्ट्स) जैसे रोगों में समझना सरल नहीं है। फिर भी जहां रोगों के उपचार में प्लेसीबो इफेक्ट को नहीं नकारा जा सकता, वहीं यह भी सच है कि कुछ रोग असाध्य होते है।

(डॉ. श्री गोपाल काबरा)

मेरे वैश्विक आत्म चिन्तनः
मेरे द्रव्य-तत्त्व-पदार्थ में मैं ही प्रमुख

-आचार्य कनकनन्दी

(चालः-यमुना किनारे...)

सर्वत्र घूमा कहीं न मिला, मेरा सत्य मुझ में मिला।
मेरा द्रव्य-तत्त्व तथा पदार्थ, मुझ में स्थित मुझ में मिला।। (1)
में हूँ जीव द्रव्य चैतन्यमय, द्रव्य-भाव-नोकर्म रहित।
अनन्तज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्यमय मेरे गुण मुझ में स्थित।। (2)
'सत्-द्रव्य-लक्षणं' होने से 'मैं' हूँ सत्य तथाहि द्रव्य।
'गुण पर्यय द्रव्यं' होने से मेरे गुण-पर्याय मुझ में स्थित।। (3)
अनादि कालीन कर्म 'बन्धन' से, मेरे गुणपर्याय हुए अशुद्ध।

इससे होते आस्रव-बन्ध-संवर-निर्जरा-मोक्ष भी तत्त्व।। (4)
पुण्य-पाप मिलकर होते नवपदार्थ मेरे बिन मेरे ये नहीं संभव।
इसमें मेरे होते अशुभ-शुभ तथाहि शुद्ध भाव अति प्रमुख।। (5)
बाह्य निमित्त है पुद्गल द्रव्य, द्रव्य कर्म-नो कर्म रूप में परिणत।
सचित्त-अचित्त-मिश्र स्वरूप यथार्थ से मेरे से न निज स्वरूप।। (6)
उदासिन निमित्त हैं आकाश-काल-धर्म-अधर्म तथा काल द्रव्य।
इनसे परे मैं चैतन्यद्रव्य, स्वयंभू-स्वयंपूर्ण-अनादि-अनन्त।। (7)
ऐसा श्रद्धान है सम्यग्दर्शन, इससे ही होता आत्मश्रद्धान।
इससे होता है सम्यग्ज्ञान जिससे ही होता वीतराग विज्ञान।। (8)
दोनों से युक्त होता सही आचरण, राग द्वेष मोह क्षय के कारण।
अहिंसा-सत्य-अचौर्य-ब्रह्म-अपरिग्रह पालन स्व आत्म स्वरूप में रमण।(9)
उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव शौच संयम तप त्याग आकिंचन्य।
समता-शान्ति-सहिष्णुता-निस्पृहता व ध्यान-अध्ययन।। (10)
इससे परे सभी होता विसर्जन, ख्याति पूजा लाभ संक्लेश कारण।
शत्रु-मित्र भाई बन्धु से परे मैत्री प्रमोद कारूण्य माध्यस्थ आचरण।। (11)
इससे ही आत्मविशुद्धि होती, जिससे आत्म शक्तियाँ वृद्धि होती।
आत्मानुभव बढता जाता स्वयं में ही स्वयं में लीनता आती।। (12)
इससे संवर-निर्जरा बढ़े क्रमशः सर्व कर्म क्षय से मोक्ष मिले।
मोक्ष अवस्था ही मेरी शुद्ध व्यवस्था अन्य सभी मेरी अशुद्ध दशा।। (13)
इस हेतु निमित्त है देव शास्त्र गुरु प्रमुख सुद्रव्य क्षेत्र काल भाव निमित्त।
सभी के केन्द्र में 'मैं' ही मेरे हेतु प्रमुख ऐसा है 'कनक' का जीवद्रव्य।। (14)

सागवाड़ा दि. 15/6/2018 समय 6.55

संदर्भ-

आगे आत्म अकर्ता है यह दृष्टांतपूर्वक कहते हैं--

दवियं जं उपज्जइ उप्पजइ, गुणेहिं तं तेहिं जाणसु अणण्णं।

जह कडयादीहिं दु, पज्जएहिं कणयं अणण्णमिह।।308।।
जीवस्साजीवस्स दु, जे परिणामा दु देसिया सुत्ते।
तं जीवमजीवं वा, तेहिमणण्णं वियाणाहि।।309।।
ण कुदोचि वि उप्पण्णो, जम्हा कज्जं ण तेण सो आदा।
उप्पादेदि ण किंचिवि, कारणमवि तेण ण स होइ।।310।।
कम्मं पडुच्च कत्ता, कत्तारं तह पडुच्च कम्माणि।
उप्पजंति य णियमा, सिद्धी दु ण दीसए अण्णा।।311।। (समयसार)

इस लोक में जिस प्रकार सुवर्ण अपने कटकादि पर्यायों से अनन्य-अभिन्न है उसी प्रकार जो द्रव्य जिन गुणों से उत्पन्न होता है उसे उन गुणों से अनन्य-अभिन्न जानो। आगम में जीव और अजीव द्रव्य के जो पर्याय कहे गये हैं जीव और अजीव द्रव्य को उनसे अभिन्न जानो। चूँकि आत्मा किसी से उत्पन्न नहीं हुआ है इसलिए कार्य नहीं है और न किसी को उत्पन्न करता है इसलिए वह कारण भी नहीं है। कर्म को आश्रय कर कर्त्ता होता है और कर्त्ता को आश्रय कर कर्म उत्पन्न होते हैं ऐसा नियम है। कर्त्ता कर्म की सिद्धि अन्य प्रकार नहीं देखी जाती।

आगे आत्मा का ज्ञानावरणादि कर्मों के साथ जो बंध होता है वह अज्ञान का माहात्म्य है यह कहते हैं -

''चेया उ पयडीयट्ठं, उप्पज्जइ विणस्सइ।
पयडीवि चेययट्ठं, उप्पज्जइ विणस्सइ।।312।।
एवं बंधो उ दुण्हं पि, अण्णोण्णप्पच्चया हवे।
अप्पणो पयडीए य, संसारो तेण जायए''।।313।।

आत्मा ज्ञानावरणादि कर्म प्रकृतियों के निमित्त से उत्पन्न होता है तथा विनाश को प्राप्त होता है और प्रकृति भी आत्मा के लिए उत्पन्न होती है तथा विनाश को प्राप्त होती है। इस प्रकार दोनों आत्मा और प्रकृति के परस्पर निमित्त से बंध होता है और उस बंध से संसार उत्पन्न होता है।

आगे कहते हैं कि जब तक आत्मा प्रकृति के निमित्त उपजना विनशना नहीं छोड़ता है तब तक अज्ञानी, मिथ्यादृष्टि और असंयत रहता है -

जा एसो पयडीयट्टं, चेया णेव विमुंचए।
अयाणओ हवे ताव, मिच्छाइट्ठी असंजओ।।314।।
जया विमुंचए चेया, कम्मफ्फलमणंतयं।
तया विमुत्तो हवइ, जाणओ पासओ मुणी।।315।।

यह आत्मा जब तक प्रकृति के निमित्त से उपजना विनशना नहीं छोड़ता है तब तक अज्ञानी, मिथ्यादृष्टि और असंयमी होता है तथा जब आत्मा अनंत कर्मफल को छोड़ देता है तब बंध से रहित हुआ ज्ञाता, द्रष्टा और मुनि - संयमी होता है।

आगे अज्ञानी ही कर्मफलका वेदन करता है, ज्ञानी नहीं यह कहते हैं-

अण्णाणी कम्मफलं, पयडिसहावट्ठिओ दु वेदेइ।
णाणी पुण कम्मफलं, जाणइ उदियं ण वेदेइ।।316।।

प्रकृति के स्वभाव में स्थित हुआ अज्ञानी जीव कर्म के फल को भोगता है और ज्ञानी जीव उदयागत कर्म फल को जानता है, भोगता नहीं है।

आगे अज्ञानी भोक्ता ही है ऐसा नियम करते हैं -

ण मुयइ पयडिमभव्वो, सुट्ठु वि अज्झाइऊण सत्थाणि।
गुडदुद्धंपि पिवंता, ण पण्णया णिव्विसा हुंति।।317।।

अभव्य अच्छी तरह शास्त्रों को पढ़कर भी प्रकृति को नहीं छोड़ता है, क्योंकि साँप गुड़ और दूध पीकर भी निर्विष नहीं होते।

आगे ज्ञानी अभोक्ता ही है यह नियम करते हैं -

णिव्वेयसमावण्णो, णाणी कम्मफ्फलं वियाणेइ।
महुरं कडुयं बहुविहमवेयओ तेण सो होई।।318।।

वैराग्य को प्राप्त हुआ ज्ञानी जीव अनेक प्रकार के मधुर-शुभ और कटुक अशुभ कर्मों के फल को जानता है इसलिए वह अवेदक.अभोक्ता होता है।

आगे इसी अर्थ का समर्थन करते हैं-

णवि कुव्वइ णवि वेयइ णाणी कम्माइं बहुपयाराइ।
जाणइ पुण कम्मफलं, बंधं पुण्णं च पावं च।।311।।

ज्ञानी बहुत प्रकार के कर्मों को न तो करता है और न भोगता है, परन्तु कर्म के बंध को और पुण्य-पापरूपी कर्म के फल को जानता है।

आगे इसी बात को दृष्टांत द्वारा स्पष्ट करते हैं-

दिट्ठि जहेव णाणं, अकारयं तह अवेदयं चेव।
जाणइ य बंधमोक्खं, कम्मुदयं णिज्जरं चेव।।320।।

जिस प्रकार नेत्र पदार्थों को देखता मात्र है, उनका कर्त्ता और भोक्ता नहीं है उसी प्रकार ज्ञान, बंध और मोक्ष को तथा कर्मोदय और निर्जरा को जानता मात्र है, उनका कर्त्ता और भोक्ता नहीं है।

आगे आत्मा को जो कर्त्ता मानते हैं वे अज्ञानी हैं और उन्हें मोक्ष नहीं प्राप्त होता यह कहते हैं-

लोयस्स कुणइ विण्हू, सुरणारयतिरियमाणुसे सत्ते।
समणाणंपि य अप्पा, जइ कुव्वइ छव्विहे काये।।321।।
लोगसमणाणमेयं, सिद्धंतं जइ ण दीसइ विसेसो।
लोयस्स कुणइ विण्हू समणाणवि अप्पओ कुणइ।।322।।
एवं ण कोवि मोक्खो, दीसइ लोयसमणाण दोण्हंपि।
णिच्चं कुव्वंताणं, सदेवमणुयासुरे लोए।।323।।

लोक सामान्य-जनसाधारण का कहना है कि देव नारकी तिर्यंच और मनुष्य रूप प्राणियों को विष्णु करता है, फिर मुनियों का भी यह सिद्धान्त हो जावे कि छह प्रकार के काय को-षट् कायिक जीवों को आत्मा करता है तो लोक सामान्य और मुनियों का एक ही सिद्धान्त हो जावे, उनमें कुछ भी विशेषता न दिखे, क्योंकि लोकसामान्य के मत से विष्णु करता है और मुनियों के मत से आत्मा करता है। इस तरह की मान्यता होने पर लोक सामान्य और युक्ति दोनों को ही मोक्ष नहीं दिखेगा, क्योंकि दोनों ही देव मनुष्य असुर सहित लोकों को निरन्तर करते रहते हैं।

भावार्थ : जो आत्मा को कर्त्ता मानते हैं वे मुनि होने पर भी लौकिक जन के समान हैं, क्योंकि लौकिक जन ईश्वर को कर्त्ता मानते हैं और मुनिजन आत्मा को कर्त्ता मानते हैं। इस प्रकार दोनों को ही मोक्ष का अभाव प्राप्त होता है।

आगे निश्चयनय से आत्मा का पुद्गल द्रव्य के साथ कर्तृ-कर्म संबंध नहीं है तब उनका कर्ता कैसे होगा? यह कहते है-

ववहारभासिएण उ, परदव्वं मम भणंति अविदियत्था।
जाणंति णिच्चयेण उ, ण य मह परमाणुमिच्चमवि किंचि।।324।।
जह कोवि णरो जंपइ, अम्हं गामविसयणयररट्ठं।
ण य होंति ताणि तस्स उ, भणइ य मोहेण सो अप्पा।।325।।
एमेव मिच्छदिट्ठी, णाणी णिस्संसयं हवइ एसो।
जो परदव्वं मम इदि, जाणंतो अप्पयं कुणइ।।326।।
तम्हा ण मेत्ति णिच्चा, दोण्हं वि एयाण कत्तविवसायं।
परदव्वे जाणंतो, जाणिज्जो दिट्ठिरहियाणं।।327।।

पदार्थ यथार्थ स्वरूप को न जानने वाले पुरुष व्यवहारनय के वचन से कहते हैं कि 'परद्रव्य मेरा है' और जो निश्चय नय से पदार्थों को जानते हैं वे कहते हैं कि 'परमाणु मात्र भी कोई परद्रव्य मेरा नहीं है।' तहाँ व्यवहारनय का कहना ऐसा है कि जैसे कोई पुरुष कहता है कि 'हमारा ग्राम है, देश है, नगर है और राष्ट्र है, वास्तव में विचार किया जाय तो ग्रामादिक उसके नहीं हैं, वह आत्मा मोह से ही मेरा मेरा कहता है। इस प्रकार जो परद्रव्य को मेरा है ऐसा जानता हुआ उसे आत्ममय करता है वह ज्ञानी निःसंदेह मिथ्यादृष्टि है। इसलिए ज्ञानी 'परद्रव्य मेरा नहीं है' ऐसा जानकर परद्रव्य में इन लोक साधारण तथा मुनियों-दोनों के ही कर्तृव्यवसाय को जानता हुआ जानता है कि ये सम्यग्दर्शन से रहित हैं।

आगे जीव के मिथ्यात्वभाव है उसका कर्त्ता कौन है? यह युक्ति से सिद्ध करते हैं-

मिच्छत्तं जइ पयडी, मिच्छाइट्ठी करेइ अप्पाणं।
तम्हा अचेदणा दे, पयड़ी णाणु कारगोपत्तो।।328।।
अहवा एसो जीवो, पुग्गलदव्वस्स कुणइ मिच्छत्तं।
तम्हा पुग्गलदव्वं, मिच्छाइट्ठी ण पुण जीवो।।329।।
अह जीवो पयडी तह, पुग्गलदव्वं कुणंति मिच्छत्तं।

तम्हा दोहिय कदं, तं दोण्णिवि भुंजंति तस्स फलं।।330।।

अह ण पयडी ण जीवो, पुग्गलदव्वं करेदि मिच्छत्तं।

तम्हा पुग्गलदव्वं, मिच्छत्तं तं तु ण हु मिच्छा।।331।।

यदि मिथ्यात्व नामा प्रकृति आत्मा को मिथ्यादृष्टि करती है ऐसा माना जाय तो अचेतन प्रकृति तुम्हारे मत में जीव के मिथ्याभाव को करने वाली ठहरी ऐसा बनता नहीं है। अथवा ऐसा माना जाय कि यह जीव ही पुद्गल द्रव्य के मिथ्यात्व को करता है तो ऐसा मानने से पुद्गल द्रव्य मिथ्यादृष्टि सिद्ध हुआ, न कि जीव, ऐसा नहीं बनता। अथवा ऐसा माना जाय कि जीव और प्रकृति ये दोनों पुद्गल द्रव्य के मिथ्यात्व करते हैं तो दोनों के द्वारा किये हुए उसके फल को दोनों ही भोगे ऐसा ठहरा, सो यह भी नहीं बनता। अथवा ऐसा माना जाय कि पुद्गल नामा मिथ्यात्व को न तो प्रकृति करती है और न ही जीव, तो भी पुद्गल द्रव्य ही मिथ्यात्व हुआ, सो ऐसा मानना क्या यथार्थ में मिथ्या नहीं है? अर्थात् मिथ्या ही है।

भावार्थ : मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से आत्मा में जो अतत्त्वश्रद्धानरूप भाव उत्पन्न होता है उसका कर्ता अज्ञानी जीव है, परन्तु इसके निमित्त से पुद्गल द्रव्य में मिथ्यात्वकर्म की शक्ति उत्पन्न होती है।

खुशी का फॉर्मूला

आइंस्टीन ने जिसे खुशी का फॉर्मूला दिया, उसने वो 10 करोड़ में बेच दिया।

क्या वो इंसान ख़ुश रह सका?

हाल ही में नेशनल जर्नल में बड़ा दिलचस्प लेख आया था। लेख में दावा किया गया था कि खुशी का फ़ॉर्मूला खोज निकाला गया है। और वह भी फ़कीरों-दरवेशों द्वारा नहीं, बल्कि रिसर्चरों ने ऐसा किया है। खुशी क्या है? इस एक सवाल पर फ़िलॉस्फर लोग हज़ारों साल से सिर खपाते आ रहे हैं। अरस्तू ने कहा था कि ख़ुशी अपना हासिल खुद होती है। ख़लील जिब्रान ने कहा था कि खुशी भी एक क़िस्म का ग़म ही है, लेकिन बिना किसी नकाब के। ख़ुदा जाने, इसका क्या मतलब निकलता है।

लेकिन ये तो लफ़्फ़ाजी हो गई। मैं आपको यहाँ उस रिसर्च के बारे में बताने जा रही हूँ, जो रिसर्च यूनिवर्सिटी कॉलेज, लंदन में की गई थी। इसमें खोजे गए ख़ुशी के फ़ॉर्मूले को बाद में नेशनल एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा छापा भी गया।

ख़ुशी के फ़ॉर्मूले का लब्बोलुआब बहुत साफ़ है-ख़ुशी तब मिलती है, जब हमारी उम्मीदें कम होने के बावजूद हम जीतने में क़ामयाब रहते हैं, लेकिन ये ख़ुशी समय के साथ ग़ायब भी हो जाती है। वास्तव में यह फ़ॉर्मूला पढ़कर आप इस बारे में तो मुतमईन नहीं हो सकते कि रिसर्चर किसी ऐसी खुशी की तलाश कर रहे थे, जो लंबे समय तक हमारे साथ बनी रहती है। इसके बजाय शायद वे एक फ़ौरी खुशी के बारे में बात कर रहे थे। लेकिन यह फ़ॉर्मूला निकाला कैसे गया? वास्तव में रिसर्चरों ने एमआरआई मशीनों की मदद से 26 ऐसे व्यक्तियों के दिमाग की पड़ताल की थी, जो कोई गैम्बलिंग गेम खेल रहे थे। पूरे गेम के दौरान कम्प्यूटर प्रतिभागियों से पूछता रहा कि वे कितने खुश हैं, इसे 1 से 10 तक की रेटिंग में बताएँ। इसके बाद रिसर्चरों ने उनकी ब्रेन-एक्टिविटी डाटा को ख़ुशी की इस रेटिंग से मिलाया, फिर गेम में प्रतिभागी की सफलता के इतिहास से उसकी तुलना की और एक जटिल गणितीय समीकरण रच दिया, जिसका सार मैंने आपको ऊपर बताया।

रिसर्चरों ने पाया कि गेमर्स को अपने द्वारा जीती गई कुल रकम से उतनी खुशी नहीं मिली थी, जितनी की अनपेक्षित सफलता से मिली थी। अब चूँकि वो खुशी अल्पकालिक थी, इसलिए उसी क्रम में दीर्घकालीन खुशी का फॉर्मूला भी बन गया और वो ये था कि जब चीज़ें आपकी उम्मीदों के अनुरूप होती हैं, तब आपको लंबी और संतोषजनक खुशी मिलती है।

है न मजेदार? इससे भी मज़ेदार ये तफ़सील है कि अल्बर्ट आइंस्टीन ने न केवल भौतिकी का सबसे बड़ा फॉर्मूला $E=mc^2$ दिया था, बल्कि उन्होंने ख़ुशी का भी एक फ़ॉर्मूला रचा था और वो है- 'कामयाबी के पीछे भागने से हमेशा बेचैनी ही हाथ आती है, लेकिन शांत और सादगी से भरी जिन्दगी हमेशा खुशियाँ देती है।'

आइंस्टीन ने ये फ़ॉर्मूला वर्ष 1922 के नवम्बर महीने में टोक्यो की इंपीरियल होटल में एक ऐसे कोरियर वाले को एक चिट पर लिखकर दिया था, जो उनका पार्सल लेकर आया। बाद में वो छोटा-सा नोट यरूशलम में नीलाम किया गया, जिसे

10 करोड़ रुपए से ज़्यादा में ख़रीदा गया। कहने की ज़रूरत नहीं कि दस करोड़ रुपए देकर वो पर्ची खरीदने वाला व्यक्ति आइंस्टीन के फ़ॉर्मूले से पूरी तरह से चूक गया था। पैसों से वो जो चाहे ख़रीद सकता हो, खुशी को कभी खरीद नहीं सकता था।

- श्रद्धा सिसौदिया

'सत्यमेव जयते' नानृतम्...!?

(धर्मो रक्षति रक्षितः, धर्मेण हन्ति हन्ति)

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : पायो जी मैंने...)

पायो जी मैंने अनुभव रसायन पायो !..2
जिसे प्राप्तकर मेरा ज्ञान हो गया अमृतमय।। पायो...(ध्रुव)

(चाल : 1. क्या मिलिए...2. आत्मशक्ति....)

पढ़ा व देखा-सुना अनेक खलनायक होते,
सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि-बुद्धि से प्रभुत्वशाली होते।
तथापि वे अन्त में होते पतित इह व पर लोक में,
किन्तु नैतिक-आध्यात्मिक जन अवश्य शान्ति पाते।।(1)

इसके कारण नैतिक-शक्ति व आध्यात्मिक शक्ति होती,
जिससे उनके मन-मस्तिष्क में होती प्रबल शान्ति।
जिससे तन-मन-मस्तिष्क-आत्मा में प्रबल स्थिरता होती,
जिससे उन्हें इह-पर लोक में प्रकृष्ट उन्नति होती।।(2)

सच्ची जनता व सच्ची राजनीति-न्यायनीति रक्षक होती,
पुण्य की शक्ति भी हर परिस्थिति में अवश्य सहयोगी होती
उक्त नैतिक आदि शक्ति मिलकर अपराजय शक्ति बनती,
जिससे उनकी सुरक्षा से ले हर प्रकार उन्नति होती।। (3)

इससे विपरीत खलनायक की होती है सभी परिस्थिति,
जिससे उनकी न होती सुरक्षा अवश्य अवनति होती।

राम-पाण्डव सम नैतिक शक्ति सम्पन्न हर देश व काल में,
रावण-कौरव सम होते खलनायक, हर देश व काल में।। (4)

पापानुबन्धी पुण्य के कारण मिलती जो सत्ता सम्पत्ति,
जिससे अहंकार बढ़े होती है पाप में प्रवृत्ति।
पुण्यानुबंधी पुण्य के कारण मिलती जो सत्ता-सम्पत्ति,
उससे वे दयादान-सेवा-त्याग से करते हैं प्रगति।।(5)

तथाहि हिटलर, सद्दाम हुसैन, लादेन आतंकवादी,
अनेक भ्रष्टनेता, नौकरशाही तथा उद्योगपति।
अभिनेता, खिलाड़ी, मिलावट-ठगी-शोषणकारी,
चोर-डकैत व बलात्कारी-साधु ढ़ोंगी-पाखण्डी।।(6)

कोई मरते आत्महत्या कर तो कोई तो मारे जाते,
कोई जेल में सजा पाते तो कोई फरार हो जाते।
कोई अपमान से रोगी होते तो कोई संक्लेश पाते,
अस्त-व्यस्त-संत्रस्त होकर अन्त में नरक जाते।।(7)

इसे ही कहते धर्मो रक्षति रक्षितः धर्मेण हन्ति हन्ति।
'सत्यमेव जयते नानृतमं' यह है महानतम नीति।।
'यो धरति उत्तम सुखे स धर्म' यह है परम सत्य।
'कनकनन्दी' भी कर रहे हैं अनेक अनुभव सत्य।।(8)

सागवाड़ा दि. 18.06.2018 रात्रि 09:20

सन्दर्भ :

भावार्थः इस उपरोक्त सिद्धान्त से यह सिद्ध होता है कि मिथ्यादृष्टि से सम्यग्दृष्टि असंख्यात गुणी कर्म निर्जरा करता है और अविरत सम्यग्दृष्टि से देश संयत गुणस्थानवर्ती जीव असंख्यात गुणित कर्म निर्जरा करता है और इनसे एक सकल संयमी असंख्यात गुणी कर्म निर्जरा करता है। मुख्यरूप से चतुर्थ गुणस्थानवर्ती से लेकर सातवाँ गुणस्थान पर्यन्त शुभध्यान है। अतः यदि शुभध्यान से कर्म निर्जरा नहीं होती है ऐसा मानने पर आगम विरोध होगा। आगम त्रिकाल अबाधित सत्य है। कभी

अन्यथा नहीं हो सकता है।

अतः सिद्ध हुआ कि उत्तरोत्तर शुभध्यान (शुभोपयोग) से अधिकाधिक कर्म निर्जरा होती है।

''परे मोक्ष हेतु'' (त. सूत्र अध्याय-9)

आगे के दो शुभ प्रकृतियों का अनुभाग बन्ध उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है यदि पुण्य प्रकृति सर्वथा संसार का कारण होती है तो उत्तरोत्तर गुणस्थानवर्ती जीव अधिकाधिक दीर्घसंसारी होते। अतः पुण्य संसार का कारण कहना आगम विरोध है। जिन भगवान् के मुख से निकली हुई द्वादशांग वाणी में मुनियों को मुख्य करके आचारांग का वर्णन है। और यथायोग्य धर्म को धारण करने वाले गृहस्थों के लिए उपासकाध्ययन अंग का वर्णन है, जो कि शुभध्यान स्वरूप है, पुण्य बन्ध का कारण है। यदि शुभ क्रियाओं से सिर्फ पुण्य बंध ही होता है संसार का ही कारण है तो क्या जिन भगवान् के मुख से निकली हुई वाणी संसार का कारण है? क्या जिन भगवान् अनन्त दुःख स्वरूप संसार में परिभ्रमण करना चाहते हैं? अतः पुण्य संसार का कारण कहना, हेय कहना यह जिन भगवान् की वाणी या श्रुत का अवर्णवाद है।

पुण्य प्रकृति शुभध्यान से अथवा आदि के तीन शुक्लध्यान से भी नष्ट नहीं होती है। केवल अयोग गुणस्थानवर्ती के चरम समय में नष्ट होती है उसके पहले नहीं।

सातावेदनीय उक्कस्साणुभागं बन्धिय खीणकसाय समोगि-अजोगि गुणट्ठाणाणि उवगयरय वेयणीय उक्कस्साणुभागो एदेसु गुणट्ठाणसु लब्धेदि।

साता वेदनीय के उत्कृष्ट अनुभाग को बाँधकर क्षीण कषाय सयोगी और अयोगी गुणस्थान को प्राप्त हुए जीव को इन गुणस्थानों में वेदनीय का उत्कृष्ट, अनुभाग पाया जाता है। (ज.ध.पु. 4 पृ. 17)

सुभाणं कम्माणमणुभाग घादो णत्थि।

शुभ कर्मों का अनुभाग घात नहीं होता है। (ध.पु.पृ. 272)

शुभोपयोग का स्वरूप :-

दव्वत्थिकाय छप्पण तत्त्व पयत्थेसु सत्त णवमेसु।
बन्धण मोक्खे तक्कारणरुवे बारसाणुवेक्खे।।
रयणत्तय सरुचे अज्जाकम्मो दयादि सद्धम्मे।

इच्चेव माइगे जो वट्टदि सो होदि सुहभावो।।

छः द्रव्य, पाँच अस्तिकाय, सात तत्त्व, नव पदार्थ, संसार और उसके कारण रूप, आस्रव बंध और मोक्ष के कारण स्वरूप संवर-निर्जरा बारह अनुप्रेक्षा सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्र रूप रत्नत्रय धर्म जानता है आर्ष कर्म (शुभकर्म) श्रावक और मुनि के यथायोग्य षडावश्यक दान पूजादि सद्धर्म इत्यादि रूप जो उपयोग है वह शुभभाव है। (रयणसार 64-65)

साता पुण्यास्रव-वेदनीय आस्रव के कारण :-

दया दानं तपः शीलं सत्य शौच दमः क्षमा।
वैयावृत्यं विनीतिश्च जिन पूजार्जवं तथा।।
सराग संयमश्चैव संयमासंयमस्तथा।
भूत व्रत्यनुकंपा च सद्वेद्यास्रव हेतवः।।

दया, दान, तप, शील, शौच, इन्द्रिय, दमन, क्षमा, वैयावृत्ति, विनयता, जिनपूजा, सरलता तथा सराग संयम, संयमासंयम, जीवदया आदि सातावेदनीय के कारण हैं। यदि शुभोपयोग को धर्म नहीं मानेंगे तो उपरोक्त समस्त गुणों का अभाव हो जायेगा। जिससे व्यवहार तीर्थ का विच्छेद होगा। व्यवहार तीर्थ का विच्छेद होने से धर्म का लोप होगा। धर्म के लोप से इहलोक सुख स्वर्गादि अभ्युदय सुख लोप होगा।

इतना ही नहीं नीति नियम, सदाचार का लोप होने से देश, राष्ट्र समाज, परिवार में अन्याय, दुराचार चलेगा जिससे बड़ा विप्लव होगा और सर्वत्र अशान्ति ही फैलेगी। इसलिए शान्ति स्थापना के लिए सम्यक् शुभोपयोग अत्यन्त आवश्यक है जो कि मात्र स्वर्गादि अभ्युदय सुख में कारण नहीं बल्कि परम्परा से मोक्ष का भी कारण है।

अनेक आचार्यों ने भी जिनकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की है ऐसे पूज्यपादाचार्य अपने आत्मा को पवित्र करने के लिए जिन भगवान् की स्तुति करते हुए अन्त में यहाँ तक कहते हैं कि

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद्यावन्निर्वाण संप्राप्तिः।।7।। (समाधि भक्ति)

आपके पुनीत चरण मेरे हृदय में एवं मेरा हृदय आपके पवित्र चरणों में रहे!

जगज्जेष्ठ परमाराध्य त्रिलोकाधिपति जिनेन्द्र तब तक रहे, जब तक निर्वाण की प्राप्ति न हो। अर्थात् मैं सदा आपके चरणों का उपासक बन के रहूँ।

पुण्य फल :-

काणि पुण्ण फलाणि?

तित्थयर गणहर रिसि चक्कवट्टि बलदेव वासुदेव सुर-विज्जाहरिद्धिओ।। (ध. 1-2 पृ. 105)

शंका : पुण्य के फल कौन से हैं?

समाधान : तीर्थंकर, गणधर, ऋषि, चक्रवर्ती, देव, बलदेव, वासुदेव और विद्याधरों की ऋद्धियाँ पुण्य के फल हैं।

पाप का स्वरूप -

पाति रक्षति आत्मान् शुभादिति पापम्। असद्वेद्यादि

जो आत्मा को शुभ से बचाता है, वह पाप है।

जैसे-असातावेदनीय। (स. सि.)

पापं नाम अनभिमतस्य पापकं (भ.आ.)

अनिष्ठ पदार्थों की प्राप्ति जिससे होती है ऐसे कर्म को पाप कहते हैं।

पापास्त्रव के कारण -

चरिय पमाद बहुला कालस्सं लोलदा य विसयेसु।

परपरित्तावं पवादो पावस्स य आसवं कुणदि।। (पंचास्तिकाय)

प्रमाद बहुलता से युक्त आचरण लोलुपता, पर को परिताप करना तथा पर के अपवाद बोलना यह सब पाप के आस्त्रव के कारण हैं।

पापबन्ध का कारण :-

अथ देव शास्त्र मुनीनां योऽसौ निन्दा करोति तस्य पाप बन्धो भवति।

देवहं सत्थहं मुणिवरहं जो विद्देसु करेई।

णियमे पाउ हवेइ वसु जे संसारु भमेइ।।62।। (परमात्म प्रकाश)

देव शास्त्र गुरु की जो निन्दा करता है, उससे महान् पाप का बन्ध होता है, वह पापी पाप के प्रभाव से नरक निगोदादि खोटी गतियों में अनन्तकाल तक भटकता है।

वीतराग देव, जिनसूत्र और निर्ग्रन्थ मुनियों से जो जीव द्वेष करता है उसको निश्चय से पाप बन्ध होता है, उस पाप के कारण वह जीव संसार में परिभ्रमण करता है। परंपरा से जो मोक्ष के कारण और साक्षात् पुण्य बन्ध के कारण, जो देव-शास्त्र गुरु हैं इनकी जो निन्दा करता है, उसके नियम से पाप बन्ध होता है, पाप से दुर्गतियों में भटकता है।

निज परमात्म द्रव्य की प्राप्ति की रुचि वही निश्चय सम्यक्त्व उसका कारण तत्त्वार्थ श्रद्धान रूप व्यवहार सम्यक्त्व उसके मूल अरहंत देव निर्ग्रथ गुरु और दयामयी धर्म इन तीनों की जो निन्दा करता है, वह मिथ्यादृष्टि होता है।

वह मिथ्यात्व से महान् पाप बाँधता है, उस पाप से चर्तुगति संसार में भ्रमता है।

सम्यग्दर्शन घातक व्यक्ति -

जिनाभिषेके जिनवै प्रतिष्ठा जिनालये जैन सुपात्रतायाम्।

सावद्यलेशोवदते स पापो स निन्दको दर्शनघातकश्च।। (सार-संग्रह)

जो व्यक्ति जिनेन्द्र भगवान् का अभिषेक, चैत्य-चैत्यालय-निर्माण-प्रतिष्ठा एवं सुपात्र दान में पाप होता है, ऐसा जो प्रतिपादन करता है वह जिन धर्म का निंदक है, सम्यग्दर्शन का घातक है। उपरोक्त क्रियाओं में कुछ आरम्भादि कारणों से अत्यन्तकम पापबंध होता है परन्तु उससे अत्यन्त आत्मविशुद्धि होती है, सम्यग्दर्शन की निर्मलता बढ़ती है, सातिशय पुण्य बन्ध होता है जो कि परम्परा से मोक्ष का कारण है। इस महाफल के आगे जघन्य पाप निष्फल हो जाता है।

अशुभ भाव -

हिसंइसु कोहाइसु मिच्छा णाणेसु पक्खवाएसु।

मिच्छारिएसु मएसु दुरहिवेससु असुहलेसेसु।।(62)

विकहाइसु सद्दहज्झाणेसु असुहगेसु दंडसु।

सल्लेसु गारवेसु य जो वट्टइ असुह भावे सो।। (रयणासार)

हिंसादिक में, क्रोधादि में, मिथ्याज्ञान में, पक्षपात में, मत्सर भाव में, मद में, मिथ्याभिप्रायमतमें, अशुभ लेश्या में, विकथा में, आर्त्त-रौद्र ध्यान में, अशुभकारण

दण्ड में, मिथ्या माया-निदानशल्य में, चार प्रकार के मद में जो प्रवर्तमान होता है, उसे अशुभ भाव कहते हैं। इन्हीं अशुभ भावों से पाप का आस्रव होता है।

दुःखं वधस्तापः क्रन्दनं परिवेदनं।
परात्म द्वितीयस्थानि तथा च परपैशुन।।
छेदनं भेदनं चैव ताडनं दमनं तथा।
तर्जनं भर्त्सनं चैवं सद्यो विशसनं तथा।।
पापकर्मोपजीवित्वं वक्रशीलत्वमेव च।
शस्त्रप्रदानं विश्रम्भं घातनं विष मिश्रणं।
शृंखला वागुरा पाश रज्जुजालादि सर्जनं।
धर्म विध्वंसनं धर्मप्रत्येहकरणं तथा।।
तपस्वी गर्हणं शीलं व्रतप्रच्यावनं तथा।
इत्यसदवेदनीययस्य भवन्त्या स्रव हेतवः।। (तत्त्वसार)

अर्थ : दुःख-अनिष्ट संयोग होने पर दुःख करना।

शोक : इष्ट वियोग होने पर दुःख करना।

वध : प्राणों का वध करना।

ताप : लोक निन्दादि के होने पर संताप करना।

क्रंदन : अश्रुपात करते हुए रुदन करना।

परिवेदन : दूसरों को दया उत्पन्न हो ऐसा जोर-जोर से रोना। जिससे देखकर दूसरा भी रोने लगे।

परपैशुन : दुर्भावना से दूसरों पर दोषारोपण करना।

छेदन : शरीर के अवयवों का छेदन करना। जैसे-बैलों का नाक छेदनादि।

ताड़न : लाठी से मारना।

दमन : दूसरों को भय दिखाना।

तर्जन : दूसरों को दुःख देना।

भर्त्सना : कठोर अभ्रद वचनों से दूसरों की निन्दा करना।

सद्यो विशंसन : छल कपटपूर्वक दूसरों को धोखा देना।

हिंसादि पापकर्म से आजीविका चलाना, कुटिल भाव-मायाचार में प्रवृत्ति, हिंसाजनक शस्त्र दूसरों को काम में देना, विश्वासघात करना, स्वतःदूसरों को विषादि सेवन करके कराके मरण को प्राप्त होना या दूसरों को प्राप्त कराना। पशु-पक्षियों को बन्धन में डालना, धर्मनीति विरुद्ध कार्य करना, धर्मात्माओं के शुभकर्म में विघ्न डालना, तपस्वी-साधुओं की निन्दा करना, झूठे अपवाद लगाना। व्रत नियमों का भंग करना और दूसरे धर्मात्मा पुरुषों को भी व्रत, नियम, संयमादि शुभ-क्रियाओं को करने नहीं देना। इसी प्रकार अनेक धर्मनीति विरुद्ध कार्य करना यह सब असातावेदनीय कर्म बन्ध के कारण हैं।

पाप का फल दुःख व कुगतियों की प्राप्ति

हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम्।।19।।
दुःखमेव वा।।10।।

हिंसादि पाँचों दोषों में ऐहिक और पारलौकिक उपाय और अवद्य का दर्शन में भावने योग्य है। अथवा हिंसादिक दुःख ही है, ऐसी भावना करनी चाहिये। (स.सि.)

असुहोदयेण आदा कुणरोतियों भवीय णेरइयो।
दुक्खसहस्सेहिं सदा अभिंधुदो भमदि अच्चंतां।। (प्र.सा.गा. 12)

अशुभ उदय से कुमानुष, तिर्यंच और नारकी होकर हजारों दुःखों से सदा पीड़ित होता हुआ संसार में अत्यन्त भ्रमण करता है।

काणि पावफलाणि। णिरय-तिरिय कुमाणुस जाइ-जरा-मरण वाहिवेयणा दारिद्दीणि।। (ध.1-1, 1, 2-105-5)

शंका : पाप के फल कौन से हैं?

समाधान : नरक, तिर्यंच और कुमानुष की योनियों में जन्म-मरण व्याधि वेदना और दारिद्री आदि की प्राप्ति पाप के फल हैं।

पाप अत्यन्त हेय है-

ततश्चारित्रलवस्याप्यभावादत्यन्त हेय एवायमशुभोपयोग इति।

चारित्र के लेश मात्र का भी अभाव होने में यह अशुभोपयोग अत्यन्त हेय है। (स.सि.आ. 306)

यस्तावदज्ञानिजन साधारणोऽप्रतिक्रमणादिः स शुद्धात्म सिद्धयाभाव स्वभावत्वेन स्वयमेवाराधत्वाद्विषकुम्भ एव।

प्रथम तो जो अज्ञानी जन साधारण (अज्ञानी लोकों को साधारण ऐसे) अप्रतिक्रमणादि है वे तो शुद्ध आत्मा की सिद्धि के अभाव रूप स्वभाव वाले है। इसलिये स्वयंमेव अपराध स्वरूप होने से विषकुम्भ ही है। क्योंकि वे तो प्रथम ही त्यागने योग्य है।

अशुभ एवं शुभ भावों के फल -

असुहादो णिरयाउ सुहभावादो दुसग्ग सुहमाओ।
दुह-सुहभावं जाणदु जं ते रुद्येद णं कुणहो।

पंचेन्द्रियादि विषय और कषाय रूप अशुभ भावों से नरकादि दुर्गति का दुःख मिलता है और देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति रूपी शुभ भावनाओं से स्वर्गादिक अभ्युदय सुखों की प्राप्ति होती है। सुख और दुःख अशुभ और शुभ भावों पर आधारित है।

हे भव्य आत्मन्! आप को जो अच्छा लगे सो करो। दुःख चाहिये तो अशुभ भाव करो और सुख चाहिये तो शुभ भाव करो। इतना सदैव ध्यान रखो जो तुम कर्म करोगे वह तुम्हें भोगना ही होगा।

पुण्य त्याग करने योग्य व्यक्ति कौन हैं?

अर्थ : प्रभाकर भट्ट कहते हैं यदि जो कोई पुण्य पाप इन दोनों को समान मानकर रहते हैं तो उनके मत में आप दूषण क्यों देते हैं? योगीन्द्र देव कहते हैं जब शुद्धात्मानुभूति स्वरूप तीन गुप्ति से गुप्त वीतराग निर्विकल्प समाधि को पाकर ध्यान में मग्न हुए पुण्य पाप को समान जानते हैं तब तो सम्मत ही है परन्तु जो मूढ़ परम समाधि को न पाकर भी गृहस्थ अवस्था में दान पूजादिक शुभ क्रियाओं को छोड़ देते हैं और मुनि पद में छः आवश्यक क्रियाओं को छोड़ देते हैं वे दोनों तरफ से भ्रष्ट हो जाते हैं। इसलिये उनके मत में जो पुण्य और पाप को समान मानते हुए रहते हैं सो ही दूषण है। (प. प्रकाश पा. 182)

अथ हे जीवजिनेख पदे परम भक्तिं कुर्विति शिक्षां दताति-
''अरि जिय जिण-पइ भति करि सुहि सज्जणु अवेहरि।''
ति बप्पेण वि कज्जु णवि जो पाडइ संसारे।।134।।''

विस इहं कारणि सव्वु जणु जिम अणराउ करेइ।
तिम जिणभासिए धम्मि जइण उ संसारी पडेइ।।

अर्थ : हे आत्मन् अनादिकाल में दुर्लभ जो वीतराग सर्वज्ञ का कहा हुआ राग-द्वेष मोह रहित शुद्धोपयोग रूप निश्चय धर्म और शुभापयोग रूप व्यवहार धर्म उनमें भी छः आवश्यक रूप यति का धर्म, दान पूजादि श्रावक का यह धर्म शुभाचार रूप दो प्रकार धर्म उसमें प्रीति कर। इस धर्म से विमुख जो अपने कुल का मनुष्य उसे छोड़ और उस धर्म के सन्मुख जो पर कुटुम्ब का भी मनुष्य है उससे प्रीति कर। तात्पर्य यह है कि यह जीव जैसे विषय सुख से प्रीति करता है, वैसे जो जिनधर्म में करे तो संसार में नहीं भटके। ऐसा दूसरी जगह भी कहा है कि विषय कारणों में यह जीव बारंबार प्रेम करता है, वैसे जो जिनधर्म में करें तो संसार में भ्रमण न करें। (परमात्म प्रकाश)

यत्प्राग्जन्मनिं संचित्तं तनुभृता कर्मोशुभं वा शुभं।
तद्दैव तदुदीरणानुभवन दुःख सुखं बागतम्।।
कुर्याद्यः शुभमेव सोऽप्यभिमतो यस्तुभयोच्छितये।
सर्वारम्भ परिग्रह परित्यागी स वन्धः सताम्।।262।। (आत्मानुशासन)

अर्थ : प्राणी ने पूर्व भव में जिस पाप या पुण्य कर्म का संचय किया है वह दैव कहा जाता है। उसकी उदीरणा से प्राप्त दुःख अथवा सुख का अनुभव करता हुआ जो बुद्धिमान शुभ को ही करता है। पाप कार्यों को छोड़कर केवल पुण्य कार्यों को ही करता है, वह भी अभीष्ट है प्रशंसा के योग्य है किन्तु जो विवेकी जीव उन दोनों (पुण्य-पाप) को ही नष्ट करने के लिए समस्त आरम्भ व परिग्रह पिशाच को छोड़कर शुद्धोपयोग में स्थित होता है वह तो सज्जन पुरुषों के लिए वंदनीय पूज्य है।

शुभाशुभे पुण्य पापे सुख दुःखे च षट् त्रयम्।
हितमाद्यमनुष्ठेयं शेष त्रयमथाहितम्।।239।।
तत्राप्सद्यं परित्याज्यं शेषौ न स्तः स्वतः स्वयम्।
शुभं च शुद्धे त्यक्त्वान्ते प्राप्नोति परमं पदम्।।240।।

अर्थ : शुभ और अशुभ, पुण्य और पाप, सुख और दुःख इस प्रकार ये छः

हुए। इन छहों के तीन युगलों में से आदि के तीन शुभ, पुण्य और सुख आत्मा के लिये हितकारक होने से आचरण के योग्य हैं। तथा शेष तीन अशुभ-पाप और दुःख अहितकारक होने से छोड़ने के योग्य हैं।

विशेषार्थ : अभिप्राय यह है कि जिनपूजादिक शुभ क्रियाओं के द्वारा पुण्य कर्म का बन्ध होता है। इसके विपरीत हिंसा एवं असत्य संभाषणादिरूप अशुभ क्रियाओं के द्वारा पाप का बन्ध होता है और उस पाप कर्म के उदय के प्राप्त होने पर उससे दुःख की प्राप्ति होती है।

इसलिये उक्त छः में से शुभ पुण्य और सुख ये तीन उपादेय तथा अशुभ पाप और दुःख ये तीन हेय हैं।

पूर्व श्लोक में जिन तीन को शुभ-पुण्य और सुख को हितकारक बतलाया है उनमें भी प्रथम का (शुभ का) परित्याग करना चाहिये। ऐसा करने से शेष रहे पुण्य और सुख ये दोनों स्वयं ही नहीं रहेंगे, इस प्रकार शुभ छोड़कर और शुद्ध स्वभाव में स्थित होकर जीव अन्त में उत्कृष्ट पद (मोक्ष) को प्राप्त हो जाता है।

विशेषार्थ : ऊपर जो इस श्लोक का अर्थ लिखा गया है वह संस्कृत टीका कार प्रभाचन्द्राचार्य के अभिप्रायानुसार लिखा गया है। उपर्युक्त श्लोक का अर्थ इस प्रकार किया जा सकता है। श्लोक 239 में जो अशुभ पाप और दुःख ये तीन अहितकारक बतलाये गये हैं उनमें भी प्रथम अशुभ का ही त्याग करना चाहिये। कारण यह है कि ऐसा होने पर शेष दोनों पाप और दुःख स्वयमेव नहीं रहते हैं इसलिये इनका मूल कारण अशुभ ही हैं। इस प्रकार जब मूल कारणभूत वह अशुभ न रहेगा तो उसके कार्यभूत दुःख की भी कैसे संभावना की जा सकती है, नहीं की जा सकती है। इस प्रकार उक्त अहितकारक तीन के नष्ट हो जाने से शेष तीन जो शुभादि हितकारक रहते हैं वे भी वास्तव में हितकारक नहीं है उनको जो हितकारक व अनुष्ठेय बतलाया गया है वह अतिशय अहितकारी अशुभादिक अपेक्षा ही बतलाया है। यथार्थ में वे भी परतंत्रता के कारण है। भेद इतना ही है कि जहाँ अशुभादिक जीव को नारक और तिर्यंच पर्याय प्राप्त कराकर केवल दुःख का अनुभव कराते हैं वहाँ वे शुभादिक उसको मनुष्यों और देवों में उत्पन्न कराते हैं। दुःख मिश्रित सुख का अनुभव कराते हैं। इसलिये यहाँ यह बतलाया है कि उन अशुभादिक तीन को छोड़ देने के

पश्चात् शुद्धोपयोग में स्थित होकर उस शुभ को छोड़ देना चाहिये। इस प्रकार अन्त में उस शुभ के अविनाभावि पुण्य व सांसारिक सुख के भी नष्ट हो जाने पर जीव उस निर्बाध मोक्ष पद को प्राप्त कर लेता है जो कि अनन्त काल तक स्थिर रहने वाला है।

वरं व्रतै पदं दैवं नाव्रतैर्वत नारकं।

छायातपस्थयोर्भेदः प्रतिपालयतोर्महान्।।3।। (इष्टोपदेश)

अर्थ : व्रतों के द्वारा देव-पद प्राप्त करना अच्छा है किन्तु अव्रतों के द्वारा नरक पद प्राप्त करना अच्छा नहीं है। जैसे-छाया और धूप में बैठने वाले में अन्तर पाया जाता है वैसे ही व्रत और अव्रत के आचरण व पालन करने वालों में फर्क पाया जाता है।

व्रतादिक पालने से पाप कर्मों की निर्जरा होती है और पुण्य कर्म का बन्ध होता है परन्तु पुण्य बन्ध इहलोक व परलोक सुख का कारण है परम्परा से मुक्ति का कारण है।

शुभःशुभानुबन्धीति बन्धच्छेदाय जायते।

पारेपर्येण यो बन्धः स प्रबन्धाद्विधीयते।।54।। (धर्मारत्नाकर)

अर्थ : शुभ भाव से शुभानुबन्धी होता है और शुभानुबन्धी परम्परा से बन्ध छेद के लिये करण हो जाता है। इसलिए शुभानुबन्धी कर्म को प्रचुर रूप से करना चाहिये।

विशेषार्थ : शरीर में काँटा घुसने के बाद उस काँटे को निकालने के लिये एक सुदृढ़ काँटा चाहिये, शरीर स्थित काँटे को जब तक नहीं निकालते तब तक इस सुदृढ़ काँटे की परम आवश्यकता है। शरीर स्थित काँटा निकालने के बाद उस सुदृढ़ काँटे की आवश्यकता स्वयमेव नहीं रहती, उसी प्रकार पाप कर्म रूपी कांटा निकालने के लिए सुदृढ़ पुण्यरूपी काँटा चाहिये, पापरूपी काँटा निकालने के बाद पुण्यरूपी काँटे की आवश्यकता स्वयंमेव हट जाती है। जैसे-मलिन वस्तु के संपर्क से वस्त्र अस्वच्छ हो जाता है। उस अस्वच्छता को हटाने के लिए पानी, साबुन, टिनोपॉल चाहिये। पानी और साबुन के प्रयोग से जब वस्त्र स्वच्छ हो जाता है तब उस वस्त्र पर लगे हुए साबुन को स्वच्छ पानी से धोकर निकाल देते हैं। वस्त्र स्वच्छ होने के बाद उसको टीनोपॉल में डालकर चमकाते हैं। वस्त्र में साबुन और पानी अलग वस्तु

है (परद्रव्य है)। तो भी बिना पानी और साबुन के मलिन वस्त्र स्वच्छ नहीं होता है। परन्तु स्वच्छ होने के बाद साबुन और पानी की आवश्यकता नहीं रहती है। मलिन अवस्था में टीनोपॉल वस्त्र को लगाने पर उसमें चमक नहीं आ सकती है। इसी प्रकार आत्मा को स्वच्छ करने के लिए शुभभावरूपी पानी और पुण्यरूपी साबुन चाहिये। इसके माध्यम से मलिन परमात्मा का पवित्र पुण्यात्मा होने के बाद शुक्लध्यानीरूपी टीनोपॉल से उसको केवलज्ञान रूपी प्रकाश से चमकाना चाहिये। जब तक आत्मा को शुभ भाव और पुण्य से स्वच्छ नहीं करते तब तक शुक्लध्यान रूपी टीनोपॉल का किसी प्रकार परिणाम नहीं हो सकता है। वस्त्र स्वच्छ होने के बाद उस वस्त्र में स्थित पानी को भी निकाल देते हैं। इसी प्रकार अयोग केवली 14वें गुणस्थान की अवस्था में व्युपरत क्रियानिवृतिरूपी परम शुक्ल ध्यान से पुण्यरूपी कण को भी सुखाकर पृथक् करना चाहिये तब जाकर आत्मा निरंजन निष्कलंक होता है।

अहो पुण्यवन्ता पुंसां कष्टं चापि सुखायते।
तस्माद्भव्यैः प्रयत्नेन कार्य पुण्यं जिनोदितः।।

अर्थ : अहो आश्चर्य की बात है कि पुण्यवान् के लिये कष्ट भी सुखकर हो जाता है, इसलिए हे भव्य! जिनेन्द्र भगवान् द्वारा प्रतिपादित पुण्य को तुम प्रयत्नपूर्वक करो।

यस्य पुण्यं च पापं च निष्फलं गलति स्वयम्।
स योगी तस्य निर्वाणं तस्य पुनरास्त्रवः।।246।। आत्मानु.

अर्थ : जिनका कर्म उदय में आकर भी बिना फल दिये खिर जाता है वह योगी है। वह परम वीतरागी होता है। परम वीतरागी मुनि उग्र तप के माध्यम से भविष्य में उदय आने योग्य कर्म को गला देता है। उसी प्रकार मुनीश्वरों को नवीन आस्त्रव या बन्ध नहीं होता है। उस परम वीतरागी मुनीश्वरों का पाप एवं पुण्य स्वयमेव निष्फल होकर खिर जाते हैं और उनको नवीन कर्मास्त्रव बन्ध नहीं होता है। उन्हीं को परम निर्वाण की प्राप्ति होती है।

असुहाण पयडीणं अणंत भागा रस्सस खंडाणि।
सुहपयडीणं णियमा णत्थि त्ति रसस्स खण्डाणि।।80।।

अर्थ : अप्रशस्त अर्थात् पाप प्रकृतियों के अनंत बहुभाग का घात नियम से नहीं होता है क्योंकि विशुद्धि के कारण प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होता है परन्तु घात नहीं होता है। तथा विशुद्धि के कारण पाप प्रकृतियों का अनुभाग उत्तरोत्तर ह्रास को प्राप्त होता है परन्तु वृद्धि को प्राप्त नहीं होता है।

पढमापुव्वरसादो चरिमे समये पसत्थइदराणं।
रससतमणंत गुण अणंतगुण हीणयं होदि।।82।।

अर्थ : अपूर्व करण में प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि होने के कारण प्रशस्त प्रकृतियों का अनंतगुणा बढ़ता अनुभाग सत्व है। तथा विशुद्धि के कारण अनुभाग काण्डक घात के महत्त्व से अप्रशस्त प्रकृतियों का अनन्तवाँ भाग सत्व चरम समय में होता है। इस प्रकार अधःकरण के प्रथम समय संबंधी प्रशस्त प्रकृतियों का जो अनुभाग सत्व है उससे अधःकरण के चरम समय में प्रशस्त प्रकृति का अनुभाग सत्व अपूर्वकरण के प्रथम समय में जितना है उससे अनंतगुणा हीन अपूर्णकरण के चरम समय में है।

इससे सिद्ध होता है कि आत्म विशुद्धि से पुण्य कर्म चौदहवाँ गुणस्थान के नीचे नाश नहीं होते हैं परन्तु वृद्धि को प्राप्त होते हैं। तथा पाप कर्म आत्म विशुद्धि से नाश होता है किन्तु वृद्धि को प्राप्त नहीं होता है। (लब्धि सार)

विशेषार्थ : चतुर्थ गुणस्थान से आगे उत्तरोत्तर पापकर्म का संवर और निर्जरा की वृद्धि हो जाती है। और पुण्य कर्म का आस्त्रव और बन्ध उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होता है। इस प्रकार क्रिया सकषाय गुणस्थान तक (10वें गुणस्थान तक) चलती रहती है। क्षीणकषाय आदि गुणस्थान में पुण्यास्त्रव होता है फिर भी बन्ध नहीं होता है परन्तु पुण्य कर्म तेरहवें गुणस्थान तक नष्ट नहीं हाता है किन्तु बढ़ता ही रहता है। परन्तु परम योगी शैलेश अवस्था को प्राप्त अयोगी केवली गुणस्थान के चरम समय और द्विचरम समय में संपूर्ण पुण्य और पाप कर्मों का समूल विनाश हो जाता है। पाप प्रकृति की यथायोग्य द्वितीयादि गुणस्थान में संवर एवं निर्जरा होती है। परन्तु विशिष्ट पुण्य कर्मों का संवर निर्जरा 14वें गुणस्थान के नीचे होती नहीं है। परन्तु उत्तरोत्तर गुणस्थान में अनुभाग शक्ति बढ़ती जाती है। परन्तु परिनिर्वाण के पूर्ववर्ती समय में संपूर्ण कर्म नष्ट हो जाते हैं।

किनके पुण्य हेय हैं ?

पुण्णेण होइ विहवो विहवेण होई मइ-मोहो।
मइ मोहेण य पाव ता पुण्णं मा होउ।।60।।

अर्थ : पुण्य से घर में धन होता है और धन से अभिमान, मान से बुद्धि भ्रम होता है। बुद्धि में भ्रम होने से (अविवेक से) पाप होता है। इसलिये ऐसा पुण्य हमारा न हो।

'''सत्यं वाचि मतौ श्रुतं हदि दया शौर्य भुजे विक्रमे।
लक्ष्मीर्दानमनूनमर्थिनिचये मार्गे गतिनिर्वृतेः।।
प्राग्जनीहं तेऽपि निरहंकाराः श्रुतेर्गोचराश्चित्रं संप्रति।
लेशतोऽपि न गुणस्तेषां तथाप्युद्धताः।।60।।

भेदाभेद रत्नत्रय की आराधना से रहित देखें, सुने अनुभवे भोगों की वांछारूप निदान बन्ध के परिणामों से सहित जो मिथ्यादृष्टि संसारी अज्ञानी जीव है। उससे पहले उपार्जन किये भोगों की वाछांरूप पुण्य उसके फल से प्राप्त हुई घर के सम्पदा होने से अभिमान (घमंड) होता है, अभिमान से बुद्धिभ्रष्ट होती है, बुद्धि भ्रष्ट कर पाप कमाता है और पाप से भव-भव में अनंत दुःख पाता है। इसलिये मिथ्यादृष्टियों का पुण्य, पाप का ही कारण है। जो सम्यक्त्वादिगुणसहित भरत, राम, पाण्डवादिक विवेकी जीव है उनको पुण्य बन्ध अभिमान उत्पन्न नहीं करता, परंपरा से मोक्ष का कारण है। जैसे-अज्ञानियों को पुण्य का फल विभूति गर्व का कारण है, वैसे सम्यग्दृष्टियों के नहीं है। वे सम्यग्दृष्टि पुण्य के पात्र हुये चक्रवर्ती आदि की विभूति पाकर मद अहंकार आदि विकल्पों को छोड़कर मोक्ष को गये अर्थात् सम्यग्दृष्टि जीव चक्रवर्ती बलभ्रद पद में भी निरहंकार रहे। ऐसा ही कथन आत्मानुशासन ग्रंथ में श्री गुणभद्राचार्य ने किया है कि पहले समय में ऐसे सत्पुरुष हो गये हैं जिनके वचन में सत्य बुद्धि में शास्त्र, मन में दया, पराक्रम रूप भुजाओं में शूरवीरता याचकों को पूर्ण लक्ष्मी का दान और मोक्षमार्ग में गमन है। वे निराभिमानी हुये जिनको किसी गुण का अंहकार नहीं हुआ। उनके नाम शास्त्रों में प्रसिद्ध है। परन्तु अब बड़ा अचम्भा है कि पंचमकाल में लेश मात्र भी गुण नहीं है तो भी उद्धतपना है, यानी गुण तो रंच मात्र भी नहीं और अभिमान में बुद्धि रहती है। (परमात्म प्रकाश)

पाप भी उपादेय है।

अथ येन पापफलेन जीवो दुःखं प्राप्य दुःखविनाशार्थं धर्माभिमुखो भवती तत्पापमपि समीचीनमिति दर्शयतिः।

वर जिय पावइँ सुन्दरइँ णावई ताई भणंति।
जीवहँ दुक्खइँ जाणिवि लहु सिवगई जाई कुणंति।।56।।
वरं जीव पापनि सुन्दराणि ज्ञानिनः तानि भणन्ति।
जीवानां दुःखानि जनित्वा लघुशिवमर्ति यानि कुर्वन्ति।।56।।

अयमत्राभिप्रायः यत्र भेदाभेदारत्नयात्माकं श्री धर्म लभते जीवस्तत्पापजनित दुःखमपि श्रेष्ठमिति कस्मादिति चेत। ''आर्ता नरा धर्म परा भवन्ति'' इति वचनात्।।56।।

अर्थ : आगे जिस पाप के फल से यह जीव नरकादि में दुःख पाकर उस दुःख को दूर करने के लिये सन्मुख होता है, वह पाप का फल भी श्रेष्ठ (प्रशंसा योग्य) है। ऐसा दिखलाते हैं।

हे जीव! जो पाप के उदय से जीव को दुःख देकर शीघ्र ही मोक्ष के जाने योग्य उपायों में बुद्धिकर दे तो वे पाप भी बहुत अच्छे हैं, ज्ञानी ऐसा कहते हैं।

कोई जीव पाप करके नरक में गया वहाँ पर महान् दुःख भोग उससे कोई समय किसी भी जीव के सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जाती है क्योंकि उस जगह सम्यक्त्व की प्राप्ति के तीन कारण है। पहला तो यह है कि तीसरे नरक तक देवता उसे संबोधन को (चेतावने को) जाते हैं। कभी कोई जीव को धर्म सुनने से सम्यक्त्व उत्पन्न हो जावे, दूसरा-कारण-पूर्व भव का स्मरण और तीसरा-नरक की पीड़ाकारी दुःख से दुःखी होना, नरक को महान् दुःख का स्थान जानकर नरक के कारण जो हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह और आरम्भादिक हैं उनको खराब जान के पाप से उदास होगा।

तीसरे नरक तक ये तीन कारण हैं। आगे के चौथे, पाँचवे, छठवें, सातवें नरक में देवों का गमन न होने से धर्मश्रवण तो है ही नहीं लेकिन जातिस्मरण है तथा वेदना कर दुःख हो के पाप से भयभीत होना वे दो ही कारण है। इन कारणों को पाकर किसी

जीव के सम्यक्त्व उत्पन्न हो सकता है। इन नय से कोई भव्य जीव पाप के उदय से खोटी गति में गया वहाँ जाकर यदि सुलट जावे तथा सम्यक्त्व पावे तो वह कुगति भी श्रेष्ठ है। यही योगीन्द्राचार्य ने मूल में कहा गया है जो पाप जीवों को दुःख प्राप्त करा करके फिर शीघ्र ही मोक्षमार्ग में बुद्धि को लगावें, तो वे अशुभ भी अच्छे हैं। तथा जो अज्ञानी जीव किसी समय अज्ञान तप से देव भी हुआ और देव से मरकर एकेन्द्रिय हुआ तो वह देवपना किस काम का? अज्ञानी का देवपना भी वृथा है। जो कभी ज्ञान के प्रसाद से उत्कृष्ट देव हो के बहुत काल तक सुख भोग के देव से मनुष्य होकर मुनिव्रत धारण करके मोक्ष को पावे तो वह भी अच्छा है।

ज्ञानी पुरुष उन पापियों को भी श्रेष्ठ कहते हैं, जो पाप के प्रभाव से दुःख भोगकर उस दुःख से डर के दुःख के मूल कारण पाप को जान के उस पाप से उदास होवे, वे प्रशंसा करने योग्य हैं और पापी जीव प्रशंसा के योग्य नहीं है। क्योंकि पाप क्रिया हमेशा निंदनीय है। भेदाभेदरत्नत्रय स्वरूप श्री वीतराग देव के धर्म को जो धारण करते हैं वे श्रेष्ठ हैं। यदि सुखी धारण करे तो भी ठीक और दुःखी धारण करते हैं तब भी ठीक, क्योंकि शास्त्र का वचन है कि कोई महाभाग दुःख हुए ही धर्म में लवलीन होते हैं। (परमात्म प्रकाश)

दुःख में सुमिरन सब करै, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे, दुःख काहे को होय।।

अर्थः-साधारण संसारी जीव दुःख के समय में धर्म का आचरण करता है। परन्तु धर्म के कारण किंचित् सुख प्राप्त होने से धर्म को ही भूल जाता है। पापादिक क्रियाओं में लग जाता है, तब पुनः दुःख प्राप्त होता है। यदि जीव सुख के समय में भी धर्म आचरण करने लगेगा तो कभी भी दुःख नहीं होगा।

कृत्वा धर्मविघातं विषयासुखान्यनुभवन्ति ये मोहात्।
आच्छिय तरुन् मूलात् फलानि गृणन्ति ते पापाः।।24।।

अर्थः-जो मोही कामअंधा, विषयासक्त, जीव अज्ञानता से धर्म को नष्ट करके विषय सुखों का अनुभव करते हैं वे पापी वृक्ष को जड़ से उखाड़कर फल को ग्रहण करना चाहते हैं। अर्थात् पूर्व पुण्य कर्म के उदय से जो कुछ पूर्व उपार्जित पुण्य को पूर्णरूप से भोग करता है। परन्तु नवीन पुण्यार्जन नहीं करता जिससे पाप ही पाप

उसके पल्ले में रहता है। उससे वह नरक निगोद में जाता है। इसलिये पूर्वार्जित पुण्य से वैभव मिला उसको बिना त्यागे भोग करने से उस पुण्य से उसकी दुर्गति हुई इस प्रकार से पुण्य हेय हैं। (आत्मानुशासन)

मिथ्यादृष्टि को पापनुबन्धी पुण्य से जो वैभव की प्राप्ति होती है उस वैभव में मिथ्यादृष्टि लीन होकर आसक्ति पूर्वक भोग करता है किन्तु त्याग नहीं करता उसका वैभव अर्थात् पुण्य फल संसार का कारण है। इसलिये उसका पुण्य कर्म परम्परा से मोक्ष का कारण नहीं है किन्तु संसार का कारण होता है अर्थात् पुण्य फल रूप वैभव को प्राप्त कर जो आसक्तिपूर्वक भोगता है वह मिथ्यादृष्टि है। रागी बहिरात्मा है। सम्यग्दृष्टि का पुण्य ही पुण्यानुबंधी पुण्य है, सम्यग्दृष्टि पुण्यरूप वैभव को प्राप्त कर उसमें आसक्ति पूर्वक लीन नहीं होता है।

वह सोचता है, जानता है, मानता है कि वैभव मेरे आत्म स्वरूप से पृथक् है पुण्य कर्म का फल है कुछ चारित्र कर्म के उदय से आत्मिक शक्ति अभाव से रोगी जैसे तिक्त औषध सेवन करता है अनासक्तपूर्वक उसी प्रकार वह सम्यग्दृष्टि भोग को रोग मानकर निरुपाय होकर अनासक्तपूर्वक भोगता है। वह अनासक्तपूर्वक भोगते हुए कर्म को बाँधता ही है परन्तु जितने अंश में अनासक्त भाव है उतने अंश में कर्म बंध नहीं होता है। परन्तु अंतरंग में सतत भोगों की निन्दा गर्हा करते हुए उन भोगों से छूटने के लिए रास्ता ढूँढ़ता रहता है।

जब तक जीव सम्पूर्ण भोग, आरम्भ, परिग्रहों से विरक्त नहीं हो पाता है तब तक स्वशक्ति के अनुसार दान, पूजा, गुरु सेवादि करते हुए पूर्व पुण्य का सदुपयोग करता है और अंत में समस्त अंतरंग-बहिरंग परिग्रह को त्याग कर निर्ग्रंथ होकर व्यवहार-निश्चय रत्नत्रय का साधन कर मोक्ष पदवी को प्राप्त करता है। इसलिये सम्यग्दृष्टि का पुण्य परम्परा से मोक्ष का कारण है तथा मिथ्यादृष्टि का पुण्य परम्परा से संसार का कारण है।

''**आर्त नरा धर्मपरा भविन्त**'' पाप कर्म के उदय से जीव को जब कष्ट उठाना पड़ता है उस समय में वह पाप कर्मों का स्वरूप समझकर पाप से निवृत्त होकर धर्म में लगता है। जैसे नरक में तीव वेदना का अनुभव कर नारकी पाप फलों का चिंतवन करके सम्यग्दृष्टि हो जाता है, इसी प्रकार जीव पापकर्म के फल से संतप्त

होकर पाप से डरकर अधर्म छोड़कर धर्म करने लगता है। इसलिये संसार में विरक्त होने के लिये एवं धर्म में प्रवृत्ति होने के लिए पापकर्म भी निमित्त है अर्थात् जिस पाप फलों के दुःखों से, संताप से, संकटों से जीव भयभीत होकर धर्म में लगते हैं वह पाप भी उपादेय है। इसलिये भव्य जीवों को संबोधन करते हुए आचार्यों ने प्रेरणा दी है।

''सुखितस्य दुःखितस्य च संसारे धर्म एवं तव कार्य।
सुखितस्यतद्भिवृद्धर्यैदुःखभुजस्तदुपघाताय।।18।।''

अर्थ : हे जीव! तू चाहे सुख का अनुभव कर रहा हो, चाहे दुःख का अनुभव कर रहा हो, किन्तु संसार में इन दोनों ही अवस्था में एक मात्र कार्य धर्म ही होना चाहिये। कारण यह है कि वह धर्म यदि तू सुख का अनुभव कर रहा है तो तेरे उस सुख का कारण होगा और यदि तू दुःख का अनुभव कर रहा है तो वह धर्म तेरे उस दुःख के विनाश का कारण होगा।

कड़ा कानून : केन्द्र सरकार ने जारी की अधिसूचना, 4 कानूनों में किया संशोधन

मासूमों से दुष्कर्म पर मौत की सजा के अध्यादेश को राष्ट्रपति ने दी मंजूरी

देश में मासूमों से दुष्कर्म के दोषियों को मौत की सजा देने के प्रावधान वाले अध्यादेश को राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद ने रविवार को मंजूरी दे दी। इस संबंध में केन्द्र ने अधिसूचना भी जारी कर दी है। अब यह अध्यादेश लागू हो गया है। इसमें 12 साल तक के बच्चों से दुष्कर्म करने वाले दोषियों को मौत की सजा का प्रावधान किया गया है। पीएम नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में शनिवार को केन्द्रीय कैबिनेट ने 'आपराधिक कानून संशोधन अध्यादेश 2018' को मंजूरी दी थी। इसके जरिए चार कानूनों- आईपीसी, सीआरपीसी व यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण (पॉक्सो) अधिनियम में संशोधन किया गया है। इस अध्यादेश को संसद के मानसून सत्र में पेश कर कानून बनाया जाएगा। अध्यादेश की अधिसूचना में कहा गया है, 'संसद का सत्र नहीं चल

रहा है और राष्ट्रपति मानते हैं कि मौजूदा हालात में अध्यादेश को मंजूरी देना जरूरी है।'

अध्यादेश में प्रावधान : आरोपी को अग्रिम बेल नहीं

- 12 साल तक की बच्चियों से दुष्कर्म के दोषी को कम से कम 20 साल, उम्रकैद और मौत की सजा दी जाएगी।
- 12 साल तक की बच्चियों से सामूहिक दुष्कर्म के दोषी को कम से कम उम्रकैद या मौत
- 16 साल तक की लड़की से सामूहिक दुष्कर्म पर उम्रकैद
- 16 साल तक की लड़की से दुष्कर्म पर कम से कम 20 साल की सजा
- 16 साल तक की लड़की से दुष्कर्म के आरोपियों को अग्रिम जमानत नहीं
- आरोपी की जमानत अर्जी पर सुनवाई से 15 दिन पहले अभियोजक और पीड़िता व उसके परिजन को सूचना देना कोर्ट की जवाबदेही
- नाबालिगों से दुष्कर्म के केस में फास्ट ट्रैक कोर्ट बनेगी
- दुष्कर्म केस की जाँच 2 माह में पूरी करनी होगी
- छह महीने के भीतर अपील का निपटारा करना होगा
- पूरा मामला कुल 10 महीने में निपटाना अनिवार्य

डेडलाइन : छह माह में कानून बनाना जरूरी

नियमों के अनुसार राष्ट्रपति की मंजूरी और अधिसूचना जारी होने के बाद अध्यादेश लागू हो जाता है। कानून बनाने के लिए छह माह के भीतर इसे संसद से पारित कराना जरूरी होगा।

शर्मनाक : देश में रोजाना 55 बच्चियों से दुष्कर्म

- 55 बच्चियों के साथ प्रतिदिन दुष्कर्म हो रहा
- 2016 के आँकड़ों के अनुसार बाल यौन उत्पीड़न एक लाख मामले लम्बित
- 84 प्रतिशत अपराध बढ़े बच्चों के खिलाफ 2013 से 2016 के बीच
- 34 प्रतिशत बाल यौन उत्पड़ीन के मामले 2016 में दर्ज हुए
- 36.657 मामले 2016 में बच्चियों और महिलाओं के साथ दुष्कर्म के दर्ज,

इनमें से 34, 650 यानी 94 प्रतिशत आरोपी पीड़िताओं के परिचित

- 2014-16 में 30 प्रतिशत केस में अपराधी दोषी साबित हुए पॉक्सो में और 2015 में 36 प्रतिशत दोषसिद्धि हुई।

दुष्कर्म पर हल्ला मचाने की जरूरत नहीं : गंगवार

ऐसी घटनाएँ दुर्भाग्यपूर्ण है। कभी-कभी आप इन पर रोक नहीं लगा सकते। भारत जैसे बड़े देश में दुष्कर्म की एक-दो घटनाएँ होने पर इतना शोर-शराब मचाने की जरूरत नहीं है। यह अच्छी बात नहीं है।

- संतोष गंगवार, केन्द्रीय मंत्री

भगोड़े आर्थिक अपराधियों की संपत्ति जब्त होगी

राष्ट्रपति रामनाथ कोविन्द ने आर्थिक अपराध करके विदेश भागने वालों की संपत्ति जब्त करने के अध्यादेश को भी मंजूरी दे दी है। इससे नीरव मोदी, मेहुल चौकसी व माल्या जैसे देश छोड़कर भागने वाले कर्जखोरों की संपत्ति जब्त की जा सकेगी।

हिंसा का वैश्विक रूप

(हिंसा से भाव-मन-तन-वचन-धन-साधन-पर्यावरण की हानियाँ)

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : 1. आत्मशक्ति...2. क्या मिलिए)

हिंसा के वैश्विक स्वरूप को जानो, भाव-द्रव्य रूप से इसे पहचानो,
भाव से/(मैं) प्रारम्भ होती है हिंसा, यथा बीज बने हैं विशाल वृक्ष।।
आत्म परिणाम हिंसा से (में) भाव हिंसा, पंच दश प्रमाद है भाव हिंसा।
भाव हिंसा सहित होती द्रव्य हिंसा, स्व पर प्राण विच्छेदन है हिंसा।।(1)

क्रोधमान माया लोभ चार कषाय, भोजन राज चोर स्त्री रूपी चार विकथा।
पाँचों इन्द्रिय आसक्ति भी हिंसा, निद्रा व प्रणय सहित पंचदश प्रमाद।।
अतएव क्रोधी होता भाव हिंसक, अहंकारी भी होता है भाव हिंसक।
मायाचारी भी होता है भाव *हिंसक, लोभी भी होता है भाव हिंसक।।(2)*

आसक्ति/(राग) पूर्वक भोजनादि कथा करने वाले, होते भाव हिंसक आगम कहे।
निद्रा में न होती आत्म जागृति, अतः निद्रा भी भाव हिंसा होती।।
प्रणय में जीव होते कामासक्त, अतएव भोगासक्त होते भाव हिंसक।
प्रणय में मरते जीव भी नवलक्ष्य, अतएव प्रणय द्रव्य-भाव हिंसा युक्त।।(3)

उक्त कारण सहित जीव हिंसक, द्रव्य हिंसा बिना भी होते हिंसक।
उक्त कारण रहित जीव अवश्य अहिंसक, द्रव्य हिंसा होने पर भी अहिंसक।।
यथा निगोदिया आदि एकेन्द्रिय जीव, द्रव्य हिंसा बिना भी होते हिंसक।
एकेन्द्रिय अवश्य होते मिथ्यादृष्टि, पंचदश प्रमाद युक्त होते मिथात्वी।।(4)

प्रमाद रहित ध्यानस्थ मुनि न होते हिंसक, उपसर्ग से उनके देह से मरे भी जीव।
यथा कोई दुष्ट जीव उन्हें फेंका अन्यत्र, जिससे उनके देह से मरे भी जीव।।
असिमसि कृषि व्यापार सेवा शिल्प, प्रमाद सहित जीव करे अवश्य।
इससे होती भाव-द्रव्य हिंसा, नरक जाते बहुआरंभ परिग्रह युक्त।।(5)

प्रमाद से ही होते सम्पूर्ण पाप, हिंसा झूठ चोरी कुशील परिग्रह।
आक्रमण-युद्ध-हत्या आतंकवाद, मिलावट से ले भ्रष्टाचार तक।।
प्रकृति दोहन से ले शोषण तक, अन्याय-अत्याचार व मिथ्याचार।
समस्त समस्याएँ इससे उत्पन्न, इहपरलोक में मिले दुःख विभिन्न।।(6)

तन-मन-धन-साधन-पर्यावरण, हिंसा से सभी का होता विनाश।
हिंसा विनाश तो अहिंसा ही अमृत, 'कनक सूरी' चाहे अहिंसा से विकास।।(7)

सागवाड़ा दि. 12.06.2018 समय रात्रि 9:30

दुष्कर्म पीड़िताओं को धीमे न्याय के खिलाफ

जब मेरा रेप हुआ तब मैं...

एक धार्मिक स्थल में थी जहाँ बड़ी संख्या में लोग मौजूद थे
मैं करीबी रिश्तेदार के साथ थी
जब तक हर जिले में पॉक्सो कोर्ट नहीं खुल जाती, तब तक व्यवस्था पर लगातार हमला

क्या आपको पता है? हमारी बच्चियों के लिए सबसे खतरनाक जगह कौनसी है?...जवाब है : घर। सबसे असुरक्षित हाथ कौन से हैं : हमारे अपनों के हाथ...। यह सच भरोसा तोड़ देने वाला है। रेप कहाँ हुआ...यह जाँच का सबसे अहम सवाल होता है। भास्कर ने भी इसी सवाल का जवाब तलाशने के लिए 743 एफआईआर पढ़ीं। जो सच सामने आया...वो डराने वाला था। **घर, ट्यूशन सेंटर...यहाँ तक कि धार्मिक स्थल भी इस पाप से नहीं बच पाए हैं।**

नेशनल क्राइम रिकॉर्डर्स ब्यूरो की 2015 की एक रिपोर्ट के अनुसार दुष्कर्म के 95 प्रतिशत मामलों में गुनहगार परिचित ही निकले। परिचित भी कौन...पिता, भाई, दादा जैसे रिश्ते, रोज घर आने वाले नजदीकी। दरअसल न कोई जगह सुरक्षित है...न असुरक्षित...। न उम्र मायने रखती है, न जगह। यह सिर्फ दूषित मानसिकता है जिसका खामियाजा बच्चियों को भुगतना पड़ता है।

काश! वे दीवारें, कमरे, सीढ़िया भी गवाही दे पाते

भास्कर ने 743 एफआईआर पढ़ी हैं, दुष्कर्म के अनगिनत मामलों को देखते हुए ये सिर्फ प्रतिनिधि चेहरा हैं। ये एफआईआर हमारे समाज का सबसे कड़वा सच सामने रखती हैं। एफआईआर बताती हैं कि किस तरह 55 प्रतिशत मामलों में घर बच्चियों के लिए सबसे खतरनाक जगह बने हुए हैं।

देखिए...कैसे न उम्र मायने रखती है, न रिश्ते, न जगह

18 से कम उम्र की 700 बच्चियाँ हर साल शिकार

उदाहरण के तौर पर 2016 के आँकड़ें देखें। दुष्कर्म के कुल 3656 केस दर्ज किए गए। इनमें से छह मामलों में तो पीड़िताएँ इतनी छोटी थीं कि वे ठीक से बता भी नहीं सकती थीं कि उनके साथ हुआ क्या है? ये वो मामले थे, जिनमें छह साल तक की बच्चियों से दुष्कर्म किया गया था। इन्हीं में से 37 मामले ऐसे थे, जब दरिन्दों ने 6 से 12 साल तक की उम्र की बच्चियों को निशाना बनाया। इसी साल 195 मामले ऐसे थे जब 12 से 16 साल की बच्चियों से रेप की घटनाएँ हुई। इसी तरह 529 मामलों में 16 से 18 साल की बच्चियों से दुष्कर्म किया गया। 2879 केस ऐसे थे, जब 18 साल से ऊपर की युवतियों से दुष्कर्म किया गया।

147 मामले ऐसे, जहाँ पिता, दादा, भाई आरोपी

2016 के दुष्कर्म के मामलों के आँकड़ें देखे तो डराने वाली स्थिति सामने आती हैं। 147 मामले ऐसे थे, जहाँ सबसे नजदीकी रिश्तेदार यानी पिता, दादा, भाई या बेटा ही दुष्कर्म के आरोपी थे। 139 मामलों में इनसे इतर पारिवारिक सदस्य आरोपी पाए गए। दुष्कर्म की 269 घटनाओं को उन रिश्तेदारों ने अंजाम दिया जो पीड़िता के घर अक्सर आया जाया करते थे। 704 मामलों में पड़ोसी आरोपी पाए गए। इसी तरह यह रिपोर्ट साथी कर्मचारियों पर भी भरोसा खत्म करती है। 46 मामलों में मालिक या सहकर्मी के खिलाफ केस दर्ज हुआ। सिर्फ 30 मामले ही ऐसे थे जब किसी अनजान पीड़िता से दुष्कर्म किया।

यह सच है कि अगर...पॉक्सो अदालतें हर जिले में खुल भी जाए तो भी हमारे घरों और रिश्तों के हाथों को सुरक्षित नहीं बना सकती, लेकिन ये अदालतें ही हैं जो न्याय का भरोसा देती हैं...। दुष्कर्मी की आँखों में आँखें डालकर उन्हें सजा के अंजाम तक पहुँचाने की ताकत होती हैं। अगर हम पीड़िताओं को इंसाफ का हक भी नहीं दे सकते तो शायद हमें मानवीय कहलाने का कोई अधिकार नहीं है।

एकदेश चारित्र और सकलचारित्र के स्वामी

निरतः कात्स्न्र्य-निवृत्तौ भवतियातिः समयसारभूतोऽयम्।
यात्वेकदेश विरतिः निरतस्तस्यामुपासको भवति।।41।। पुरु.सि.

When engaged in complete abstention one becomes a saint, the personification of pure Jiva. He who is engaged in partial restraint only would be a disciple.

व्याख्या-भावानुवाद : जो मुनि हिंसादि पापों को पूर्णतः त्याग करता है वह जिनमत में समयसार स्वरूप है। एक देश विरति रूप श्रावक मुनियों के उपासक है। श्रावक त्रस हिंसा से विरक्त है तथा स्थावर हिंसा से अविरक्त है। इसी प्रकार अन्य पाँचों पापों का त्याग भी आंशिक रूप से करता है इसलिये वह विरताऽविरत रूप है।

हिंसा का विश्वस्वरूप

आत्म-परिणाम-हिंसन हेतुत्वातत्सर्वमेव हिंसैतत्।
अनृत-वचनादि-केवलमुदाहृतं शिष्य-बोधाय।।42।।

All this indulgence is 'Himsa' because it injures the real nature of Jiva. Falsehood, etc. are only given by way of illustravation for the instruction of the disciple.

व्याख्या-भावानुवाद : जिससे आत्मपरिणाम का हिंसन/हनन होता है वह सब हिंसा ही है। असत्य आदि पापों का कथन प्राथमिक कम बुद्धि वाले शिष्यों को समझाने के लिए उदाहरण के रूप में बताया गया है। प्रमाद से युक्त कषाय से संयुक्त जीव के परिणाम ही हिंसा के लिये कारण होता है। असत्य आदि पाप हिंसा की ही अवस्थान्तर है। तथापि शिष्यों को समझाने के लिये असत्य आदि पापों का भी कथन किया जाता है। पन्द्रह प्रकार के प्रमादों से आत्मा के परिणाम कलुषित होते हैं, मलिन होते हैं इसलिये यह प्रमाद ही हिंसा है।

हिंसा का विश्व लक्षण

यत्खलुकषाय-योगात् प्राणानां द्रव्य भावरूपाणां।
व्यपरोपणस्य करणं सुनिश्चिता भवति सा हिंसा।।43।।
अघ्नन्नापि भवेत्पापी: निघ्नपापी: न पापभाक्।
परिणाम-विशेषण यथा धीवर-कर्षकौ।।1।।
स्वयमेवाऽऽत्मनाऽऽत्मानं हिनस्त्यात्माप्रमादतः।
पूर्वं प्राण्यंतराणां च पश्चात्स्याच्च न वा वधः।।2।।

Any injury whatsoever to the material or conscious vitalities caused through passionate activity of mind, body or speech is Hims A, assuredly

व्याख्या-भावानुवाद : निश्चय से कषाय के योग से द्रव्य भाव रूप प्राणों का हनन होना हिंसा है। निश्चय से कषाय के योग से अर्थात् क्रोध, मान आदि चार कषाय हास्यादि नोकषाय के योग से इन्द्रिय श्वासोच्छ्वास शरीर आदि द्रव्य प्राण तथा ज्ञान आदि भाव प्राणों का हनन करना या उन्हें पीड़ा देना हिंसा है। इन द्रव्य एवं भाव प्राणों

का प्रमत्त योग से व्यपरोपण करना, विनाश करना, वियोजन करना निश्चय से हिंसा हे। गोम्मट्टसार में कहा भी है -

पाँच इन्द्रिय प्राण, मन, वचन, काय रूप तीन बल प्राण श्वासोच्छ्वास एवं आयु मिलाकर के दस प्राण होते हैं। इस गाथा कथित यथायोग्य दसों प्राण का वियोग करना या उन्हें क्षति पहुँचाना हिंसा है। यहाँ पर परिणाम को प्राधान्यता दी गई है। धर्म संग्रह में भी कहा गया है -

जिससे कोई जीव का घात नहीं हुआ वह भी पापी हो सकता है तथा जिससे जीव का घात हुआ है वह भी पाप से रहित हो सकता है। जिस प्रमार धीवर ने जाल बिछाया परन्तु एक भी मछली नहीं पकड़ पाया तो भी वह हिंसक ही है और खेत में काम करते हुए किसानों से अनेक क्षुद्र जीव मर जाते हैं तो भी वह अहिंसक है। क्योंकि धीवर का परिणाम मछली पकड़ने का है और किसान का परिणाम अन्न उत्पादन करने का है। दोनों के परिणाम भिन्न-भिन्न होने के कारण उसके फल भी भिन्न-भिन्न होते हैं। प्रमाद के कारण स्वयंमेव ही स्वयं की आत्महत्या पहले कर लेता है। पश्चात् दूसरों की हिंसा करे या ना करे। प्राणियों की हिंसा अधर्म का कारण है ऐसा जानना चाहिए।

अहिंसा और हिंसा का भावात्मक लक्षण

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति।
तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः।।44।।

Assuredly, the non-apperance of attachment and other (passions) is Ahimsa, and their appearance is Himsas. This is a summary of the Jaina scripture.

व्याख्या-भावानुवादः राग-द्वेष आदि दूषित परिणाम का आत्मा में उत्पन्न नहीं होना निश्चय से अहिंसा है। इसी ही राग-द्वेष आदि दूषित परिणामों का उत्पन्न होना जिनागम में संक्षिप्त से हिंसा कहा है। जिनागम का संक्षेप या सार यह है कि अप्रयत्न रूप से आचरण करना हिंसा है एवं प्रयत्नपूर्वक आचरण करना अहिंसा है।

प्राणघात से भी यत्नाचारी हिंसक नहीं

युक्ताचरणस्य सतो रागाद्यावेशमंतेरणापि।

न हि भवतिजातु हिंसा, प्राणव्यपरोपणादेव।।45।।

There never is Himsa when vitalities are injured, if a person is not moved by any kind of passions and is carefully following Right conduct.

व्याख्या-भावानुवाद : जो प्रयत्न आचरण से युक्त है तथा रागादि आवेश से रहित है उससे हिंसा नहीं होती है। युक्त आचरण से सहित मुनीश्वरों को रागादि भावों के आवेश के बिना कदाचित् प्राण व्यपरोपण होने पर भी हिंसा नहीं होती है।

अयत्नाचारी प्राणघात के बिना भी हिंसक

व्युत्थानावस्थायां, रागादीनां वश प्रवृत्तानाम्।
म्रियतां जीवो मा वा धावत्यग्रे ध्रुवं हिंसा।।46।।

And, if one acts carelessly, moved by influence of passions, there certainly advances Himsa in front of him whether a living being is killed or not.

व्याख्या-भावानुवाद : राग आदि परिणाम से वशीभूत जीव प्रमाद अवस्था में रहते हुए दूसरे जीव मरें या नहीं मरें अवश्य हिंसक होता है। आचार्य श्री ने इस प्रकरण में कहा कि राग आदि परिणाम से वशीभूत जीवों के तथा प्रमाद से सहित जीवों के आगे-आगे हिंसा दौड़ती रहती है। इसका रहस्य यह है कि वह अवश्यमेव हिंसक होता है अर्थात् त्रस-स्थावर जीवों के प्राणों का हनन करने वाले या नहीं करने वाले भी प्रमादी जीव अवश्य ही हिंसक होते हैं।

समीक्षा : आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने भी प्रवचनसार (सत्यसाम्यसुखामृतम्) में कहा भी है :-

मरदु व जियदु व जीवो अयदाचारस्स णिच्छिदा हिंसा।
पयदस्स णत्थि बंधो हिंसामेत्तेण समिदस्स।।217।।

(जीवो मरदु व जियदु) जीव मरे या जीता रहे (अयदाचारस) जो यत्न पूर्वक आचरण से रहित है उसके (णिच्छिदा हिंसा) निश्चय हिंसा है (समिदरस्स) समितियों में (पयदस्स) जो प्रयत्नवान् है उसके (हिंसामेत्तेण) द्रव्य प्राणों की हिंसा मात्र से (बंधों णत्थि) बंध नहीं होता है।

बाह्य में दूसरे जीव का मरण हो या मरण न हो जब कोई निर्विकार स्वसंवेदन रूप प्रयत्न से रहित है तब उसके निश्चय शुद्धचैतन्य प्राण का घात होने से निश्चय हिंसा होती है। जो कोई भली प्रकार अपने शुद्धात्मस्वभाव में लीन है, अर्थात् निश्चयसमिति को पाल रहा है तथा व्यवहार में ईर्या, भाषा, एषणा, आदान निक्षेपण, प्रतिष्ठापना इन पाँच समितियों में सावधान है, अंतरंग बहिरंग प्रयत्नवान् है, प्रमादी नहीं है उसको बंध नहीं होता है। यहाँ यह भाव है कि अपने आत्मस्वभाव रूप निश्चयप्राण का विनाश करने वाली रागादि परिणति निश्चय हिंसा कही जाती है। रागादिक उत्पन्न करने के लिये बाहरी निमित्त रूप जो परजीव का घात है सो व्यवहार हिंसा है, ऐसे दो प्रकार हिंसा जाननी चाहिए, किन्तु विशेष यह है कि बाहरी हिंसा हो या न हो जब आत्मस्वभाव रूप निश्चय प्राण का घात होगा तब निश्चय हिंसा ही मुख्य है।

उच्चलियम्हि पाए इरियासमिदस्स णिगमत्थाए।
आबाधेज्ज कुलिंगं अरिज्जं तं जोगमोसेज्ज।।(217/1)
ण हि तस्स तण्णिमित्ते बंधो सुहुमो य देसिदो समये।
मुच्छापरिग्गहोच्चिय अज्झप्पमाणदो दिट्ठे।। (217) प्रवचनसार

आगे इसी ही अर्थ को दृष्टान्त से दृढ़ करते हैं:-

(इरियासमिदस्स) ईर्या समिति से चलने वाले मुनि के (णिग्गमत्थाएँ) किसी स्थान से जाते हुए (उच्चलियम्हि पाए) अपने पग को उठाते हुए (तं जोगमासेज्ज) उस पग के संघट्टन के निमित्त से (कुलिंग) कोई छोटा जन्तु (आवाधेज्ज) बाधा को पावे (मरिज्ज) या मर जावे (तस्स) उस साधु के (तण्णिमित्तो सुहमो या बंधो) इस क्रिया के निमित्त से जरासा भी कर्म का बंध (समये) आगम में (णमि देसिदो) नहीं कहा गया है। जैसे (मुच्छापरिग्गहोच्चिय) मूर्छा को परिग्रह कहते हैं सो (अज्झयप्पमाणदो दिट्ठो) अंतरंग भाव के अनुसार मूर्च्छा देखी गई हैं।

आचार्य श्री ने इस गाथा में हिंसा एवं अहिंसा की यथार्थ सूक्ष्म व्यापक आगमोक्त परिभाषा दी है। धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य निश्चय से स्वयं के ऊपर अवलम्बित है दूसरों पर अवलम्बित नहीं है। भले निमित्त और भी कुछ हो सकता है। स्वशुद्ध आत्मस्वरूप से विचलित होना च्युत होना ही हिंसा है। आत्मस्वरूप से च्युत होना ही अयत्नाचार है, प्रमाद है। इसलिये कहा गया है कि ''प्रमत्तयोगात्-प्राणव्यपरोपणं हिंसा''

प्रमाद के योग से भाव प्राण एवं द्रव्य प्राणों को क्षति पहुँचाना, नष्ट करना हिंसा है। प्रमाद योग से रहित वस्तुतः हिंसा होती नहीं भले द्रव्य हिंसा हो, क्योंकि आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष भाव के ऊपर ही अवलम्बित है, भले इसके लिये बाह्य निमित्त और कुछ भी हो। कुन्दकुन्द देव ने समयसार में कहा भी हैः-

अज्झवसिदेण बंधो सत्ते मारेहिं मा व मारे हि।

एसो बंधसमासो जीवाणं णिच्छयणयस्स।।(274) प्र.सार

निश्चयनय का कहना है कि जीवों को मारो या न मारो, किन्तु जीवों के मारने रूप भाव से कर्मों का बंध तो होता है। यही बंधत्व का संक्षेप है।

निश्चयनय से प्रत्येक जीव अजर, अमर, शाश्वतिक है। इसलिये कोई किसी को नहीं मार सकता है। अशुद्धनिश्चयनय से स्वयं की हिंसा स्वयं ही कर सकता है क्योंकि अशुद्ध निश्चय नय से जो रागद्वेष, मोह परिणाम होते हैं उनसे स्वस्वरूप की हिंसा हो जाती है। इसलिये अशुद्ध निश्चयनय से स्वयं की हिंसा स्वयं करता है और इस भाव से दूसरों के द्रव्यप्राण एवं भावप्राण को क्षति पहुँचाता है अतः उसे हिंसा कहते हैं। इसलिये वस्तुतः स्वअध्यवसाय, स्वप्रमाद या स्वअयत्नाचार ही हिंसा है।

उपर्युक्त समस्त सिद्धान्तों से यह सिद्ध होता है कि भाव निर्मलता/पवित्रता ही वस्तुतः अहिंसा है और भावों की मलिनता, अपवित्रता ही हिंसा है। जिनकी भावों में निर्मलता होगी अर्थात् भाव अहिंसा होगी वे द्रव्य हिंसा भी नहीं कर सकते हैं। कथंचित् उनसे द्रव्य हिंसा हो जाती है परन्तु जो भाव हिंसक हैं उनसे द्रव्य हिंसा हो या नहीं हो वे निश्चय ही हिंसक है। जिस प्रकार आत्मा को पवित्र करने के लिए जो उपवास करते हैं उस उपवास के कारण उदर व शरीरस्थ अनेक जीव मरते हैं। छद्मस्थ के शरीर में अनंत बादर निगोदिया जीव व अनेक त्रस जीव भी रहते हैं परन्तु वही जीव जब केवली बन जाता है तो उनके शरीरस्थ अनंत जीव ध्यानरूपी अग्नि से कुछ निकल भी जाते हैं कुछ मर भी सकते हैं तथापि आत्मकल्याण के लिए उपवास करने वालों को एवं शुक्लध्यान करने वालों को जीवहिंसा जनित दोष नहीं लगता है न पाप बन्ध ही होता है परन्तु जो स्वयंभूरमण समुद्र में महामत्स्य रहता है उसके कान में रहने वाला तन्दुल मत्स्य नरक जाता है। भले वह जीवन में एक जीव को भी नहीं मारता है न माँस खाता है केवल महामत्स्य के कान के मैल को खाता है।

इससे सिद्ध होता है कि भावों की पवित्रता ही यथार्थ से अहिंसा है परन्तु वर्तमान में देखने में आता है कि कुछ व्यक्ति जो अहिंसा का उपदेश करते हैं दूसरों को अहिंसा का पाठ पढ़ाते हैं वे ही अधिक कुटिल, मायाचारी, दूसरों को ठगने वाले, धूर्त, अच्छी चीज में नकली मिलावट करने वाले, अधिक ब्याज लेकर दूसरों का शोषण करने वाले, घी में डालडा तथा चर्बी मिलाने वाले, शराब एवं चर्म का व्यापार करने वाले, मुर्गी पालन करने वाले, हिंसात्मक सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री का व्यापार व प्रयोग करने वाले होते हैं। ऐसे व्यक्ति जीवन में एक भी द्रव्य हिंसा न करें व एक भी माँस का टुकड़ा न खायें तो भी हिंसक हैं, पापी हैं, क्योंकि जब भावों में अहिंसा होगी तो ऐसी विचित्र हिंसा इनसे हो ही नहीं सकती है। इसका मतलब यह नहीं द्रव्य हिंसा करें या द्रव्य हिंसा की छूट है। परन्तु भाव अहिंसा के लिए भावों की निर्मलता के लिए द्रव्य हिंसा भी सर्वथा वर्जनीय है क्योंकि जो जानबूझकर द्रव्य हिंसा करेगा वह अवश्य ही भाव हिंसक ही होगा। इसलिये भावों की निर्मलता के लिए भावहिंसा एवं द्रव्यहिंसा दोनों त्यजनीय है। करुणा के अवतार महात्माबुद्ध ने अप्रमाद को अमृत कहा है एवं प्रमाद को मृत्यु कहा। उन्हीं का यह कथन यथार्थ है। क्योंकि अप्रमाद से हिंसा नहीं होती है और यह अहिंसा ही अमृत (अ+मृत=न मरना, अमर, विकार न होना, क्षति न होना) है तथा प्रमाद ही मृत्यु (विनाश, घात, क्षति, दुःख मरण) है। अतएव अप्रमादी अमृतपद (मोक्ष, शाश्वतिक, निर्वाण) को प्राप्त करता है और प्रमादी मृत्युपद (मरण, दुःख, संसार) को प्राप्त करता है। धम्मपद में उन्हीं का अमर संदेश निम्न प्रकार से लिपिबद्ध है -

अप्पमादो अमतपदं पमादो मच्चुनो पदं।

अप्पमत्ता न मीयन्ति ये पमत्ता यथा मता।।

प्रमाद न करना अमृत पद का साधक है और प्रमाद करना मृत्युपद का साधक। अप्रमादी नहीं मरते, किन्तु प्रमादी तो मरे तुल्य ही है।

उट्ठानेनप्पमादेन सञ्जमेन दमेन च।

दीपं कयिराथ मेधावी यं ओघो नाभिकीरति।।5।।

मेधावी पुरुष उद्योग, अप्रमाद, संयम और दम (इन्द्रिय दमन) द्वारा अपने लिए ऐसा द्वीप बनावें, जिसे बाढ़ नहीं डुबा सके।

पमादमनुयुञ्जन्ति बाला दुम्मेधिनो जना।

अप्पमादञ्च मेधावी धनं सेट्ठं व रक्खति।।6।।

मूर्ख, अनाड़ी लोग प्रमाद में लगते हैं, बुद्धिमान श्रेष्ठ धन की भाँति अप्रमाद की रक्षा करता है।

मा पमादमनुयुञ्जेय मा कामरतिसन्थवं।

अप्पमत्तो हि ज्ञायन्तो पप्पोति विपुलं सुखं।।7।।

मत प्रमाद में फँसों, मत काम-रति में लिप्त हो। प्रमादरहित पुरुष ध्यान करते हुए महान् सुख को प्राप्त होता है।

पमादं अप्पमादेन यदा नुदति पण्डितो।

पञ्ञापासादमारुह असोको सोकिनिं पजं।।8।।

जब पण्डित प्रमाद को अप्रमाद से हटा देता है तब वह शोक रहित हो, शोकाकुल प्रजा को, प्रजारूपी प्रासाद पर चढ़कर जैसे पर्वत पर खड़ा पुरुष भूमि पर स्थित वस्तु को देखता है, वैसे ही वीर पुरुष अज्ञानियों को देखता है।

अप्पमत्तो पमत्तेसु सुत्तेसु बहुजागरो।

अबलस्सं व सीघस्ससो हित्वा याति सुमेधसो।।7।।

प्रमादी लोगों में अप्रमादी तथा (अज्ञान की नींद में) सोये लोगों में (प्रज्ञा से) जागरणशील बुद्धिमान उसी प्रकार आगे निकल जाता है, जैसे तेज घोड़ा दुर्बल घोड़े से आगे हो जाता है।

आत्मघाती दूसरों के प्राणघात के बिना भी हिंसक

यस्मात्सकषायः सन् हन्त्यात्मा-प्रथममात्मनाऽऽत्मानम्।

पश्चाज्जायेत न वा हिंसा प्राण्यंतराणां तु।।47।।

Because under the influence of passion, the person first injures the self, through the self; whether there is subsequently \an injury caused to another being or not.

व्याख्या-भावानुवाद : कषाय से युक्त जीव सर्वप्रथम स्व आत्म स्वरूप की हिंसा करता है। पश्चात् अन्य जीवों की हिंसा हो या नहीं हो। सकषाय जीव कषाय के

वशीभूत होकर बहिरात्मा होकर अन्तरात्मा का हनन करता है। आत्मबध होने के पश्चात् अन्य जीवों का बंध हो भी सकता है नहीं भी हो सकता है।

प्रमादयोग में नियम से हिंसा होती

हिंसायमविरमणं हिंसापरिणमनमपि भवति हिंसा।

तस्मात् प्रमत्तयोगे प्राण-व्यपरोपणं नित्यम्।।48।।

विकथा तहा कसाया, इंदियणिद्दा तहेव पणयो य।

चदु चदु पणमेगेगं होंति पमादा हु पण्ण रसा।।

अथ प्रमादावस्थायां एव हिंसा प्रवर्तनं इत्यर्थः।

The want of abstience from Himsa, and indulgence, in Himsa both constitute Himsa; and thus whenever there is careless activity of mind, body or speech, there always is injury to vitalities.

व्याख्या-भावानुवाद : अहिंसा से प्रतिज्ञापूर्वक विरक्त नहीं होना भी हिंसा ही है। जीव वध से अविरमण हिंसा होती है। हिंसा का परिणाम भी हिंसा ही है। मानसिक हिंसात्मक परिणाम ही हिंसा है। इसलिए प्रमत्त योग से प्राण व्यपरोपण (भाव हिंसा) अवश्य होता है। गोम्मट्टसार में पन्द्रह प्रकार के प्रमादों का वर्णन निम्न प्रकार से किया गया है -

चार प्रकार की विकथा, चार प्रकार के कषाय, पाँच प्रकार की इन्द्रियाँ, एक निद्रा तथा एक प्रणय इस प्रकार प्रमाद पन्द्रह प्रकार के हैं।

हिंसा के निमित्तो को हटाना चाहिये

सूक्ष्माऽपि न खलु हिंसा परवस्तु-निबंधना भवति पुंसः।

हिंसाऽऽयतन-निवृत्तिः परिणाम-विशुद्धये तदपि कार्या।।49।।

A more conduct with external objects, will not make a person guilty of Himsa. Even then, for the purification of thought, one ought to aviod external causes leading to Himsa.

व्याख्या-भावानुवाद : परवस्तु के सम्बन्ध से मनुष्य को सूक्ष्म भी हिंसा नहीं लगती है। निश्चय से परपदार्थ के कारण सूक्ष्म जीव वध का पाप भी जीव को नहीं लगता है। हिंसा आत्मपरिणाम से जनित होती है इसलिये हिंसा आत्मनिष्ठ है। इसलिये

आत्मपरिणाम की विशुद्धि के लिये हिंसा के आयतन स्वरूप छुरी, अस्त्र-शस्त्र, सूक्ष्म जीवों से युक्त स्थान का भी त्याग करना चाहिये। अस्त्रादि धारण करने से आत्मस्वभाव में मलिनता आती है। अतः शास्त्रों के समूह को त्याग करके यत्नपूर्वक विचरण करने से आत्म परिणाम में निर्मलता आती है।

अनिश्चयज्ञ का निश्चय के आश्रय से चारित्र घाती

निश्चयमुबुद्ध्यमानो यो निश्चय तस्तमेव संश्रयते।
नाशयति करण चरणं स बहिः करणालसो बालः।।50।।

He, who, ignorant of the real poin of view, takes shelter therein in practive, is a fool and being in different to external conduct, he destroys all Practical discipline.

व्याख्या-भावानुवाद : जों निश्चय को नहीं जानकर निश्चय से उसका ही आश्रय लेता है ऐसा मूर्ख निश्चय से क्रिया रूप चारित्र को अर्थात् व्यवहार चारित्र का नाश कर देता है। आचार्य श्री ने उसे मूर्ख, आलसी कहा है जो निश्चय व्यवहारात्मक मोक्षमार्ग को नहीं जानकर बाह्य चारित्र का पालन करने में प्रमादी होकर एकान्तः निश्चय का ही आश्रय लेता है, मानता है। ऐसा व्यक्ति श्रावक चारित्र एंव मुनि चारित्र रूपी व्यवहार चारित्र का नाश करता है, लोप करता है।

अहिंसक भी हिंसक एंव हिंसक भी अहिंसक

अविधायाऽपि हि हिंसा हिंसा-फल-भाजनं भवत्येकः।
कृत्वाऽप्यपरोहिंसा हिंसाफल-भाजनं न स्यात्।।51

One who does not actually commit Himsa, becomes responsible for the consequences of Himsa and another who actually commits Himsa, Would not be liable for the fruit of Himsa.

व्याख्या-भावानुवाद : एक जीव निश्चय से जीव बधादि रूप हिंसा को नहीं करता हुआ भी हिंसा के फल को भोगता है। हिंसा के फलस्वरूप दुःख, दुर्भाग्य, इष्टवियोग, रोगादि को मिथ्यादृष्टि/भाव हिंसक जीव भोगता है। जिस प्रकार जाल बनाने वाले धीवर मछली को बिना पकड़े ही अशुभ परिणाम से पाप का भागी बन जाता है। अन्य ज्ञानवान् काय संचालन आदि हिंसा करता हुआ भी हिंसा के फल को

नहीं भोगता है। जिस प्रकार कृषक कृषि कार्य करते हुए अनेक जीवों को हनन करता हुआ भी हिंसा के फल को नहीं भोगता है क्योंकि उसका परिणाम निर्मल होता है। इसीलिये हिंसा और अहिंसा में परिणाम की प्रधान्यता रहती है।

अल्प हिंसा भी बड़ा पाप एवं बड़ी हिंसा भी अल्प पाप

एकस्याऽपाहिंसा ददाति काले फलमनल्पम्।
अन्यस्य महाहिंसा स्वल्प-फला भवति परिपाके।।52

To one, trifing Himsa, brings in time serious result; to another grievous Himsa at time of fruition causes small consequence.

व्याख्या-भावानुवाद : जो तत्वार्थ को सही रूप से नहीं समझता है ऐसे पुरुष की अल्प हिंसा भी काल प्राप्त करके बहुफल को देती है। क्योंकि उसका मानसिक विकल्प अति तीव्र होता है। अन्य तत्वार्थ को जानने वाले पुरुष की महा हिंसा भी उदयकाल में कम फल देती है। क्योंकि उसका परिणाम फलपाक के समय में निर्मल होती है। क्योंकि सर्वत्र परिणाम ही शुभ एवं अशुभ को देने के लिए कारण बनता है। जिस प्रकार राजा के आदेश से सैनिक युद्ध करते हैं हिंसा करते हैं तथापि उसको हिंसा का फल कम मिलता है। सैनिक तीव्र कषाय परिणाम के बिना यदि राष्ट्र की रक्षा के लिए युद्ध करता है तो उसको हिंसा का फल कम लगता है।

एक हिंसा एक के लिये तीव्र तथा एक के लिये मंद

एकस्यैव तीव्रं दिशति फलं सैव मन्दमन्यस्य
व्रजति सहकारणैरपि हिंसा वैचित्र्यमत्र फलकाले।।53

Even when jointly commited by two persons the same Himsa at the time to fruition, curiously enough, causes severe retribution to one, and a mild one to another.

व्याख्या-भावानुवाद : वही एक हिंसा मिथ्यात्व सहित जीव के लिए तीव्र दुस्सह दुःख को देती है। अन्य ज्ञानी के लिए वही हिंसा कम फल देती है। यहाँ पर

सहकारी कारण से हिंसा विचित्र फल को देती है। बाह्य हिंसा एक होते हुए भी मिथ्या दृष्टि, अज्ञानी, कषायवान् जीव की हिंसा अन्तरंग उन सहकारी परिणाम के कारण तीव्र फल को देती है। अन्य एक सम्यक्दृष्टि, ज्ञानी मंद कषायी निर्मल परिणामी जीव की वही हिंसा कम फल को देती है हिंसा काल में विचित्रता परिणाम की विचित्रता से आती है।

हिंसा पहले वर्तमान तथा भविष्य में भी फलदात्री

प्रागेव फलति हिंसाऽक्रियामाणा फलति फलति च कृताऽपि।
आरभ्यकर्त्तुमकृताऽपि फलति हिंसाऽनुभावेन।।54

Because of intention, Himsa is culpable sometimes before it is committed, sometimes at the time of commission, sometimes even after is has been committed and sometimes for attempt to commit it ever when it is not committed because of the intention to commit Himsa.

व्याख्या-भावानुवादः-हिंसा परिणाम के कारण हिंसा (द्रव्यहिंसा) को किये बिना वह हिंसा फल को पहले ही दे देती है तथा हिंसा करने के बाद भी फल देती है। हिंसा प्रारम्भ करने पर या नहीं करने पर भी फल को देती है। अक्रियमाण द्रव्यहिंसा निश्चय से पूर्व भाव हिंसा के कारण हिंसा ही हो जाती है। आत्मा के शुभ एवं अशुभ परिणाम सर्वत्र फल विपाक समय में स्वपरिणाम के कारण फल देते हैं। हिंसा करने के बाद फल हिंसा फल देती है। उसी प्रकार हिंसा करते हुए या नहीं करते हुए भी फल देती है।

हिंसा कर्ता एक, फल भोक्ता अनेक

एकः करोति हिंसां भवंति फल-भागिनो बहवः
बहवो विदधति हिंसा हिंसाफल भुग् भवत्येकः।।55

Himsa is committed by one, and there are many who suffer the consequences; many commit Himsa and only one suffers the consequence for Himsa.

व्याख्या-भावानुवाद : हिंसा करने वाला एक है और उसका फल भोगने

वाले अनेक होते हैं। जैसा कि एक शूली दायक या पशुघातक नर हिंसा करता है और मिथ्यात्वादि संक्लेश परिणामों के तीव्रतर होने से शूली आदि को देखकर प्रसन्न होने वाले, अनुमोदना करने वाले अनेक लोग उस हिंसा के फल को भोगने वाले होते हैं। अनेक मनुष्य हिंसा को करते हैं और उसका फल भोगने वाला एक होता है। यथा अनेक पुरुष (सैनिक) हिंसा रौद्रध्यान अर्थात् युद्ध करते हैं परन्तु उस युद्ध का प्रेरक राजा उस हिंसा का फल भोगता है। हिंसा की वैचित्रिता इस प्रकार होती है।

कर्त्ता भेद से हिंसा हिंसा भी है और अहिंसा भी

कस्यापि दिशति हिंसा हिंसा-फलमेकमेव फलकाले।
अन्यस्य सैव हिंसा दिशत्यहिंसा-फलं विपुलम्।।56

Himsa gives to one at the time of fruition, the consequences of Himsa only; to another that same Himsa gives considerable Ahimsa reward.

व्याख्या-भावानुवाद : किसकी हिंसा फलदान काल में हिंसा फल को ही देती है। अशुभतर परिणाम से युक्त जीव की हिंसा परिपाक काल में नरकादि दुःख रूप बहु कटुफल देती है। जैसे कि मुनि को भक्षण करने के लिये आने वाले व्याघ्र को नरकादि दुःख मिलता है। वही हिंसा दूसरों के लिये अहिंसा फल को देती है। अधिकतर शुभ परिणाम से युक्त वही हिंसा विपाक काल में स्वर्गादिरूप विपुल अहिंसा फल को देती है। जिस प्रकार मुनि की रक्षा अभिप्राय से युक्त शूकर को स्वर्ग फल मिला। मुनि की रक्षा रूप परिणाम से युक्त शूकर ने मुनि को भक्षण करने के लिये उद्यत व्याघ्र के साथ युद्ध किया और युद्ध में दोनों की मृत्यु हुई। व्याघ्र मर कर के नरक में तथा शूकर मर कर स्वर्ग में गया। इसमें मुख्य कारण परिणाम है।

अहिंसा का हिंसा फल तथा हिंसा का अहिंसा फल

हिंसाफलमपरस्य तु ददात्यहिंसा तु परिणामे।
इतरस्य पुनर्हिंसा दिशत्यहिंसाफलं-नान्यत्।।57

In result, Ahimsa gives to one the consequence of Himsa; to another Himsa gives the benefit of Ahimsa. It is not otherwise.

व्याख्या-भावानुवाद : पुनः किसी की अहिंसा परिणाम में हिंसा फल को

देती है। मिथ्यात्व परिणाम से युक्त जीवों की अहिंसा परिपाक काल में हिंसाफलस्वरूप नरकादि दुःख को देती है। जिस प्रकार अशुभतर परिणाम से युक्त जीवबधादि से रहित तन्दुलमत्स्य हिंसा फलस्वरूप नरक को प्राप्त करता है। पुनः दूसरों की हिंसा अहिंसा फल को देती है। भव्य सम्यक् दृष्टि के द्वारा देवालय बनाने में तीर्थयात्रा में द्रव्य हिंसा हो जाती है परन्तु वह हिंसा उसको अहिंसा के फलस्वरूप स्वर्ग सुख सौभाग्य आदि को देती है किन्तु हिंसा का फल नहीं देती है।

मार्ग प्रदर्शक

इति विविध-भंगगहने सुदुस्तरे मार्ग मूढ़दृष्टीनाम्।
गुरवो भवन्ति शरणं प्रबुद्ध नय चक्र सञ्चाराः।।58

In this forest of various points of view, difficult to be traversesd only the masters who have a through accquaintance with the application of different view points, can help those who are ignorant of the Path.

व्याख्या-भावानुवाद : अयत्न कठिन मार्ग में मूल दृष्टियों के लिये गुरु ही शरण होते हैं। मिथ्यात्व आदि से युक्त मनुष्यों के लिये दुस्तर मार्ग में ज्ञान तत्त्व को जानने वाले ही तो उपदेशक निजरूप को धारण करने वाले गुरु ही तारने के लिये समर्थ होते हैं। विभिन्न नयोपनयों से संकीर्ण आगमोक्त मार्ग में गुरु ही मार्गदर्शक बनते हैं और मार्ग के संकट से पार उतारते हैं। वे गुरु मार्गदर्शक बनते हैं जो विभिन्न नय उपनय के समूह से युक्त आगमरूपी चक्र को चलाने में दक्ष होते हैं। नैगम आदि 28 नय या निश्चय व्यवहार आदि नयों के समूह को समझने और समझाने में जो गुरु दक्ष होते है वही शिष्यों के लिये मार्गदर्शक बन सकते हैं अन्य नहीं। मनोहर अंगो को देखने का त्याग, पूर्व भोगों के स्मरण का त्याग, गरिष्ट और इष्ट रस का त्याग तथा अपने शरीर के संस्कार का त्याग ये ब्रह्मचर्य व्रत की पाँच भावनाएँ हैं।

हिंसादि पाँच पापों के विषय में करने योग्य विचार

हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम्। (9)

The destructive or dangerous (and) censurable (character of the 5 faults) injury, etc., in this (as also) in the next world (ought to

be) mediated upon.

हिंसादिक पाँच दोषों में ऐहिक और पारलौकिक अपाय और अवद्य का दर्शन भावने योग्य है।

अभ्युदय और निःश्रेयस् के साधनों का नाशक अपाय है या भय का नाम अपाय है। अभ्युदय (स्वर्गादि इहलोकिक सम्पदा) और निःश्रेयस (मोक्ष) की क्रिया एंव साधनों के नाशक अनर्थ को उपाय कहते हैं। अथवा इहलोक भय, परलोक भय, मरण भय, वेदना भय, अगुप्ति भय, अनरक्षक भय, अकस्मात् भय इन सात प्रकार के भय को अपाय कहते हैं।

गर्ह्य निन्दनीय को अवद्य कहते हैं। ऐसा चिंतवन करना चाहिए कि हिंसक नित्य उद्विग्न रहता है, सतत अनुबद्ध वैर वाला होता है। इस लोक में वध (मरण) बन्धन, क्लेश आदि को प्राप्त करता है। अतः हिंसा से विरक्त होना ही कल्याणकारी है। मिथ्याभाषी का कोई विश्वास नहीं करता है। असत्यवादी इस लोक में जिह्वाच्छेद आदि के दण्ड को भोगता है। जिसके सम्बन्ध में झूठ बोलता है, वे उसके वैरी हो जाते है अतः उनसे भी अनेक आपत्तियाँ आती है। मरकर अशुभ गति में जाता है और निन्दनीय भी होता है। अतः असत्य बोलने से विरक्त होना कल्याणकारी है। परधन के ग्रहण करने में आसक्ति चित्त वाला चोर सर्वजनों के द्वारा तिरस्कृत होता हैं निरंतर भयभीत रहता है। इस लोक में अभिघात (मारपीट), वध, बन्धन, हाथ, पैर, कान, नाक, ओष्ठ आदि का छेदन-भेदन और सर्वस्वहरण आदि दण्ड भोगता है (प्राप्त करता है) और मरकर परलोक में अशुभ गति में जाता है, अतः चोरी से विरक्त होना ही श्रेयस्कर है तथा अब्रह्मचारी (कुशीलसेवी) मानव मदोन्मत हाथी के समान हथिनी से ठगाया हुआ, हथिनी के वशीभूत हुआ हाथी मारण-ताड़न-बन्धन-छेदन आदि अनेक दुःखों को भोगता है। उसी प्रकार परस्त्री के वश हुआ मानव वध-बंधनादि को भोगता है। मोहाभिभूत होने के कारण कार्य (करने योग्य), अकार्य (नहीं करने योग्य) के विचार से शून्य होकर किसी शुभ कार्य का आचरण नहीं करता है। परस्त्री का आलिंगन तथा उसके संग में रति करने वाले मानव के सर्व लोग वैरी बन जाते हैं। परस्त्रीगामी इस लोक में लिंगच्छेदन, वध, बन्धन, क्लेश, सर्वस्वहरणादि के दुःखों को प्राप्त होते है तथा मरकर परलोक में अशुभ गति में जाते

हैं और यहाँ निन्दनीय होते हैं। अतः अब्रह्म से विरक्त होना ही श्रेयस्कर है, आत्महित कारक है तथा परिग्रहवान् पुरुष माँसखण्ड ग्रहण किये हुए पक्षी की तरह अन्य पक्षियों के द्वारा झपट जाता है, चोर आदि के द्वारा अभिभवनीय (तिरस्कृत) होता है, उस परिग्रह के अर्जन, रक्षण और विनाशकृत अनेक दुःखों को प्राप्त होता है। लोभकषाय से अभिभूत होने से कार्य, अकार्य से अनभिज्ञ हो जाता है। परिग्रहवान् मानव मरकर परलोक में नरक, तिर्यंचादि अशुभ गति में जाता है। 'यह लोभी हैं-कंजूस' इत्यादि रूप से निन्दनीय होता है। अतः परिग्रह का त्याग करना ही श्रेयस्कर है। ये हिंसादि पाप, अपाय और अवद्य के कारण हैं, ऐसी निंरतर भावना भानी चाहिये।

दुःखमेव वा। (10)

One must also mediate, that the five faults, injury etc. are pain personified, as they themselves are the varitable wombs of pain.

अथवा हिंसादिक दुःख ही हैं ऐसी भावना करनी चाहिये।

दुःख के कारण होने से हिंसा, असत्य, चोरी, अब्रह्मचर्य एंव परिग्रह दुःख स्वरूप है। क्योंकि हिंसादिक पाप से इहलोक में शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक आदि दुःख मिलते हैं और परलोक में भी नरक-तिर्यंच आदि दुर्गति में जीव को अनेक कष्ट प्राप्त होते हैं। इसका कारण यह है कि हिंसादिक पाप असाता वेदनीय कर्म के आस्रव के कारण है और असाता वेदनीय दुःख के कारण है इसलिए दुःख के कारण या दुःख के कारण के कारण जो हिंसादिक है उनमें दुःख का उपचार है।

जिस समय जीव हिंसादि पाप करता है उस समय में उसका भाव दूषित होने के कारण जो कर्मस्राव होता है वह कर्मास्रव पाप प्रकृति रूप में परिणमन कर लेता है। यह पाप ही उस पापी को अनेक प्रकार का दुःख देता है। पाप प्रवृति के समय जो दूषित भाव होता है उससे मानसिक-तनाव, मानसिक उद्वेग, चिंता, भय आदि उत्पन्न होते हैं जिसके कारण उसे तत्काल ही मानसिक कष्ट एवं यातनायें मिलती है जिससे विभिन्न मानसिक रोग के साथ-साथ शरीरिक रोग होता है। जैसे-ब्लेड प्रेशर बढ़ना, सिर दर्द, कैन्सर, टी.बी., हृदय गति रुकना (हार्ट फेल), उन्माद, पागलपन आदि रोग होते हैं। इतना ही नहीं इस लोक में ही अपमान, प्रताड़ना, जेल जाना, सामाजिक

प्रतिष्ठा का ह्रास, अविश्वास, शत्रुता, कलह यहाँ तक की प्राण दण्ड आदि कष्ट मिलते है। जो हिंसा करता है उसके फलस्वरूप इस जन्म में उसकी हिंसां हो सकती है पर जन्म अकाल मरण, रोग आदि यातनाएँ सहन करनी पड़ती है।

झूठ बोलने से दूसरों का विश्वास झूठ वाले पर से उठ जाता है जिह्वा छेद आदि दण्ड मिलता है। केवल एक बार झूठ बोलने पर राजा वसु का स्फटिकमय सिंहासन फट गया। वह नीचे गिरा तथा पृथ्वी भी फट गई और वह पृथ्वी में समावेश होकर नरक में गया। मिथ्या बोलने वाला परभव में गूँगा (मूक) होता है, मुँह में घाव होता है और मुँह से बदबू आती है।

चोरी करने वाला इस जन्म में अनेक शारीरिक दण्ड को पाता है। उस पर कोई विश्वास नहीं करता है। राजा सरकारादि उसके धन अपहरण करके जेल में दण्ड देते हैं, यहाँ तक कभी-कभी प्राणदण्ड मिलता है। परभव में भिखारी बनता है एवं उसका भी धन अपहरण अन्य के द्वारा किया जाता है।

मैथुन सेवन में शारीरिक, मानसिक एंव आध्यात्मिक कष्ट होता है क्योंकि आयुर्वेद के अनुसार एक बार संभोग से जो वीर्य क्षय होता है उतना वीर्य 42 दिन के भोजन से तैयार होता है। इससे सुजाक, मस्तिष्क दुर्बलता, शरीरिक शक्ति का ह्रास, स्मरण शक्ति का ह्रास, रोग प्रतिरोधक शक्ति की कमी आदि अनेक विपत्तियाँ आ घेरती है। वर्तमान में जो एड्स रोग ने विश्व में आतंक फैलाया है उस महारोग की उत्पत्ति एंव वृद्धि से खाद्याभाव, आवास का अभाव, प्रदूषण में वृद्धि, भूखमरी, समुचित शिक्षा-दीक्षा का अभाव आदि अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। अब्रह्मचारी-अति कामुक व्यक्ति हिताहित विवेक से रहित होकर परस्त्री गमन, वेश्या गमन आदि कार्य भी करता है। जिससे उसे अपमान, दण्ड, सामाजिक अप्रतिष्ठा आदि अनेक समस्याएँ आ घेरती हैं। कभी-कभी कुशील सेवन से प्राणदण्ड तक मिलता है।

इष्टोपदेश में पूज्यवाद स्वामी ने काम भोग से उत्पन्न दुःख का वर्णन निम्न प्रकार किया है-

आरम्भे तापकान्प्राप्तावऽतृप्तिप्रतिपादकान्।
अन्ते सुदुस्त्यजान् कामान्, काम कः सेवते सुधीः।। (17)

आरम्भ में संताप के कारण और प्राप्त होने पर अतृप्ति के करने वाले तथा

अंत में जो बड़ी मुश्किल से भी छोड़े नहीं जा सकते, ऐसे भोगोपभोग को कौन विद्वान्-समझदार-ज्यादती व आसक्ति के साथ सेवन करेगा?

किमपीदं विषयमयं, विषमतिविषमं पुमानयं येन।
प्रसभमनुभूयं मनोभवे-भवे नैव-चेतयते।।

अहो! यह विषयमयी विष कैसा गजब का विष है कि जिसे जबरदस्ती खाकर यह मनुष्य, भव-भव में नहीं चेत पाता है।

जैन धर्म में हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील को जैसे पाप माना है वैसे परिग्रह को भी पाप माना है। पाप का अर्थ है-पतन। जिसके कारण जीव पतित होता है उसे पाप कहते हैं। सचित्त एवं अचित्त परिग्रह के कारण जीव अनेक कष्टों को उठाता है तथा अनेक पापों को करता है। परिग्रह संचय के कारण ही समाज में धनी-गरीब, शोषक, शोषित, मालिक, मजदूर आदि विपरीत विषम परिस्थिति से युक्त व्यक्ति का निर्माण होता है।

जिसके पास परिग्रह रहता है वह अधिक लोभी, अधिक शोषक, गर्वी बन जाता है। क्योंकि परिग्रह के कारण उसे धनमद हो जाता है। इसे ही कबीरदास ने कहा है-

कनक-कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाय।
वे पावे बौराय नर, वे खाये बौराय।।

कनक (धन-सम्पत्ति) कनक (धतुरा, विषाक्त फल) से भी सौ गुनी मादक गुणयुक्त है। क्योंकि कनक (धतुरा) को खाने पर जीव नशायुक्त (पगले) हो जाते हैं परन्तु कनक (धन-सम्पत्ति) को प्राप्त करते ही जीव मदयुक्त हो जाता है।

धन-सम्पत्ति (परिग्रह) सर्वथा, सर्वदा दुःखदायी है। पूज्यपाद स्वामी ने इष्टोपदेश में कहा भी है-

दुरर्ज्येनासुरक्ष्येण, नश्वरेण धनादिना।
स्वस्थं मन्यो जनः कोऽपि ज्वरानिव सर्पिषा।। (13)

जैसे कोई ज्वर वाला प्राणी घी को खाकर या चिपड़कर अपने को स्वस्थ मानने लग जाय उसी प्रकार कोई एक मनुष्य मुश्किल से पैदा किये गये तथा जिसकी रक्षा करना कठिन है और फिर भी नष्ट हो जाने वाले हैं, ऐसे धन आदि को से अपने

को सुखी मानने लग जाता है।

अर्थस्योपार्जने दुःखमर्जितस्य च रक्षणे।
आये दुःखं व्यये दुःखं, धिगर्थं दुःखभाजनम्।।

धन अर्जित करने में दुःख उसकी रक्षा करने में दुःख उसके जाने में दुःख, इस तरह हर हालत में दुःख के कारण रूप धन को धिक्कार हो।

दहनस्तृणकाष्ठसंचयैरपि तृप्येदुदधिर्नदीशतैः।।
न तु कामसुखैः पुमानहो, बलवत्ता खलु कापि कर्मणः।।

यद्यपि अग्नि, घास, लकड़ी आदि के ढेर से तृप्त हो जाय। समुद्र, सैकड़ो नदियों से तृप्त हो जाय, परन्तु वह पुरुष इच्छित सुखों से कभी भी तृप्त नहीं होता। अहो! कर्मों की कोई ऐसी ही सामर्थ्य या जबर्दस्ती है।

हिंसा से देश की जीडीपी पर पड़ा व्यापक असर

80 लाख करोड़ से ज्यादा नुकसान हुआ भारतीय अर्थव्यवस्था को पिछले वर्ष

40,000 प्रति व्यक्ति के हिसाब से नुकसान हुआ
163 देशों और क्षेत्रों के विश्लेषण के आधार पर तैयार की गई यह रिपोर्ट
12 % जीडीपी थी वैश्विक अर्थव्यवस्था में 2017 में
9 % के बराबर जीडीपी को नुकसान हुआ हिंसा से
12.4 % नुकसान हुआ वैश्विक जीडीपी को क्रय शक्ति क्षमता के आधार पर

हिंसा से सबसे ज्यादा आर्थिक नुकसान इन देशों को

01 सीरिया में 68 %
02 अफगानिस्तान में 63 %
03 इराक में 51 %

यहाँ हिंसा भी कम और नुकसान भी कम

01 स्विट्जरलैण्ड
02 इंडोनेशिया
03 बुर्किना फासो।

दवाओं पर खर्च से देश में बढ़ी गरीबी

10 वाँ हिस्सा कुल आबादी का दवाइयों पर खर्च की वजह से गरीबी के मुहाने पर पहुँचा

3,000 जन औषधि केंद्र खोले गए देश में सस्ती दवा उपलब्ध कराने को

इन बीमारियों से हो रहे कंगाल

कैंसर, दिल संबंधी व मधुमेह के इलाज का खर्च गरीबी की ओर धेकल रहा है।

2013 में पहला राज्य

छत्तीसगढ़ ने मुफ्त जेनेरिक दवा देने का ऐलान किया

15 जिलों में 1,290 दवाओं के पर्चों का अध्ययन कर निकाले गए नतीजे

68 % जेनेरिक दवाएँ लिखी मरीजों के पर्चें में

नीति आयोग की रिपोर्ट : 60 करोड़ लोग प्रभावित

इतिहास का सबसे बड़ा जल संकट ढूँढ़ते रह जाओगे पीने का पानी

नई दिल्ली। देश के इतिहास के सबसे बड़े जल संकट से जूझ रहा है। नीति आयोग द्वारा जारी जल प्रबंधन सूचकांक रिपोर्ट के मुताबिक, करीब 60 करोड़ लोग पानी की भीषण कमी से जूझ रहे हैं। साथ ही देश में करीब 70 फीसदी पानी पीने के लायक ही नहीं है।

रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि देश के करीब 75 फीसदी घरों के अहाते में पीने का पानी उपलब्ध नहीं है, जबकि 84 प्रतिशत ग्रामीण घरों में पाइप से पानी नहीं पहुँच पाता है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि आने वाले कुछ वर्षों में देश के कई इलाकों में बार-बार सूखा पड़ेगा। जल संसाधन मंत्री नीतिन गडकरी ने यह जल प्रबंधन सूचकांक

रिपोर्ट जारी करते हुए कहा कि देश अभी इतिहास के सबसे बड़े जलसंकट से जूझ रहा है।

120वें पर भारत, 122 देशों में जल की गुणवत्ता मामले में

75 फीसदी घरों में पीने का पानी उपलब्ध नहीं

84 ग्रामीण घर जहाँ, पाइप से पानी नहीं पहुँचता है

जल प्रबंधन में म.प्र. दूसरे नंबर पर

रिपोर्ट के मुताबिक, गुजरात जल संसाधन प्रबंधन में सबसे आगे हैं, जबकि मध्य प्रदेश दूसरे स्थान पर है। वहीं, छत्तीसगढ़ नौवें स्थान पर, जबकि राजस्थान 10वें स्थान पर है। झारखण्ड सभी राज्यों में सबसे निचले पायदान पर है। खतरे की बात यह है कि जल प्रबंधन के मामले में 60 फीसदी से ज्यादा राज्यों का प्रदर्शन सबसे कमजोर रहा है।

जीडीपी पर भी असर, 6 फीसदी का होगा नुकसान

रिपोर्ट के मुताबिक जल संकट से 2050 तक देश की जीडीपी में 6 फीसदी का नुकसान होगा, तो वहीं 2030 तक देश की 40 फीसदी लगभग आबादी के पास पीने का पानी भी उपलब्ध नहीं होगा। हालांकि, वित्त वर्ष 2015-16 के मुकाबले वित्त वर्ष 2016-17 में करीब 50 फीसदी राज्यों में पानी संजोने में सुधार आया है।

21 शहरों के 10 करोड़ लोग प्रभावित

रिपोर्ट में कहा गया है कि नई दिल्ली, बेंगलूर, चेन्नई, हैदराबाद समेत 21 शहरों में 2020 तक भूमिगत जल घट जाएगा जिससे 10 करोड़ लोगों का जीवन प्रभावित होगा। इसके अलावा 2030 तक देश में पानी की माँग दोगुनी हो जाएगी। भूमिगत जल की स्थिति में भी गिरावट आएगी।

2,00,000 लोगों की मौत हर साल हो जाती है स्वच्छ पानी मुहैया नहीं होने के चलते भारत में

भारतीय वन सर्वेक्षण की रिपोर्ट

जब घने जंगल ही नहीं बचे तो खाक बचेंगे बाघ

नई दिल्ली। पर्यावरणीय संतुलन के हिसाब से देखा जाए तो कुछ वर्षों में

राजस्थान से घने जंगलों का सफाया हो जाएगा। राज्य में अभी सिर्फ 78 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में घने वन बचे हैं।

इस पैमाने पर मध्यप्रदेश की हालत ज्यादा खस्ता है, वहाँ दो साल में 23 वर्ग किमी घने जंगलों का सफाया हुआ है। छत्तीसगढ़ में भी हालात बेकाबू हैं और वहाँ भी दो साल में 12 किलोमीटर घने जंगल साफ हो गए हैं। सवाल यह है कि जब घने जंगल ही नहीं बचेंगे तब उनमें रहने वाले बाघ कैसे बचेंगे?

राजस्थान : 78 वर्ग किलोमीटर में जंगल

मप्र : 23 किमी में सिमटे हैं वन

छग : 12 किमी जंगलों का सफाया

जयपुर, अलवर ठीक-ठीक

भारतीय वन सर्वेक्षण की ताजा रिपोर्ट के अनुसार घने अलवर और जयपुर ही ऐसे जिले हैं जिनके कुल क्षेत्रफल में घने जंगल का दायरा दहाई के आँकड़े के पार क्रमशः 59 और 12 वर्ग किमी है। बीकानेर, बूँदी, हनुमानगढ़ में एक-एक वर्ग किमी, जैसलमेर में चार वर्ग किमी घने जंगल हैं।

राजस्थान के छह जिलों में यह है घने जंगल की स्थिति

अलवर 59

जयपुर 12

जैसलमेर 14

बूँदी 1

बीकानेर 1

हनुमानगढ़ 1

(आँकड़े किलोमीटर में)

छत्तीसगढ़ में भी संकट

नक्सलियों के प्रभाव वाले छत्तीसगढ़ में भी सघन वन साफ हो रहे हैं। वैसे तो राज्य में सघन वनों का दायरा 12.57 किमी आंका गया है अर्थात प्रदेश के 5411 वर्ग किमी क्षेत्र में अभी सघन जंगल है, लेकिन 2015 के मुकाबले इसमें 12 वर्ग किलोमीटर की कमी आई है।

मध्यप्रदेश में हालात भयावह

मध्यप्रदेश में जंगलों की हालत को भयावह श्रेणी में रखा है। वैसे तो 6 हजार 56.3 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में घने वन है लेकिन 2015 से रिपोर्ट जारी किए जाने तक 23 वर्ग किमी घने जंगलों का सफाया हो चुका है। मप्र में सबसे अधिक घने जंगल बालघाट में 1324 वर्ग किमी, डिंडोरी में 108-7 वर्ग किमी बताए गए हैं। शेष जिलों में घने वनों का दायरा औसतन एक से चार सौ वर्ग किलोमीटर रह गया है।

दुनिया में 6 करोड़ 85 लाख लोगों ने हिंसा तथा उत्पीड़न के चलते छोड़ा अपना घर

म्यांमार और सीरिया सहित दुनियाभर में जंग, हिंसा तथा उत्पीड़न के चलते छह करोड़ 85 लाख लोग अपने घर छोड़ने के लिए मजबूर हुए हैं। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी एजेंसी की ओर से जारी रिपोर्ट में कहा गया है कि 2017 के अंत तक यह संख्या 2016 की तुलना में कम से कम 30 लाख अधिक थी। एक दशक पहले चार करोड़ 27 लाख लोग बेघर हुए थे। इस संख्या में 50 प्रतिशत बढ़ोतरी हुई है। बेघरों की यह संख्या थाइलैंड की आबादी के बराबर हैं।

संयुक्त राष्ट्र में विस्थापितों के उच्चायुक्त फिलिपो ग्रांडी ने कहा-हम एक ऐसे मुहाने पर हैं, जहाँ दुनियाभर में मजबूरन विस्थापित लोगों की बेहतरी की सफलता के लिए नई और कहीं ज्यादा व्यापक दृष्टिकोण की जरूरत है ताकि देश अथवा समुदाय इससे निपटने में अकेले नहीं पड़ जाएंगे।

जीव क्रूरता, अंधविश्वास और ठंगी

धर्म के नाम पर कैसे-कैसे अंधविश्वास फल-फूल रहे हैं। यह जानने के लिए पीपुल फॉर एनिमल्स की टीम ने पिछले कुछ समय के दौरान इंटरनेट पर तमाम संबंधित वेबसाइटों की पड़ताल की । जब से मुझे हत्थाजोड़ी के 'जादुई तिलिस्म' के बारे में इसे बेचने वाली वेबसाइटों के माध्यम से पता चला, तब से ही हम ऐसी तमाम चीजों की जाँच कर रहे हैं। हत्थाजोड़ी की एक विशाल मॉनिटर छिपकली का

गुप्तांग होता है। इसे बेचने वाली वेबसाइटों का दावा है कि इससे स्वास्थ्य समृद्धि और आकर्षण-बल पैदा होता है।

इसी तरह सियार सिंघी ना की एक जड़ी है। यह सियार के कथित सींग से बनती है। पहली बात यह कि वन्यजीव संरक्षण कानून, 1972 के तहत सियारों के शिकार पर रोक है। दूसरी बात, सियारों के कोई सींग नहीं होता। अंधविश्वास को बढ़ावा देकर लोगों को ठगने वाले कहते हैं कि जब सियार सिर नीचे की ओर कर के हुआं-हुआं करता है (जो कि तकनीकी रूप से नामुमकिन है) तब अचानक उसके सिर पर सींग उभर आता है। यदि सियार को मारकर उसका सींग उससे जुड़े बालों सहित निकाल लिया जाए और इसे सिंदूर में रख दिया जाए, तो इससे जुड़े बाल हमेशा बढ़ते रहेंगे और विविध रंगों के होंगे। इससे बुरी रूहें दूर रह सकती हैं यदि आप इसके इर्द-गिर्द हवन करते हैं। हवन के लिए कर्मकाण्ड में निपुण व्यक्ति और पैसों की जरूरत होगी। इसके बगैर यह कारगार ही नहीं होगा (जिसका दोष जाहिर तौर से आप पर ही जाएगा)।

सियार सिंघी से जुड़ी यह बकवास हर वर्ग-समाज में फैली हुई है। श्रीलंका में कुछ अनपढ़ लोग जुए की बाजी जीतने के लिए इसके ताबीज का इस्तेमाल करते हैं। नेपाल और भारत में एक जनजाति के लोग मानते हैं कि पुरुषों के भीतर इससे अंधेरे में देखने और औरतों को आकर्षित करने की क्षमता पैदा होती है। बंगाल में लोग इसे तिजोरियों के भीतर रखते हैं (हत्थजोड़ी को भी तिजोरी में रखा जाता है) ताकि उनकी धन-संपदा बढ़े। पूर्व-शर्त यह है कि तिजोरी की पूजा की गई हो। आम तौर से जो लोग पूजा करवाते हैं, बाद में तिजोरी लूट ले जाते हैं। कुछ वेबसाइटों पर तो यहाँ तक बताया गया है कि एक धर्मग्रन्थ के अनुसार सियार शैतान की माँ है इसलिए उसके सींग को पास रखने से शैतान दूर रहता है।

गोल्डन जैकॉल यानी सियार की 13 उपप्रजातियाँ होती हैं। अब कुल सात बची हैं। यह कुत्ते जैसा छोटे कद का जानवर होता है जो फल, कीड़े, छोटे सरीसृप, पक्षी और चूहे आदि खाकर जीता है। ये आम तौर से पारिवारिक झुंड में पाए जाते हैं। जातक कथाओं में सियार को बुद्धिमान प्राणी के रूप में दर्शाया गया है। इनकी संख्या में कमी का असली कारण उनके सिर पर उग आने वाली वह काल्पनिक हड्डी है,

जिसे कुछ लोग सौभाग्य का प्रतीक मानते हैं।

अंधविश्वास को बढ़ावा देकर लोगों को ठगने वाले कहते हैं कि सियार के कथित सींग से बनने वाली जड़ी सियार सिंघी से बुरी रूहें दूर रह सकती हैं, यदि आप इसके इर्द-गिर्द हवन करते हैं। सियार सिंघी से जुड़ी यह बकवास हर वर्ग-समाज में फैली है। श्रीलंका में कुछ अनपढ़ लोग जुए की बाजी जीतने के लिए इसके ताबीज का इस्तेमाल करते हैं।

इसका प्रचार करने वाली वेबसाइटों के मुताबिक, शास्त्रों में अस्वच्छ बताई गई सियार के सींग की हड्डी समृद्धि लाती है, कानूनी मुकदमे जीतने में मदद करती है, विवाहित जोड़ी को बनाए रखती है, स्वास्थ्य सुनिश्चित करती है, जमीन-जायदाद लाती है और अवसाद दूर करती है। यदि इस हड्डी को 'जागृत' कर दिया गया (इसका अर्थ है लाखों की लागत से की जाने वाली पूजा-अर्चना आदि) तो इससे ऑटिज्म, मानसिक रोग, पैनिक डिसऑर्डर, एकाग्रता की समस्या, अतिसक्रियता, ऑटिज्म स्पेक्ट्रम डिसऑर्डर (एएसडी), खाने-पीने से जुड़ी गड़बड़ियाँ, स्किट्सफ्रीनिया, मादक पदार्थों की लत इत्यादि दूर हो सकते हैं। ये वेबसाइट पुलिस की नजर में है और इनके संचालकों के खिलाफ आवश्यक कार्रवाई की जाएगी।

जातक कथाओं में सियार को बुद्धिमान प्राणी के रूप में दर्शाया गया है। इनकी संख्या में कमी का असली कारण उनके सिर की वह काल्पनिक हड्डी है, जिसे कुछ लोग सौभाग्य का प्रतीक मानते हैं।

अलग-अलग वेबसाइट पर धर्म के मुताबिक विविध मंत्र भी दिए गए हैं। इन मंत्रों का कोई अर्थ नहीं है, पर वेबसाइटों के मुताबिक आपको ये मंत्र 21 से 108 बार बांचने होते हैं। इतना करने के बावजूद मंत्र तब तक कारगर नहीं होगा, जब तक कि वेबसाइट से एक माणिक की माला न खरीद ली जाए। इसके लिए ग्राहक से नियमित शुल्क लिया जाता है और लागत बढ़ती ही जाती है।

जड़ी को और महंगा बनाने के लिए अजीब किस्म के विवरण जोड़े गए हैं। जैसे, सियार महज सियार नहीं होता बल्कि एक दुर्लभ प्रजाति है जिसे मोतिया कहते हैं, यह ऐसा वैसा मोतिया नहीं बल्कि झुण्ड का नेता होता है इत्यादि। सवाल उठता है कि वेबसाइट संचालकों को कैसे पता कि अमुक सियार झुण्ड का नेता है और उसके

सिर पर सींग है। तो अजीबो गरीब किस्से और भी है। सियार सींग से शायद लोग कम मूर्ख बन पा रहे थे कि अब बाजार में सियार के गुप्तांग से पैदा होने वाली नई चीज बाजार में लाई गई है, जिसे पवित्र वस्तु के रूप में बढ़ावा दिया जा रहा है।

हर वेबसाइट का दावा है कि सियार सिंघी बेचने वाली दूसरी वेबसाइटें या दुकानें फर्जी हैं। यदि 21वीं सदी में आपको लगता है कि किसी जीव-जंतु की हड्डी या बाल के रेशे के सहारे आप वह सब कुछ हासिल कर सकते हैं जो आपको मेहनत, प्रार्थना, शिक्षा और महत्त्वाकांक्षी से नहीं हासिल, तो इन फर्जी वेबसाइटों के मालिकों की जेब भरने के लिए आप स्वतंत्र है।

एन्वायर्नमेंट इंडेक्स

विश्व में पर्यावरण सुरक्षित रखने के प्रयास जारी है। येल यूनिवर्सिटी की पहल एन्वायर्नमेंट परफॉर्मेंस इंडेक्स के अनुसार जानते हैं पर्यावरण के लिए काम कर रहे टॉप देशों के बारे में -

देश	रैंकिंग
स्विट्जरलैंड	1
फ्रांस	2
डेनमार्क	3
माल्टा	4
स्वीडन	5
यूके	6
भारत	177

हिंसा के साये में दुनिया : छीन ले गया सुकून खूनी जुनून

चेहरा बदल रही है हिंसा, कभी नकाब में तो नैराश्य और बढ़ती असमानता

दुनिया भर में सुकून को किसी की नजर लग गई है। हिंसा अलग-अलग रूपों में इंसानी वजूद के लिए खतरा बन रही हैं। इतिहास में हालात यूं तो बहुत कम बार ही अच्छे रहे हैं, लेकिन वर्तमान हालात खतरे की ओर इशारा कर रहे हैं। अमरीका के लास वेगांस में एक सनकी ने कई लोगों को अकारण ही मौत के घाट उतार दिया।

पता नहीं क्यूं? हिंसा को तो बस एक बहाना चाहिए और अपना चेहरा वो आम कर देती है। कभी आस्था, कभी जाति तो कभी नस्ल के नाम पर। मेरी आस्था, मेरी सोच, मेरे सोच के समान दूसरे की सोच यदि नहीं है तो यह मानसिक रूप से हिंसा के लिए जमीन तैयार करती है। पिछले सौ वर्षों में दुनिया दो विश्व युद्ध झेल चुकी है। तीसरा झेलने की स्थिति में नहीं है। हिंसा को पूरी तरह से मिटाया तो नहीं जा सकता लेकिन प्रयास तो हमें करना ही होगा....

वैचारिक युद्ध हो...

क्यों बन रही हिंसक सोच स्टेटस सिंबल?

हम दुनिया के बाशिदें हैं, जहाँ जल, जंगल और पहाड़ ही नहीं हिंसा भी रहती है और हम अक्सर अपनी हिंसक प्रवृत्तियों को जंगलीपन से जोड़ देते हैं। जंगल राज से जोड़ देते हैं, पर क्या सच में ऐसा है? हिंसक जानवर भी तब आक्रमण करता है कि जब उसे भूख लगती है। अपने शिकार से वो पेट भरता है, उसे स्टेटस सिंबल की तरह नहीं देखता, उसे आनंद की तरह नहीं लेता। जंगल में कभी इतनी हिंसा नहीं दिखाई कि कोई स्पार्टाकस जन्मे। ये तो इंसानी बस्तियों में ही होता रहा है कि दो दासों के बीच तब तक युद्ध करवाया जाता था, जब तक कि कोई एक मर न जाए। हमारी नई पीढ़ी भी एक खास खेल में बहते हुए खून को देखकर खुश होती है। दरअसल, इंसान सिर्फ पेट की आग के बारे में नहीं सोचता, स्टेटस सिंबल और आनन्द भी चाहिए उसे। इससे कतई फर्क नहीं पड़ता कि वो किस धर्म, किस संप्रदाय और किस प्रांत से है, जहाँ एक जैसी सोच वाले लोगों की तादाद ज्यादा होती जाती है, वो एकजुट होते जाते हैं, ताकि दूसरे तबके को खदेड़ा जा सके और ज्यादा से ज्यादा संसाधनों पर काबिज हुए जा सके। साथ ही हिंसा का आनन्द भी लिया जा सके। हाँ, शायद इंसानी समूह कभी-कभी हिंसा का आनन्द भी लेने लगता हैं। तो क्या हम यह मान लें कि इस प्रवृत्ति पर रोक नहीं लगेगी? कड़वी हकीकत है कि मानव सभ्यता का इतिहास युद्ध का इतिहास रहा है और कहा गया है कि कभी शांति के लिए भी युद्ध जरूरी होता है। यहाँ युद्ध वैचारिक स्तर पर लड़ने की जरूरत है। नदी, जल और जंगल की फिक्र करके हम थोड़े शांत हो सकते हैं। हमारी थाली में क्या है, ये हमारा

धर्म तय नहीं करता, ये हमारा इलाका तय करता है, जब तक पेट भरने जितना मिलता रहेगा, उम्मीद है कि हिंसक प्रवृत्ति दबी रहेगी, जब इतना भी नहीं मिलेगा, तो यह खुलकर जाहिर होगी और उतनी होगी कि उस पर नियंत्रण मुश्किल होगा।

हिंसा क्या मानवीय प्रवृत्ति हैं? ये सवाल सदियों से सामने रहा है। दरअसल, मानवीय वृत्तियों पर सभ्यता के अंकुश में ही इसका जवाब नीहित है। हिंसा को त्यागने के लिए उच्चतर मानवीय गुणों की जरूरत होती है।

कभी युद्ध, कभी आस्था तो कभी विचारधारा के नाम पर, अब बढ़ रही है सनक...

3 कारण हिंसा के....

जिनके कारण जिंदगी हो रही मुश्किल

दुनिया में हिंसा के ऐतिहासिक कारण रहे हैं पर पिछली एक शताब्दी में हिंसा की वारदात बढ़ी हैं। देश में भी हिंसा ने अपना खूनी चेहरा दिखाया है हिंसा हर साल कई लोगों की जिन्दगी को लील रही है।

भारत

गरीबी...बढ़ता असंतोष

गरीबों और अमीरों के बीच बढ़ रही खाई के कारण हिंसा बढ़ती है। संसाधनों का समुचित बंटवारा नहीं होने से देश के कई राज्यों में चरमपंथी विचारधारा आधारित हिंसा की वारदात होती है।

आस्था...बदलते मायने

धर्म के आधार पर हिंसा का देश में पुराना काला इतिहास रहा है। लोगों के समूह अपने-अपने धर्मों के नाम पर हिंसा करते हैं। देश में पिछले वर्षों के दौरान हुए दंगों से आस्था के मायने हिंसक हुए।

जाति...समाज में दरार

भारतीय समाज का सत्य है जाति। लेकिन ये हिंसा का एक बड़ा कारण भी

है। इससे समाज में बड़े पैमाने पर विभेद भी पैदा होता है। कई राज्यों में जाति आधारित हिंसा का इतिहास रहा है।

नस्लवाद...रंगभेद मनभेद

पश्चिमी समाज में नस्लवाद का जहर कई निर्दोषों को निशाना बना चुका है। श्वेत और अश्वेत नृजातीय समूहों के बीच रंग को लेकर हिंसा का एक पूरा कटु इतिहास रहा है।

विस्तारवाद...बड़ा दंश

विस्तारवादी सोच के चलते पश्चिम के कई देशों ने दुनिया के कई देशों को उपनिवेश के रूप में तब्दील किया। इस संघर्ष के दौरान हुई हिंसा में लाखों लोगों को अपनी जान गंवानी पड़ी।

असमानता...वर्षों तक

पश्चिमी देशों में औद्योगिक क्रांति के बाद आर्थिक असमानता से कई समूहों में द्वेष की भावना पनपी। इसके कारण यूरोप के कई देशों में हिंसक संघर्ष भी हुआ।

रु. 18.60 लाख करोड़

रु. 17.70 लाख करोड़

जीडीपी में नुकसान... 34.20 लाख करोड़

2013 में 4 प्रतिशत

2014 में 3.6 प्रतिशत

2015 में 5 प्रतिशत

2016 में 8.60 प्रतिशत

137वां स्थान है भारत का ग्लोबल पीस इंडेक्स-2071 में

09 देशों की 10 फीसदी आबादी हिंसा की वजह से विस्थापित हुई या शरणार्थी बनी विश्व की वर्ष 2015-16

60 प्रतिशत आबादी हिंसा से विस्थापित सीरिया की जबकि सोमालिया और दक्षिण सूडान की 20 फीसदी

गरीबी भी मानव के प्रति हिंसा

हिंसा का सबसे विकृत रूप गरीबी है। ये कई अपराधों को जन्म देती है।

असहिष्णुता से भी लोकतंत्र की सकारात्मकता का हनन होता है।

महात्मा गांधी

समाज बदला कुछ में हिंसा की 'नो एंट्री'

ग्लोबल पीस इंडेक्स हर साल दुनिया के सबसे सुरक्षित (सेफ) देशों की सूची जारी करता है। इन देशों के समाज ने खुद को बदल ये मुकाम पाया।

79 देश आतंकवाद से ग्रसित विश्व में...

69 देश ऐसे, जहाँ कोई आतंकी घटना नहीं घटी 2015-16 में

163 में से 37 देशों ने माना कि उन पर आतंक का कोई असर नहीं पड़ा जो कि 22 फीसदी है।

रु. 1.25 लाख का प्रति व्यक्ति नुकसान हुआ वैश्विक हिंसा से वर्ष 2015-16 में

यूरोप

स्विट्जरलैंण्ड, स्लोवेनिया, आयरलैंड, चेक, डेनमार्क, ऑस्ट्रिया, पुर्तगाल, आइसलैंड

कारण.... यूरोप के इन देशों में आर्थिक उन्नति के कारण लोगों का जीवन अपेक्षाकृत रूप से विश्व के अन्य देशों से शांतिपूर्ण है। ऐसे में ये देश ज्यादा सुरक्षित है।

एशिया

जापान एशिया का एक मात्र देश है जो कि इस सूची में स्थान बना पाया है

कारण...आर्थिक रूप से एशिया का सबसे शक्तिशाली देश है जापान। द्वितीय विश्व युद्ध में सब कुछ गंवा देने के बाद जापान ने आर्थिक प्रगति को अपना लक्ष्य बनाया। आज जापान एशिया का सबसे सुरक्षित देश है।

ऑस्ट्रेलिया

ऑस्ट्रेलिया के साथ पड़ोसी देश न्यूजीलैंड भी विश्व के सुरक्षित देशों में शामिल है

कारण....ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंण्ड नए इलाके है। पश्चिमी तौर तरीकों

वाले ऑस्ट्रेलिया में वैसे कुछ समय पूर्व भारतीयों पर हमले भी हो चुके हैं।

सबसे असुरक्षित...

एशिया के तीन देश सीरिया, अफगानिस्तान और इराक सबसे असुरक्षित देश हैं?

कारण...एशिया के इन तीनों ही देशों में राजनीतिक अस्थिरता के कारण गृहयुद्ध के हालात हैं। यहाँ के नागरिकों का दूसरे देशों में पलायन जारी है। तीनों ही देशों को दुनिया के सबसे असुरक्षित देशों में शामिल किया गया है।

06 निवारण : इनसे होगा वैश्विक स्तर पर हिंसा का खात्मा

अहिंसा

आज पूरी दुनिया में हिंसा का जवाब हिंसा से दिया जा रहा है। हिंसा के खात्मे के लिए जवाब अहिंसा से देने की जरूरत है। आग को बुझाने के लिए पानी की जरूरत होती है ठीक वैसे ही हिंसा के खात्मे में अहिंसा की भूमिका भी काफी महत्त्वपूर्ण होती है।

युवा शक्ति

युवा देश और समाज के दिशा निर्धारक होते हैं। हिंसा समाप्त करने के लिए युवाओं को रचनात्मकता और अहिंसक आंदोलन से जोड़ना होगा। क्योंकि शांति और समानता पर आधारित समाज निर्माण में युवाओं ने पूर्व में भी अहम किरदार को निभाया है।

आधी आबादी

दुनिया भर में हिंसा चाहे कहीं पर हो रही हो इसकी कीमत नारी को ही चुकानी पड़ती है। प्रतिहिंसा की शिकार भी सर्वाधिक नारी ही होती है। नारी को अधिक प्रतिनिधित्व के जरिए मजबूत बनाने से हिंसा रोकने में मदद मिलेगी। इस ओर प्रयास होने चाहिए।

समानता

हिंसा के फैलने के कई कारणों में एक बड़ा कारण असमानता भी है। मुख्य तौर पर आर्थिक असमानता। गैरबराबरी से लोगों में असंतोष पनपता है। उन्हें लगता

है कि उनके साथ अन्याय हुआ है और वे हिंसक हो जाते हैं। समानता से हिंसा कम होगी।

आस्था

विश्व में वर्तमान समय में सबसे अधिक हिंसा धर्म के नाम पर हो रही है। धर्म की गलत व्याख्या करके हिंसा फैलाई जा रही है। धर्मगुरुओं को सही व्याख्या करनी होगी क्योंकि कोई भी धर्म हिंसा नहीं सिखाता है। इस संदेश को और फैलाना होगा।

विकास

विकास का वर्तमान मॉडल सभी का विकास नहीं कर पा रहा है। सभी लोगों को विकास करने के लिए समावेशी विकास के मॉडल को अपनाने की जरूरत है जिससे समान अवसर उपलब्ध होने से हिंसा को रोकने में मदद मिलेगी और हालात बेहतर बनेंगें।

विश्व के 20 प्रदूषित शहरों में शीर्ष 14 भारत के

डब्ल्यूएचओ की रिपोर्ट : कानपुर सर्वाधिक प्रदूषित, मोदी का बनारस तीसरे नंबर पर

नई दिल्ली। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के अनुसार दुनिया के सर्वाधिक 20 प्रदूषित शहरों में से शीर्ष 14 शहर भारत के हैं जिसमें दिल्ली, कानपुर और वाराणसी शामिल हैं।

डब्ल्यूएचओ की बुधवार को जारी रिपोर्ट के अनुसार पी एम.2.5 स्तर के हिसाब से वर्ष 2016 में विश्व के 20 सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में कानपुर पहले स्थान पर था। इसके बाद फरीदाबाद, वाराणसी, गया, पटना, दिल्ली, लखनऊ, आगरा, मुज्जफरपुर, श्रीनगर, गुरुग्राम, जयपुर, पटियाला तथा जोधपुर का स्थान है।

रिपोर्ट के अनुसार पी एम-10 स्तर के हिसाब से दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में भारत के 13 शहर शामिल हैं। इन प्रदूषित शहरों की सूची में तो भारत के कुछ शहर हटे हैं तो कुछ नए शहर शामिल हुए हैं। कानपुर का औसत पी एम-2.5 स्तर 173 है जोकि डब्ल्यूएचओ के निर्धारित मानक स्तर से 17 गुना अधिक है। फरीदाबाद में पी एम-2.5 का स्तर 172, वाराणसी में 151 हैं और दिल्ली में पी एम-

2.5 का स्तर 143 है।

रिपोर्ट के अनुसार दुनिया में प्रत्येक 10 में से नौ व्यक्ति प्रदूषित हवा में सांस ले रहे हैं। घर के भीतर और बाहर के वायु प्रदूषण के कारण होने वाली बीमारियों से दुनिया भर में प्रति वर्ष 70 लाख लोगों की मौत हो जाती है।

रिपोर्ट में भारत सरकार द्वारा गरीब परिवारों को स्वच्छ रसोई ईंधन उपलब्ध कराने के लिए शुरू की गई प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना का विशेष रूप से उल्लेख करते हुए कहा गया है कि इसके तहत सिर्फ दो वर्षों में करीब तीन करोड़ 70 लाख गरीब महिलाओं को मुफ्त एलपीजी कनेक्शन उपलब्ध कराए गए हैं ताकि घरों के भीतर वायु प्रदूषण कम किया जा सके।

दुनियाभर की 34 फीसदी मौतें भारत में

घरेलू और बाहरी प्रदूषण से भारत में हर साल 24 लाख लोगों की मौत होती है। जो दुनियाभर में कुल मौतों 70 लाख का 34 प्रतिशत है।

108 देशों के 4300 शहरों का डेटा जुटाया गया

डब्ल्यूएचओ की ग्लोबल अर्बन एयर पॉल्यूशन ने 108 देशों के 4300 शहरों से पीएम 10 और पीएम 2.5 के महीन कणों का डेटा तैयार किया। इसके मुताबिक, 2016 में वायु प्रदूषण से 42 लाख लोगों की मौत हुई है। वहीं, खाना बनाने, फ्यूल और घरेलू उपकरणों से फैलने वाले प्रदूषण से 38 लाख लोगों की मौत हुई। 2016 से डब्ल्यूएचओ ने इसमें 1000 ज्यादा शहरों को शामिल किया गया है। जिससे कि ज्यादा देश वायु प्रदूषण को कम करने के लिए कदम उठाएँ।

कम और मध्यम आय वाले देशों में 90 प्रतिशत लोगों की मौत

डब्ल्यूएचओ के मुताबिक, दुनियाभर में हर साल 70 लाख लोग हवा में महीन कणों की वजह से फेफड़ों के रोग, हृदय रोग, कैंसर, श्वसन संक्रमण, निमोनिया फैलने से मर जाते हैं। रिपोर्ट के मुताबिक, वायु प्रदूषण से मरने वाले 90 प्रतिशत लोग कम और मध्यम आय वाले देशों से हैं। जिनमें भारत समेत एशिया, अफ्रीका, यूरोप और अमेरिका के कुछ देश शामिल हैं।

40 प्रतिशत आबादी के पास कुकिंग फ्यूल साफ करने की तकनीक नहीं

रिपोर्ट के मुताबिक, दुनिया की कुल आबादी में 40 प्रतिशत के पास कुकिंग फ्यूल साफ करने की तकनीक तक नहीं है। यह घरों से फैलने वाले प्रदूषण का मुख्य कारण है।

डब्ल्यूएचओ ने उज्ज्वला योजना की तारीफ की

डब्ल्यूएचओ ने मोदी सरकार की उज्ज्वला योजना की तारीफ की। डब्ल्यूएचओ के मुताबिक, भारत सरकार प्रदूषण से निपटने के लिए सार्थक प्रयास कर रही है। प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना के तहत 2 साल में 3 करोड़ 70 लाख गरीब महिलाओं को फ्री गैस कनेक्शन दिए गए जिससे घरों से निकलने वाले प्रदूषण से बचा जा सके।

भयावह जल संकट से जूझ रहा भारत

21 शहरों में 2020 तक खत्म हो जाएगा भूजल

नई दिल्ली। भारत इस समय इतिहास के अपने सबसे चिंताजनक जल संकट से जूझ रहा है। देश के लगभग 60 करोड़ लोगों को पीने के साफ पानी की किल्लत है। ये समस्या अगले दो सालों में और भयावह होने जा रही है। जी हाँ, अगले दो साल में देश की राजधानी दिल्ली, बेंगलुर और हैदराबाद समेत 21 शहरों में भूजल (जमीन के नीचे मौजूद पानी) भंडार सूख जाएँगे। नीति आयोग ने ये भयावह आँकड़े अपनी ताजा रिपोर्ट में जारी किए हैं। रिपोर्ट बताती है कि इस जल संकट से लगभग 10 करोड़ से ज्यादा लोग प्रभावित है।

नीति आयोग की 'कंपोजिट वॉटर मैनजमेंट इंडेक्स' नाम की इस रिपोर्ट को जल संसाधन मंत्री नितिन गडकरी ने हाल ही में पेश किया। रिपोर्ट में आशंका जताई गई कि 2030 तक देश में पानी की माँग मौजूदा सप्लाई से लगभग दो गुनी हो जाएगी। इससे करोड़ों लोगों के सामने प्यास से जूझने की नौबत आ जाएगी।

इसका असर देश के विकास पर भी पड़ेगा और जीडीपी में 6 फीसदी की कमी आएगी यानि जल संकट का प्रभाव लोगों के स्वास्थ्य के साथ-साथ देश की अर्थव्यवस्था पर भी देखने को मिलेगा, जो बेहद चिंता का विषय है। रिपोर्ट में कई

चौंकाने वाले आँकड़े भी सामने आए हैं। यह रिपोर्ट बताती है कि देश में लगभग 70 फीसदी पानी प्रदूषित हो चुका है, ये अब पीने योग्य नहीं है। पानी की गुणवत्ता सूची में मौजूदा 122 देशों में भारत 120वें नंबर पर है। इस समय पीने का साफ पानी मुहैया न होने की वजह से हर साल लगभग 2 लाख लोगों की मौत हो जाती है। इसमें इस बात पर जोर दिया गया है कि देश में जल संसाधनों और उनके इस्तेमाल के बारे में सही सोच विकसित करने की जरूरत है।

इस रिपोर्ट को डेलबर्ग एनालिसिस, फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गनाइजेशन (एफएओ) और यूनिसेफ जैसी स्वतंत्र एजेंसियों से मिले आँकड़ों के आधार पर तैयार किया गया है। नीति आयोग ने समग्र जल प्रबंधन के आधार पर सभी राज्यों की एक सूची भी बनाई है। इसमें 9 व्यापक क्षेत्र और 28 अलग-अलग सूचक हैं, उदाहरण के लिए, भूजल, जलाशयों की मरम्मत, सिंचाई, खेती के तरीके, पीने का पानी, जल नीति और प्रशासन शामिल है। इस सूची में गुजरात सबसे ऊपर है, जबकि झारखंड सबसे निचले पायदान पर हैं।

हालांकि यह पहली बार नहीं है, बेंगलुर में भयावह भूजल संकट को लेकर किसी ने ध्यान आकर्षित कराया है। कुछ महीने पहले बीबीसी की एक रिपोर्ट में भी इस समस्या को उजागर किया गया था। इस रिपोर्ट में बताया गया था कि बेंगलुर में तेजी से भूजल घट रहा है। जानकारों का भी मानना है कि जल संकट को लेकर खतरे की घंटी बज चुकी है। अगर जल्द ही जल प्रबंधन को लेकर उचित कदम नहीं उठाए गए तो स्थिति बेहद गंभीर हो जाएंगी।

प्रदूषण से बीमार हो रहे हैं पेड़

यूरोप के वैज्ञानिकों ने कहा है कि वायु प्रदूषण से इंसान ही नहीं बल्कि पेड़-पौधे भी गंभीर रूप से बीमार हो रहे हैं। फैक्ट्रीयों, डीजल इंजन आदि से निकलने वाले प्रदूषित वायु से पेड़ों को आवश्यक पोषक तत्त्व देने वाले माइकोरहिजल फंगी (फफूंद) खत्म हो रहे हैं।

एक अध्ययन

ब्रिटेन के इंपिरियल कॉलेज और कडीव गार्डन के वैज्ञानिकों ने 20 यूरोपीय देशों के 137 जंगलों से मिट्टी के 13 हजार नमूनों का अध्ययन करके यह निष्कर्ष

निकाला है। अध्ययन में ब्रिटेन और यूरोप में पेड़ों को कई तरह की बीमारियों के गिरफ्त में आने की पुष्टि हुयी है। वायु प्रदूषण के कारण पेड़ों को आवश्यक पोषक तत्व देने वाले फंगी तो मर ही रहे हैं, उनकी पत्तियों का रंग बदल रहा है और पत्तियाँ भी कम आ रही है।

जड़ों का कमजोर होना

अध्ययन के अनुसार पेड़ों के जड़ भोजन के लिए मुख्य रूप से फुंगी पर निर्भर रहते हैं जिनसे उन्हें नाइट्रोजन, फासफोरस और पोटाशियम मिलता है। फंगी को बदले में पेड़ से उन्हें कार्बन मिलता है और इस तरह दोनों का काम चलता है, लेकिन वायु प्रदूषण के कारण फंगी मर रहे हैं, जिससे पेड़ की जड़ें कमजोर हो रही है। वैज्ञानिकों ने वायु प्रदूषण में कमी लाने के लिए कड़े कानूनी कदम उठाये जाने पर जोर दिया है। वैज्ञानिकों की टीम के अनुसार, वायु प्रदूषण के कारण पेड़ बीमार हो रहे हैं और यह स्थिति खतरनाक स्तर पर पहुँच गयी।

जंगल में पेड़ विनाशकारी कीटों और गंभीर बीमारियों के संपर्क में आ रहे हैं और यह हालात जलवायु परिवर्तन के लिए उत्तरदायी हैं।

(साधु आदि आत्म साधकों के आहार ग्रहण के कारण)

आहार दाता करते चारों दान से मोक्ष दान तक

(आहारदाता देते चारों दान, शरीर, प्राण, रूप, विद्या, धर्म, तप, सुख, मोक्ष, दान)

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : 1. आत्मशक्ति....2. क्या मिलिए...)

आहार दान महान् है...पुण्यात्माजीव करते,
इह परलोक में दाता व पात्र लाभान्वित होते।
आहार दान गृहस्थ अपेक्षा महान् दान,
इससे देते चारों दान से ले मोक्ष दान।।(1)

आहार दान तो साक्षात् आहार दानी करते,

क्षुधारोग नाश से वे औषधदान देते।
प्राणरक्षा होने से अभयदान देते,
ज्ञानार्जन साधु करे अतः ज्ञानदान देते।।(2)

प्रकारान्त से/(विस्तार से) परोक्ष से बहुदान देते,
शरीर रक्षा होने से शरीर दान देते।
प्राणरक्षा होने से भी प्राणदान/(रूप) देते,
अध्ययन-अध्यापन (होने) से विद्यादान देते।।(3)

रत्नत्रयमय धर्म साधु पालन करते,
दशधाधर्म पालन से धर्मदान करते।
अन्तरंग-बहिरंग तप साधना करते,
अतः आहारदानी तपदान भी करते।।(4)

इह परलोक में भी सुख पाते,
अतएव आहारदानी सुखदान करते।
धर्म का अन्तिम फल मोक्ष ही होता,
अतएव आहार दानी मोक्षदानी होते।।(5)

अतएव आहार दानी बहुदान करते,
मूल में जल देने सम काम करते।
विशाल भी आम वृक्ष लाभान्वित होते,
मूल से ले फूल-फल पोषित होते।।(6)

अतएव दानी भी महान् फल पाते,
मिथ्यादृष्टि होने पर भी भोग भूमि जाते।
वहाँ से स्वर्ग जाकर पुनः मानव होते,
सम्यग्दृष्टि तो स्वर्ग से मोक्ष तक पाते (7)

अतः आहारदान भी सदाकरणीय,
यथायोग्य नवकोटि से भी करणीय।
अन्यदान भी नवकोटि से भी करणीय,

'कनकसूरी' संक्षेप में किया यहाँ वर्णन।।(8)

सागवाड़ा दि. 20.06.2018 समय रात्रि 09:10

सन्दर्भ-

यथा नौकाः निश्छिद्रा गुणमया त्रिविधरत्न परिपूर्ण।
तारयति पारावारे बहुजलचर संकटे भीमे।।509।।
तह संसार समुद्दे जाइ जरामरण जलयरा किण्णे।
दुक्ख सहस्साबत्ते तारेइ गुणाहियं पतं।।510।। (भाव सं.)

अर्थ : जिस प्रकार अनेक प्रकार के रत्नों से भरी हुई और नाव में होने वाले अनेक गुणों को धारण करने वाली बिना छिद्रवाली नाव अनेक जलचर जीवों से भरे हुए और अत्यन्त भयानक ऐसे समुद्र से पार कर देती है उसी प्रकार अधिक गुणों से सुशोभित होने वाले पात्र जो जन्म जरा मरण रुपी विकट जलचर जीवों से भरा हुआ है और जिसमें हजारों दुःखरूपी भंवर पड़ रहे हैं ऐसे इस संसार समुद्र से भव्य जीवों को पार कर देता है। इस प्रकार संक्षेप से पात्रों का स्वरूप बतलाया।

दान में देने योग्य द्रव्य

कुच्छिगयं जस्सण्णं जीरइ तवझाणवंभ चरिएहिं।
सो पत्तो णित्थारइ अप्पाणं चेव दायारं।।511।।

अर्थ : जिसका जो अन्न पेट में पहुँचने पर तपश्चरण ध्यान और ब्रह्मचर्य आदि के द्वारा सुखपूर्वक जीर्ण हो जाए पच जाय वही अन्न पात्र को भी संसार से पार कर देता है और दान वाले दाता को भी संसार से पार कर देता है।

एरिस पत्तम्मि वरे दिज्जइ आहारदाणमणवज्जं।
पासुय सुद्धं अमलं जोग्गं मणदेह सुक्खयरं।।512।।

अर्थ : इस प्रकार कहे हुए उत्तम पात्रों को निरन्तर आहार दान देना चाहिये। वह आहार निर्दोष हो प्रासुक हो, शुद्ध हो, निर्मल हो, योग्य हो और मन तथा शरीर को सुख देने वाला हो।

कालस्य अणुरुवं रोयारोयत्तणं च णाऊणं।
दायव्वं जह जोग्गं आहारं गेहवंतेण।।513।।

अर्थ : गृहस्थों को यथा योग्य ऐसा आहार दान देना चाहिये जो समय वा ऋतुओं के अनुकूल हो तथा जिसमें रोग वा नीरोगता का भी विचार हो।

पत्तस्सेस सहावी व दिण्णं दायगेण भत्तीए।
तं कर पत्ते सोहिय गहियब्बं विगइरायेण।।514।।

अर्थ : पात्र का भी यह स्वभाव होना चाहिये कि दाता ने जो भक्तिपूर्वक दान दिया है उसको कर पात्र में लेना चाहिये और उसको शोधकर बिना किसी राग द्वेष के ग्रहण कर लेना चाहिये।

आगे दाता का भी स्वभाव बतलाते हैं।

दायारेण पुणो विय अप्पाणो सुक्ख मिच्छमाणेण।
देयं उत्तम दाणं विहिणा वरणीय सत्तीए।।515।।

अर्थ : जो दान देने वाला दाता अपने आत्मा को सुख पहुँचाना चाहता है उसको विधिपूर्वक ऊपर कही हुई शक्ति के अनुसार उत्तम दान देना चाहिये।

लोभी दाता

जो पुण हंतइ धण कणइ मुनिहिं कुभोयणु देइ।
जम्मि जम्मिदालिददहण पुट्ठिं ण तहो छंडेइ।।516।।

अर्थ : जो पुरुष अन्न धन आदि के होते हुए भी मुनियों को कुभोजन देता है उसकी पीठ को दरिद्रता अनेक जन्मों तक भी नहीं छोड़ती अर्थात् वह अनेक जन्म तक दरिद्री बना रहता है।

आहार दान के लाभ

देहो पाणा रुवं विज्जा धम्मं तवो सुहं मोक्खं।
सव्वं दिण्णं णियमा हवेइ आहारदाणेण।।
देहः प्राणाः रुपं विद्या धर्मः तपः सुखं मोक्षः।
सर्वं दत्तं नियमात् भवेत् आहारदानेन।।517।।

अर्थ : शरीर, प्राण, रूप, विद्या, धर्म, तप, सुख और मोक्ष ये सब आहार के ऊपर निर्भर हैं। इसलिये जो भव्य पुरुष यतियों को आहार दान देता है वह नियम से शरीर, प्राण, रूप, विद्या, धर्म, तप, सुख, मोक्ष आदि सबका दान देता है ऐसा समझना चाहिये।

भुक्खं समा णहु वाही अण्णसमाणं य ओसहं णत्थि।

तम्हा अहार दाणे आरोगत्तं हवे दिण्णं।।518

अर्थ : इस संसार में भूख के समान अन्य कोई व्याधि नहीं है और अन्न के समान कोई औषधि नहीं है। इसलिये जो भव्य आहार दान देता है वह पुरुष आरोग्य दान भी देता है ऐसा अवश्य समझना चाहिये।

आहार मओ देहो आहारेण विणा पडेइ णियमेण।

तम्हा जेणाहारो दिण्णो देहो हवे तेण।।519

अर्थ : यह शरीर आहारमय है अन्न का कीड़ा है। यदि इसको आहार न मिले तो नियम से शिथिल होकर गिर पड़ता है। इसलिये जिसने ऐसे शरीर के लिये आहार दिया उसने उस शरीर को ही दिया ऐसा समझना चाहिये।

ता देहो ता पाणा ता रुवंताम णाण विण्णाणं।

जामा हारो पविसइ देहे जीवाण सुक्खयरो।।520।।

अर्थ : इस संसार में जब तक जीवों को सुख देने वाला आहार इस शरीर में रहता है तब तक ही यह शरीर है, तब तक ही प्राण रहते हैं तब तक ही रूप रहता है, तब तक ही ज्ञान रहता है और तब तक ही विज्ञान रहता है। बिना आहार के ये सब नष्ट हो जाते हैं।

आहारसणे देहो देहेण तवो तवेण रय सडणं।

रय णासेण णाणं णाणे मुक्खो जिणोभणइं।।521।।

अर्थ : आहार ग्रहण करने से शरीर की स्थिति रहती है, शरीर की स्थिति रहने से तपश्चरण होता है, तपश्चरण से ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मों का नाश होता है, ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मों के नाश होने से ज्ञान की प्राप्ति होती है और ज्ञान की प्राप्ति होने से मोक्ष की प्राप्ति होती है ऐसा जिनेन्द्र भगवान् ने कहा है।

आहारदान से चारों दानों का फल मिलता

चउविहदाणं उत्तं जे तं सयलमवि होइ हइ दिण्णं।

सविसेसं दिण्णेणय इक्केणाहारदाणेण।।522।।

अर्थ : जो पुरुष विशेष रीति से एक आहार दान को ही देता है उसने एक

आहार दान से ही समस्त चारों दान दिये, ऐसा समझा जाता है।

भुक्खा कय मरणभयं णांसइ जीवाण तेण तं अभयं।

सो एव हणइ वाही उसहं फुडअत्थितेण आहारो।।523।।

अर्थ : देखो भूख की पीड़ा अधिक होने से मरने का भय रहता है इसलिये आहार दान देने से अभयदान की भी प्राप्ति होती है। तथा भूख ही सबसे प्रबल व्याधि है और वह आहारदान से नष्ट होती है। इसलिए आहार दान देने से ही औषध दान समझना चाहिये।

आयाराई सत्थं आहारवलेण पढइ णिस्सेसं।

तम्हा तं सुयदाणं दिण्णं आहारदाणेण।।524।।

अर्थ : इस आहार के ही बल से आचार आदि समस्त शास्त्रों का पठन पाठन होता है। इसलिए एक आहार दान देने से ही शास्त्र दान का भी फल मिल जाता है। इस प्रकार एक आहार दान से चारों के फल मिल जाते हैं।

आहार दान का और भी महत्त्व

हय गयगो दाणाइं धरणीरय ण कणय आण दाणाइं।

तित्तिं ण कुणंति सया जह तित्तिं कुणइ आहारो।।525।।

अर्थ : घोड़ा हाथी और गायों का दान, पृथ्वी, रत्न, अन्न, वाहन आदि का दान देने से दान देने वालों को उतनी तृप्ति नहीं होती जितनी तृप्ति सदाकाल आहार दान देने से होती है।

मोक्षमार्गी साधु

भुंजेइ जहालाहं लहेइ जइ णाणसंजम णिमित्तं।

झाणाज्झयण णिमित्तं अणियारो मोक्खमग्ग रओ।।113।। रयण.

अर्थ : निर्ग्रंथ दिगम्बर साधु-मुनि आहार चर्या गोचरी-भ्रामरी वृत्ति आदि करते समय अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार विधि मिले वहाँ खड़े होते हैं और श्रावक के द्वारा मन वचन काय की शुद्धि तथा व्रत नियम को बतलाते हैं और नव विध भक्ति द्वारा अपने घर में प्रवेश कराते हैं तभी मुनिराज उस श्रावक के घर में जैसा भी शुद्ध प्रासुक आहार श्रावक अपने लिए बनाया है उस भोजन को चाहे राजा सेठ साहुकार हो या

गरीब हो उनके यहाँ जाकर मौन से शांति से निरीच्छापूर्वक सरस नीरस भी हो उसे लेते हैं और तुरन्त जहाँ पर-जंगल, धर्मशाला, मंदिर, बगीचा में रूकना है वहाँ चले जाते हैं।

मुनि-चर्या के विभिन्न प्रकार

उदरग्गिसमणमक्खमक्खणं गोयरिसब्भपूरण भमरं।
णाऊण तप्पयारे णिच्चेवं भुंजए भिक्खू।।114।।

अर्थ : मुनियों की चर्या वा आहार लेने की विधि आचार्यों ने पाँच प्रकार की बतलाई है। (1) उदराग्नि प्रशमन (2) अक्षभ्रक्षण (3) गोचरी (4) श्वभ्रपूरण भ्रामरी।(5)

मुनि जनों को इन सब भेदों को समझकर इन्हीं के अनुसार आहार चर्या और आहार ग्रहण करना चाहिए।

(1) उदराग्नि शमन-जितने आहार से उदर की अग्नि शान्त हो जाए, उतना ही आहार लेना।

(2) अक्षभ्रक्षण-जैसे गाड़ी को चलाने के लिए उसकी धुरी पर तेल लगाया जाता है उसी प्रकार इस शरीर को मोक्षमार्ग में चलाने के लिए आहार लेना।

(3) गोचरी-जैसे गाय की दृष्टि चारा-घास पर रहती है, चारा डालने वाले की सुन्दरता पर नहीं; इसी प्रकार मुनि की दृष्टि आहार पर रहती है, देने वाले की गरीबी अमीरी पर नहीं।

(4) श्वभ्रपूरण-इस पेटरूपी गड्ढे को सरस-नीरस चाहे जैसे आहार से भर लेना, जैसे गड्ढा कूडा-मिट्टी से भरते हैं।

(5) भ्रामरी-जैसे भ्रमर फूलों को कष्ट न देते हुए रस ग्रहण करता है, ऐसे ही गृहस्थ को कष्ट न देते हुए आहार ग्रहण करना।

धर्मानुष्ठान के लिए शरीर पोषण

रस रुहिर मंस मेदट्ठिसुकिल मलमुत्तपूयकिमि बहुलं।
दुग्गंध मसुइ चम्ममयमणिच्चमचेयणं पउणं।।115।।
बहुदुक्ख भायणं कम्मकारणं भिण्णमप्पणो देहो।

तं देहं धम्माणुट्ठाणकारणं चेदि पोसए भिक्खु।।116।।

अर्थ : यह शरीर-रस, रुधिर, माँस, मेदा, हड्डी, वीर्य, मल, मूत्र, पीव, वात, पित्त, कफ आदि अनेक दुर्गन्ध और अपवित्र से भरा है। तथा इस शरीर में अनेक प्रकार के कृमि-कीटक भरे हैं। ये सब ऊपरी चर्म से अच्छादित हैं यह शरीर दुर्गन्ध अपवित्रता का और रोगों का घर है। यह शरीर अनित्य है, जड़ है, नाश होने वाला है। यह शरीर अनेक प्रकार के दुःखों का पात्र है। कर्म आने का कारण है और आत्मा से सर्वथा भिन्न है। इसका विचार कर मुनिराज ऐसे शरीर का कभी पालन पोषण नहीं करते हैं, शरीर को शाश्वत और अपना नहीं मानते हैं।

परन्तु यही शरीर धर्मानुष्ठान का भी कारण है, इसे समझकर इस शरीर से धर्मसाधना करते हैं, धर्मसेवन करते हैं, धर्म क्रिया करते हैं, उपवास करते हैं, व्रतादि विधान पूजा आदि तप, संयम, त्याग आदि इसी शरीर के माध्यम से करते हैं, मोक्ष को पहुँचाने का कारण है। इसलिए इस शरीर को आत्म साधना, धर्म साधना के लिए उपकारी मानकर मुनिराज इस शरीर को थोड़ा सा आहार देकर बहुत काम लेते हैं। जैसे सेठ लोग मुनिम को थोड़ा तनखा देकर पूरा काम लेते हैं। क्योंकि बिना आहार के शरीर काम नहीं देता है और बिना शरीर के धर्मानुष्ठान कर नहीं पाते हैं। धर्मानुष्ठान ही चारित्र है। इस कारण बिना आहार शरीर की स्थिरता-व्याकुलता रहित धर्मसाधना चारित्र पालन आदि नहीं हो सकता है, इसलिए इस शरीर को अल्पस्वल्प शुद्ध प्रासुक स्वादिष्टादि से रहित आहार देते हैं। इससे चारित्र पालन किया जाता है, सात तत्त्वों का पालन करते हैं। मुनिराजों का आहार ग्रहण करने का मूल उद्देश्य कारण यही है।

वह साधु है क्या?

कोहेण य कलहेण य जायणसीलेण संकिलेसेण।
रुद्देण य रोसेण य भुंजइ किं वितरो भिक्खू।।117।।

अर्थ : जब जो साधु भिक्षार्थ श्रावक के घर आ जावे और आहार करते समय क्रोधित होकर हूँ करे और आँखें लाल लाल करके जोर से हंकार भरे कि जैसे किसी के ऊपर व्यंतर देव आ जाता है तब हूंकार भरता है, क्रोधित होते हुए आहार ग्रहण करता है कि जिससे आहार देने वाला दातागण घबड़ा जावे, पात्र इधर उधर

छोड़ देवे, आहार देते हुए काँपने लगे और दाता के तन में उद्वेग हो जावे।

इस प्रकार मुनि-साधु-कलह उत्पन्न करते हुए आहार ग्रहण करने वाला, आहार करते समय अंगुली भौंह हाथ का इशारा कर बार-बार भोजन पदार्थ माँगने वाला आहार की वस्तुओं को देखकर अपने माथे को ठोकने वाला और विचार करने वाला कि आज मैं इस घर में आकर फँस गया, यहाँ न घी है, न शक्कर है, न दूध है, न दही है और साग भाजी भी नहीं है, मैं क्या खाऊ? इस प्रकार मन में दुःखित होते जाना और आहार करते जाना अथवा दाताओं के यहाँ आहार करने के पहले या पीछे कलह करना इत्यादि। तथा आँखें फाड़ते हुए ठुकराते हुए या गुर्राते हुए शरीर की आकृति को बिगाड़ते हुए आहार करना। रोष दिखाते हुए, हाँ हूँ इत्यादि प्रकार से करते हुए, रोष करते हुए-जो आहार लेता है वह साधु क्या व्यंतर है?

जो कि व्यंतर, देव या नीच गति के देव होते हैं वे क्रोध करना, कलह करना रौद्र परिणाम धारण करना, संक्लेश परिणाम धारण करना आदि उन व्यंतरों का कार्य है, मुनियों का यह कार्य नहीं। इसलिए जो मुनि होकर भी ऐसा मलिन परिणाम करते हैं वे नीच व्यंतरों के समान हैं।

परन्तु मुनियों की यह कार्य-कृति नहीं है।

आगे कहते हैं कि-यह आहार तपाए हुए लोहे के पिंड के समान है-

आहार शुद्धि संदेश

दिव्वुत्तरणसरित्थं जाणिच्चाहो धरेइ जइ सुद्धो।
तत्तायसपिंडसमं भिक्खू तुह पाणिगयपिंडं।।118।।

अर्थ : हे मुनिश्वर! तेरे पाणिपात्र में (हाथ पर) श्रावक द्वारा जो दिया गया शुद्ध आहार का ग्रास-तपाये गये लोहे के समान शुद्ध जानकर आहार ग्रहण कर। इस आहार को ऐसा समझना चाहिए कि-श्रावक हमको जो शुद्ध आहार दे रहे हैं वह रोटी नहीं दे रहे हैं परन्तु ये साक्षात् रूप से मोक्ष को देने वाले है ऐसा समझ।

श्रावक के द्वारा शुद्ध आहार देने से-ज्ञानाभ्यास करने में प्रवृत्ति होती है, उदर भरने पर ध्यान-अध्ययन जाप-तप आत्म चिंतन में सहायक होता है। चित्त स्थिर रहता है।

मुनिजन-त्यागी वृंद को सदा निर्दोष और शुद्ध ही आहार करना चाहिये। क्योंकि निर्दोष आहार करने से ही परिणामों में विशुद्धता आती है। आकुलता नष्ट हो जाती है। यदि साधु निराकुलता पूर्वक आहार लेते हैं-ग्रहण करते हैं तो श्रावक श्राविकाओं को विशेष प्रसन्नता का अनुभव होता है, जिससे उन श्रावक दाताओं को भी अतिथि को दिया हुआ आहारदान का पुण्य लाभ विशेष रूप से होता है। क्योंकि श्रावकजन भक्ति भाव से श्रद्धापूर्वक धर्मपुण्य और मोक्ष मार्गस्थ साधु जनों को आहार देना है समझकर विनयपूर्वक नियम पूर्वक आहारदान देते हैं, अपने को धन्य मानते हैं, रत्नत्रयधारी त्यागी साधु जनों को आहार देना अपना कर्त्तव्य और दुर्मिल मानते हैं, स्वयं को भी आहार दान पुण्य लाभ से क्रमशः मोक्षमार्गस्थ समझते हैं।

युक्ताहारी साधु ही दुःखों के क्षय में समर्थ

संजम तवझाणाज्झयण विण्णाणये गिण्हये पडिग्गहणं।
वच्चइ गिण्हइ भिक्खू ण सक्कदे वज्जिदुं दुक्खू।।119।।

अर्थ : साधुओं को संयम को बढ़ाने के लिए, तपश्चरण करने के लिए, ध्यान को बढ़ाने के लिए, शास्त्र का अभ्यास-अध्ययन करने के लिए, तथा तत्त्वों का स्वरूप जानने के लिए श्रावक के यहाँ आहार स्वीकार करना चाहिए। मुनि को आहारदान देने के लिए श्रावक अपने द्वार पर पड़गाहन करने के लिए खड़े होते हें। मुनि जन आहार के समय पर अपनी प्रतिज्ञा से चर्या करते हैं। जहाँ जिस द्वारा पर त्यागी जनों की प्रतिक्षा करते हैं वहाँ पर विधि-नियम के अनुसार खड़े होते हैं। श्रावक भी शुद्धि बोलकर नवविध भक्ति के साथ पड़गाहन करके घर में प्रवेश कराते हैं और आहारदान देते हैं।

मुनिजन भी अपनी साधना के लिए अत्यन्त शांत परिणामों से आहार लेते हैं। अन्य प्रयोजन नहीं है।

शास्त्रागम से अनभिज्ञ साधु अथवा अंतरंग में देव गुरु धर्म और आत्म कल्याण की रूचि-आत्मीयता जिसकी नहीं है वह साधु-मुनि संसार मुक्त कभी नहीं हो सकता है।

पात्रों के अनेक प्रकार

अविरद देसमहव्वय आगमरुइणं वियार तच्चण्हं।
पत्तंतरं सहस्सं णिद्दिट्ठं जिणवरिंदेहिं।।120।।

अर्थ : जिनेन्द्र भगवान् ने अविरत सम्यग्दृष्टि से लेकर देश विरत और पंचमहाव्रतों तक पात्रों के हजारों भेद बतलाये हैं।

(1) कोई असंयमी-तत्त्वों में रूचि रखता है, कोई तत्त्वों का चिंतवन करता है, कोई स्वाध्याय पूजन करता है, कोई दया का पालन करता है, कोई सम्यक्त्व सहित है ये सब जघन्य पात्र हैं।

(2) सामान्य जिन गृहस्थीयों में आठ मूल गुणों को धारण किया है, एक प्रतिमा से लेकर ग्यारह प्रतिमा तक ऐसे ऐसे शक्यानुसार प्रतिमा का पालन करते हैं ये सब मध्यम पात्र में हैं। मध्यम पात्र के एक देश व्रत को पालन करने वाले को अणुव्रती श्रावक कहलाते हैं।

(3) पांच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति, अट्ठाईस मूलगुण, उत्तरगुणों को धारण करने वाले, पालन करने वाले निर्ग्रंथ दिगम्बर मुनि यति त्यागी साधु आदि अनेक भेदों से महाव्रती उत्तम पात्र कहे जाते हैं।

(4) तथा आर्यिका को भी उत्तम पात्र में ही गिना है। क्योंकि आर्यिका भी महाव्रतों का भाव पूर्वक पालन करती है, किसी भी प्रकार से व्रतों के पालन में बाधा लाने नहीं देती है। स्त्री पर्याय अवस्था के अनुसार शरीर को ढ़कना पड़ता है।

अहिंसा के लिये दाता के सात गुण

ऐहिक-फलाऽनुपेक्षः, क्षांतिर्निष्कपटताऽनसूयत्वम्।
अविषादित्व मुदित्वं, निरहंकारित्वमिति हि दातृगुणाः।।169।।

The qualifications of a donor are, disregard of worldly benefit, forbearance, sincerity, absense of jealousy, sorrow, joy and pride.

व्याख्या भावानुवादः निश्चय से दाता के सात गुण होते हैं। यथा- (1) धनादि इहलोक फल की वांछा नहीं करना, (2) क्षमा से युक्त होना (3) कपट रहित परिणाम होना (4) ईर्ष्या से रहित होना (5) खेद रहित होना (6) हर्ष से युक्त

होना (7) अहंकार से रहित रूप कोमलता होना, दाता के सप्तगुण हैं अर्थात् दाता को इन सप्त गुणों से युक्त होकर आहार देना चाहिये।

अहिंसात्मक द्रव्य देय

राग-द्वेषाऽसंयम, मद-दुःख भयादिकं न यत्कुरुते।
द्रव्यं तदेव देयं, सुतपः स्वाध्याय वृद्धिकरम्।।170।।

Only such things should be given (as food) as help in the prosecution of studies, and the due oberservance of austerities, and which not bring about foodness, disgust, incontinence, intoxication, pain, fear, etc.

व्याख्या भावानुवादः जिस आहारादि से राग, द्वेष, असंयम, मद, दुःख, भय आदि शब्द से घृणा, ग्लानि, दीनता, मलिनता, कलह, वैरत्व आदि होते हैं ऐसे आहारादि नहीं देना चाहिए। जिस आहारादि से राग-द्वेष आदि उपर्युक्त दुर्गुण उत्पन्न नहीं होते हैं ऐसे आहारादि देना चाहिए। जिससे सुतप अर्थात् बारह भेद रूप तप और पाँच भेद रूप स्वाध्याय की वृद्धि होती है, ऐसे आहारादि देना चाहिए।

समीक्षा : साधु जो आहार करते हैं उसका मुख्य उद्देश्य आत्म कल्याण आत्म साधना है। शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य तथा साधना के लिए साधु आहार करते हैं। आहार का प्रभाव शरीर एवं मन के ऊपर भी पड़ता है। इसलिए साधु को साधना के लिए योग्य आहार करना चाहिए तथा अयोग्य आहार नहीं करना चाहिए। श्रावक को साधु की प्रकृति-आयु तथा वातावरण को देखकर के आहार देना चाहिए। आयुर्वेद के अनुसार प्रकृति तीन प्रकार की होती है यथाः- (1) वात (2) पित्त (3) कफ। वात प्रकृति वाले को वायु कारक भोजन नहीं करना चाहिए। उन्हें मटर, बेसन, उड़द, ग्वार की फली, आदि भोजन नहीं करना चाहिए। पित्त प्रकृति वालों को मिर्च, उष्ण प्रकृति के भोजन, तेल, खट्टी चीज, तेल से तली हुई चीज नहीं खाना चाहिए। कफ प्रकृति वालों को ठण्डी चीज, शीत प्रकृति की चीज नहीं खाना चाहिए।

हितभुक् मितभुक् ऋतुभुक् (शाकभुक्)
शतपद गामी वामशायी च।

अविरोध विटपुरुष (मल-मूत्र) सदाचारी पुरुषः,

सोऽरुक् सोऽरुक्।।

हितभोजी, अल्पभोजी, ऋतु अनुकूल भोजी (शाकाहारी) आहार के बाद सौ पग चलने वाला, वाम पार्श्व में सोने वाला, मलमूत्र को नहीं रोकने वाला सदाचारी निरोगी होता है।

सम्पूर्ण आयुर्विद्या (चिकित्सा विज्ञान) इस सिद्धान्त में निहित है -

''हियाहार मियाहार अप्पाहार य जे नरा।

न ते विज्जातिगच्छति, अप्पाण ते तिगिच्छगा।।''

जो मनुष्य हित आहार, मित आहार और अल्पाहार करता है वह वैदिक चिकित्सा करने के लिए नहीं जाता है। स्वयं की चिकित्सा स्वयं कर लेता है।

''तहा भोत्तव्व जहा से जायमाताय भवति।''

न य भवति विब्भमो न मंसणा च धम्मस्स।।

उतना भोजन करो जिससे जीवन की संयम यात्रा सुचारु रूप से गतिशील होती है और जिससे विभ्रम उत्पन्न नहीं होता है और धर्म की भर्त्सना नहीं होती है।

भोजनक्रमः-

स्निग्धं यन्मधुरं च पूर्वमशनम भुंजति भुक्तिक्रमे।

मध्ये यल्लवणाम्लभक्षणयुतं पश्चात्तु शेषान्नसान्।।

ज्ञात्वा सात्म्यबलं सुखासनतले स्वच्छे स्थिरस्तत्परः।

क्षिप्रं कोष्णमथ द्रवोत्तरत्तरं सर्वर्तुसाधारणम्।।

भोजन करने के लिए जिस पर सुख पूर्वक बैठ सके ऐसे साफ आसन पर स्थित चित्त होकर अथवा स्थिरता पूर्वक बैठे। पश्चात् अपनी प्रकृति व बल को विचार कर उसके अनुकूल, थोड़ा गरम (अधिक गरम भी न हो अधिक ठण्डा भी न हो) सर्वऋतु के अनुकूल ऐसे आहार को शीघ्र ही (अधिक विलम्ब भी न हो अत्यधिक जल्दी भी न हो) उस पर मन लगाकर खावें। भोजन करते समय सबसे पहले चिकना व मधुर अर्थात् हलुवा, खीर, बर्फी, लड्डू आदि पदार्थों को खाना चाहिए तथा भोजन के बीच में नमकीन, खट्टा आदि अर्थात् चटपटा मसालेदार चीजों को व

भोजनांत में दूध आदि द्रव आहार खाना चाहिए। मन को प्रसन्न रखकर के भोजन करना चाहिए। यदि मन अवसाद युक्त है, क्रोधादि आवेश से सहित है, चिन्ता से ग्रस्त है तो किया हुआ भोजन विष के समान हो जायेगा। इससे अपच, वायु रोग, अल्सर, मन्दाग्नि आदि अनेक शारीरिक एवं मानसिक रोग हो जायेंगे। पहले थोड़ा-सा पानी पीकर पहले स्निग्ध (चिकनाई युक्त) गरीष्ट, घी, दूध आदि से निर्मित वस्तु जैसे- हलुवा, पूड़ी, लड्डू, गुलाब जामुन आदि खाद्यों को खाना चाहिए। मध्य-मध्य में थोड़ा-थोड़ा पानी धीरे-धीरे पीना चाहिए, पानी को कभी भी गट-गट करके नहीं पीना चाहिए। धीरे-धीरे पीने से कम पानी पीने से भी प्यास बुझ जाती है। मुँह में अनेक पाचक तत्त्व पानी में मिलकर पेट में जाते हैं जिससे भोजन ठीक से पच जाता है। पहले या अन्त में अधिक पानी नहीं पीना चाहिए। क्योंकि इससे अपच, अफरा, पेट दर्द आदि रोग हो जाते है। दाँतों की संख्या के अनुसार भोजन को बत्तीस बार चबाना चाहिए। भोजन को इतनी बार चबाना चाहिए कि वह पानी के समान पीने योग्य हो जावे। मध्य-मध्य में नमकीन युक्त भोजन करना चाहिए। परन्तु कभी भी भोजन में अधिक मिर्ची, गरम मसाला, नमक, इमली, खट्टी चीज, बासी चीज, दुर्गंध युक्त भोजन, ग्लानि युक्त भोजन, जूठन आदि नहीं खाना चाहिए। ठूस-ठूस करके भी भोजन नहीं करना चाहिए। वायु संचालन के लिए पेट के कुछ भाग खाली रखना चाहिए। खरबूजा खाकर पानी नहीं पीना चाहिए इससे हैजा रोग हो जाता है। घी या घी से निर्मित वस्तु खाने के बाद ठण्डा पानी नहीं पीना चाहिए इससे खाँसी, विभिन्न प्रकार के गले के रोग हो जाते हैं। इसी प्रकार फल या फलरस के बाद पानी नहीं पीना चाहिए। इससे भी खाँसी, जुकाम, हो जाता है। इसी प्रकार और भी जो विरोधाभासात्मक भोजन है वह भी नहीं करना चाहिए। भोजन के अन्त में हाथ, मुँह, पैर ठीक से धोना चाहिए एवं कुल्ला भी ठीक से करना चाहिए। मुँह में भोजन के कण नहीं रहना चाहिए।

जीव में जो भाव होते हैं वे भाव बाह्य क्रिया में विभिन्न रूप में प्रकट होते है। एक प्रसिद्ध युक्ति है कि ''जो पिण्ड सो ब्रह्माण्डे'' अर्थात् ''जिस प्रकार दृष्टि होती है उसी प्रकार सृष्टि होती है'', जैसी मति होती है वैसी गति होती है। इसी प्रकार जैसा विचार होते हैं वैसा ही आहार होता है। अर्थात् जैसा मन होता है वैसा ही अन्न ग्रहण होता है। इसलिए साधारण लोग कहते हैं कि यह भोजन मुझे अच्छा नहीं लगता है।

इससे सिद्ध होता है कि जिस तरह हमारा मन होता है उसी तरह का हम अन्न (भोजन) ग्रहण करते हैं। प्रसिद्ध लोकोक्ति है ''जैसा खावें अन्न वैसा होवे मन'' (As you eat so you become) अर्थात् जैसा आहार वैसा विचार, परन्तु सूक्ष्म अतिन्द्रिय मनोविज्ञान तथा आध्यात्मिक दृष्टिकोण से देखने पर उपर्युक्त नीति से विपरीत ''जैसा विचार होता है वैसा आहार होता है।'' इसलिये मनोवैज्ञानिक दृष्टि से ''जैसा होवे मन वैसा खावे अन्न'' अर्थात् (As you think so you eat) मैंने जो यह मेरा शोध पूर्ण विषय प्रस्तुत किया है। इसके समर्थन में गीता में प्रतिपादित विषय को यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ।

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा।

सात्त्विकी राजसी चन्व तामसी चेति तां शृणु।।2।।

श्री भगवान् बोले-मनुष्य में स्वभाव से ही तीन प्रकार की श्रद्धा अर्थात् प्रकृति होती है। यथा-सात्त्विक, राजसी और तामसी होती है, वह तू सुन।

सत्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।

श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः।।3।।

हे भारत! सबकी श्रद्धा अपने स्वभाव का अनुसरण करती है। मनुष्य में कुछ न कुछ श्रद्धा तो होती है। जैसी जिसकी श्रद्धा वैसा वह होता है।

यजन्ते सात्त्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः।

प्रेतान्भूतगणाश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः।।4।।

सात्त्विक लोग देवताओं को भजते हैं, राजस लोग यक्षों और राक्षसों को भजते हैं, और दूसरे तामस लोग भूतप्रेतादि को भजते हैं।

आहारस्त्वपि सर्वस्व त्रिविधो भवति प्रियः।

यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं ऋणु।।7।।

आहार भी तीन प्रकार से प्रिय होता है। उसी प्रकार यज्ञ, तप और दान (भी तीन प्रकार से प्रिय होता है) उसका यह भेद तू सुन।

आयुः सत्त्वबलारोग्य-सुखप्रीतिविवर्धनाः।

रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः।।8।।

आयुष्यः सात्त्विकता, बल, आरोग्य, सुख और रुचि बढ़ाने वाले, रसदार चिकने पौष्टिक और मन को रुचिकर आहार सात्त्विक लोगों को प्रिय होते हैं।

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः।

आहार राजसस्येष्टा दुःख शोकामयप्रदाः।।9।।

तीखे, खट्टे, खारे, बहुत गरम, चटपटे, रुखे, दाहकारक आहार राजस लोगों को प्रिय होते हैं और वे दुःख, शोक तथा रोग उत्पन्न करने वाले होते हैं।

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।

उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम्।।10।।

प्रहर भर से पड़ा हुआ, नीरस, दुर्गन्धित, बासी, जूँठा, अपवित्र भोजन तामस लोगों को प्रिय होता है।

न्याय से उपार्जित धन से प्राप्त भोजन ही सात्त्विक भोजन हो सकता है जो कि शुद्ध, प्रासुक, शाकाहार या दुग्धाहार हो। जैसे-दूध, घी, फल, भात, रोटी, दाल, सूखा मेवा, फलरस आदि। यह भोजन भी तब तक सात्विक रहेगा जब तक यह भोजन ताजा, सुगन्ध युक्त, चक्षु के लिये प्रिय वर्ण, सुस्वादयुक्त, स्निग्ध मन को प्रिय लगने वाला होगा। यदि यही भोजन जब बासी हो जाता है, दुर्गन्ध आने लगती है, विवर्ण हो जाता है। तब भोजन तामस या अभक्ष्य हो जाता है। जिह्वा लोलुपता से परिपूर्ण चरपरा, चटपटा, मसालेदार, गरम-मसाला से युक्त भोजन राजसी है। ऐसे भोजन से क्रोध बढ़ता है, शरीर की उष्णता बढ़ती है, तन-मन उत्तेजना युक्त हो जाते हैं, जिह्वा की लालसा बढ़ती है, काम उत्तेजना बढ़ती है एवं शारीरिक व मानसिक रोग भी हो जाते हैं। बासी भोजन अमर्यादित खट्टा-मट्ठा एवं दही, बासी रोटी, अमर्यादित अचार, पापड़, मुरब्बा, मिठाइयाँ, माँस-मछली, अण्डा, शराब,तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट, पान-पराग, चुटकी, रजनीगन्धा, पान-मसाला, टेस्टी, तुलसी, जर्दा आदि तामसिक भोजन हैं। इससे मन-तम (अज्ञानरूपी अन्धकार) से युक्त हो जाता है। इससे विवेक नष्ट हो जाता है। मन भ्रमित हो जाता है, अनेक शारीरिक एवं मानसिक रोग भी हो जाते हैं।

जैसा करे विचार वैसा करे आहार

जो न्याय, नीति, सदाचार, शिष्टाचार, शिष्टता, भद्रता, नम्रता, सरलता, अहिंसा,

दया, करुणा आदि गुण से युक्त सात्त्विक व्यक्ति को सात्त्विक भोजन भाता है अर्थात् उसकी भोजन की स्वाभाविक प्रवृत्ति सात्त्विक आहार (भोजनवस्तु) में होती है। इसी प्रकार विलास प्रिय, भोगी, क्रोधी व्यक्ति की स्वाभाविक प्रवृत्ति राजसिक भोजन में होती है। मन्दबुद्धि वाला क्रूर, हिंसक, आततायी, भ्रष्टाचारी, गुण्डा, दुष्ट व्यक्ति की प्रवृत्ति तामसिक भोजन में होती है। जिस प्रकार राजहंस को मोती, दूध आदि प्रिय लगता है, मधुमक्खी को मधुप्रिय लगता है, माँसाहारी पशु-पक्षी को जिस प्रकार माँस प्रिय लगता है, ऊँट को बबूल प्रिय लगता है, उसी प्रकार सात्त्विक आदि व्यक्तियों को सात्त्विक आदि भोजन प्रिय लगता है। सात्त्विक आदि जीवों की गतिविधियाँ, आचार-विचार की पद्धतियाँ भी भिन्न-भिन्न होती है। कर्मयोगी नारायण श्री कृष्ण ने संक्षिप्त रूप से दुःख से निवृत्त होने का उपाय बताते हुए कहा है -

युक्ताहार विहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु।
युक्त स्वभाव बोधस्य योगो भवति दुःखहा।।17।। गीता

He who is moderate in food, moderate in recreation moderate in necessary action, moderate in steep, moderate in walking, can be able to practise Dhyana (Yoga) the destroyer of grief.

जिसका आहार,विहार नियमित है, कर्मों का आचरण नपा तुला है और सोना जागना परिमित है, उसको यह योग दुःख घातक अर्थात् सुखावह होता है।

(गीता रहस्य अथवा कर्मयोगी शास्त्र, लेखक-बाल गंगाधर तिलक)

जैसा होवे आहार वैसा होवे विचार एवं आचार :-

जीव के शरीर, उसकी द्रव्यात्मक इन्द्रियाँ, उसके द्रव्य मन पूर्णतः भौतिक (पौद्गलिक) होने के कारण एवं उसकी भावात्मक इन्द्रियाँ भाव मन की सूक्ष्म आध्यात्मिक दृष्टि से क्षयोपशमिक भाव होने से पौद्गलिक (भौतिक) है।

भोजन, पानी आदि भौतिक वस्तु होने के कारण इसका भी सुप्रभाव एवं कुप्रभाव जीव के ऊपर पड़ना भी स्वाभाविक है। जिस प्रकार पानी की कमी होने से प्यास लगती है एवं पानी पीने से शरीर, इन्द्रियाँ व मन तरोताजा हो जाते हैं। इसी प्रकार शराब पीने से शरीर दुर्बल एवं रोगाक्रान्त हो जाता है, मन क्षुब्ध हो जाता है तथा विवेक नष्ट हो जाता है। इसी प्रकार शुद्ध शाकाहार, माँसाहार, शुद्ध पानी एवं

नशीले पानी के बारे में भी जान लेना चाहिए। इसलिए कहा गया है-

As you eat so you think and as you think so you become. Our body is what we eat.

अर्थात् जैसे आहार करते हैं वैसे विचार करते हैं एवं जैसे हम विचार करते हैं वैसे हम परिणमन करते हैं। हमारा शरीर वैसा है जैसा हम आहार करते हैं।

Animal food for those,
who will fight and die,
and vegetable food for those,
who will live and think.

माँसाहार उनके लिये हैं जो लड़ेंगे एवं मरेंगे।

शाकाहार उनके लिये हैं, जो जीवित रहेंगे एवं चिन्तन करेंगे।

जो अभक्ष्य भक्षण करते हैं, भ्रष्ट आचरण करते हैं वे शरीर से मानव होकर भी भाव से, क्रिया से दानव हैं। नीतिकारों ने कहा भी है।

माँसाहारी मानवा परतछ राक्षस अंग।
तिन की संगति मत करो, परत भजन में भंग।।
जो रक्त जगे कापड़े, जामा होवे पलीत।
जो रक्त पीवे मानुसा, तिन क्यों निर्मल चित्त।।

वर्तमान मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिकों ने भी सिद्ध किया है कि माँस, मद्य, धूम्रपान, तम्बाकू सेवन, अमर्यादित भोजन, अशुद्ध भोजन एवं अभक्ष भक्षण से अनेक शारीरिक, मानसिक रोग हो जाते हैं। इसका सविस्तृत वर्णन मैंने ''धर्म एवं स्वास्थ्य विज्ञान'' ''आदर्श विचार विहार आहार'' एवं ''व्यसन का धार्मिक वैज्ञानिक विश्लेषण'' में किया है। विशेष जिज्ञासु के लिए वहाँ अवलोकनीय हैं।

पात्र का स्वरूप : अहिंसक

पात्रं त्रिभेदमुक्तं, संयोगो मोक्षकारण-गुणानाम्।
अविरत-सम्यग्दृष्टिः विरताऽविरतः सकल-विरतश्च।।171।।

The recipients are of three classes, according to their

respective possession of qualities leading to Moksha. They are true believers without vows, with partial vows and full vows.

व्याख्या-भावानुवाद :- (1) उत्कृष्ट (2) मध्यम (3) जघन्य के भेद से पात्र तीन प्रकार के हैं। अविरत सम्यग्दृष्टि संयम से रहित होने के कारण तथा सम्यग्दर्शन से सहित होने के कारण चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जघन्य पात्र हैं। पंचम गुणस्थानवर्ती श्रावक विरताऽविरत होने के मध्यम पात्र हैं। समस्त पापों से विरत छट्टे गुणस्थानवर्ती मुनिराज उत्कृष्ट पात्र हैं। पात्र वे हैं जो मोक्ष के कारणभूत सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र से युक्त होते हैं।

दान में अहिंसाधर्म पलता

हिंसायाः पर्यायो, लोभोऽत्र निरस्यते यतो दाने।
तस्मादतिथि वितरणं हिंसा व्युपरमणमेवेष्टम्।।172।।

In making a gift one gets over greed, which is a form of Himsa and hence gifts made to a worthy recipient amount to a renunciation of Himsa.

व्याख्या-भावानुवाद : लोभी भी हिंसा का नामान्तर है। अर्थात् लोभ स्वयं भाव हिंसा है। इसलिये जहाँ लोभ है वहाँ हिंसा अवश्य ही है। जिस दान से लोभ का निराकरण होता है उसे दान कहते हैं। जिसके कारण अतिथि के लिये दिया गया दान हिंसा को दूर करता है, लोभ को दूर करता है, वही दान इष्ट है, मान्य है।

जो दान नहीं देता वह हिंसक

गृहमागताय गुणिने, मधुकर वृत्त्या परानपीडयते।
वितरति यो नाऽतिथये, स कथं नहि लोभवान् भवति।।173।।

Why should one be not called greedy if he does not offer (food) to a saint who visits his home, who is well qualified and who, acting like a honey bee, accepts gifts without causing any injury to others.

व्याख्या-भावानुवाद : जो पुरुष ऐसे अतिथि मुनियों के लिये आहार नहीं देता है वह किस प्रकार लोभवान् नहीं होगा अर्थात् वह निश्चय से लोभवान् होगा ही। जो मधुकर वृत्ति से गृहस्थों के घर में आते है तथा जो मूलगुण तथा उत्तरगुण से सहित होते हैं भ्रमर वृत्ति से दूसरों को बिना क्लेश दिये हुए आहार ग्रहण करते हैं ऐसे मुनियों के लिये जो उपासक-श्रावक-गृहस्थ आहार नहीं देते हैं वे कैसे लोभवान् और हिंसक नहीं होंगे। अर्थात् वे अवश्य लोभवान् और हिंसक होंगे ही।

समीक्षा : आचार्य श्री ने इस श्लोक में एक अत्यन्त रहस्यपूर्ण विषय का उद्घाटन किया है। आचार्य श्री ने यह सिद्ध किया कि यदि केवल कोई अस्त्र-शस्त्रों से दूसरों की हत्या करता है तो वह ही हिंसक नहीं है परन्तु जो योग्य पात्र को दान नहीं देता वह भी हिंसक है क्योंकि भाव हिंसा रूपी लोभ प्रवृत्ति उसके मन में व्याप्त है। इतना ही नहीं सम्यग्दृष्टि में सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र और उसके धारकों के प्रति अनुराग, भक्ति, समर्पित भाव होता है। वह उनका आदर करता है, सत्कार करता है, सेवा करता है। इन गुणों से युक्त जीव ही सच्चा धार्मिक है। मेरा प्रायोगिक अनुभव है कि अनेक व्यक्ति भोग विलासिता के लिये तो अनाप-शनाप खर्चा करेंगे, धार्मिक बाह्य आडंबरों के लिये, प्रदर्शन के लिये धन लुटायेंगें, नाम के लिये पंचकल्याणक आदि मेला-ठेला, भीड़-भाड़ में लाखों रूपयों की बोली लेंगे, अहिंसा का भाषण झाड़ेंगे परन्तु साधुओं को पानी तक नहीं पिलायेंगे, आहार नहीं देंगे। ऐसे व्यक्ति यथार्थ से धार्मिक नहीं हैं, अहिंसक नहीं हैं परन्तु धर्मान्ध लोभी तथा हिंसक है। जो जीवन्त धर्म-स्वरूप साधु-सन्तों की आहार दानादि देकर वैयावृत्ति नहीं करते हैं वे सब जड़वादी, जड़पूजक, बाह्य आडम्बरी हैं। इसका विशेष वर्णन मैंने अपनी कृति ''आहार दान से अभ्युदय'', ''पूजा से मोक्ष, पुण्य तथा पाप भी'' आदि में किया है।

दान भी अहिंसाव्रत

कृत्मात्मार्थं मुनये, ददाति भक्तमिति भावितस्त्यागः।
अरति-विषाद-विमुक्तः, शिथलित लोभो भवत्यहिंसैव।।174।।

When one gives to a saint, food out of what he has prepared for himself, such thought fully offered gift, which is without any

disregard or regret, with suppressed greed, is itself Ahimsa.

व्याख्या-भावानुवाद : जो पूर्वोक्त प्रकार से नवधा-भक्ति, सप्तगुणों से युक्त होकर स्वयं के लिये बना हुआ शुद्ध भोजन मुनियों के लिये देता है वह दान उसके लिए अहिंसा रूप ही होता हैं। जो व्यक्ति अप्रेम/अभक्ति, खेद (विषाद) से रहित होकर संतोष, प्रसन्न चित्त से लोभ को मन्द करता हुआ आहार दान देता है वह अहिंसा व्रती होता है।

समीक्षा : इसी ग्रन्थ में आचार्य श्री ने यत्र-तत्र-सर्वत्र हिंसा एवं अहिंसा का व्यापक, सूक्ष्म एवं सार्वभौम वर्णन किया है। वस्तुतः भाव की कलुषता ही हिंसा है और वह कलुषता लोभ, क्रोध, मान, माया, मिथ्यात्व आदि से आती है। कर्म सिद्धान्त के अनुसार एवं आध्यात्मिक दृष्टि से लोभ-राग सबसे बड़ा पाप है, परिग्रह है, प्रमाद है, इसलिये लोकोक्ति है-''लोभ पाप का बाप बखाना''। ऐसे लोभ को दूर करके जो पवित्र भक्ति भावना से आहार देता है वह अवश्य अहिंसक है, धर्मात्मा है, त्यागी है, दानी है। मेरा स्वयं का ग्यारह प्रदेश का प्रायोगिक अनुभव, यह है कि जो व्यक्ति साधुओं को आहार देते हैं उनका परिणाम अन्य स्वाध्याय, उपवास, पूजादि धार्मिक क्रियाओं को करने वाले व्यक्तियों से अधिक सरल, मृदु, दयालु, भोला, परोपकारी, निर्लोभी, त्यागी, दानी होता है। आहार दान से आचार्यों ने चारों प्रकार का दान होता है, ऐसा कहा है। क्षुधा-तृषा रूपी रोग दूर होने से आहार दान औषधिदान है। आहार करके निर्विघ्न अध्ययन करने से ज्ञान दान है तथा इससे जीवित रहा जाता है अतः अभय दान है। इस प्रकार आहार दान को पूजा, वैयावृत्ति, सेवा, वात्सल्यभाव, त्याग-दान भी कहा गया है। कुछ लोग जिनवाणी की तोता रटन्त जैसी पढ़ाई करके केवल मस्तिष्क की खुजली दूर करते हैं तथा घमण्ड को बढ़ाते हैं दूसरों से अनावश्यक वाद-विवाद करके फूट डालते हैं। कुछ लोग मन्दिर की ही सामग्री को ही एक थाली से दूसरी थाली में चढ़ाकर स्वयं को महान् धार्मिक मान लेते हैं और सोचते हैं ''मैं पूजा करके भगवान् का अहसान कर रहा हूँ। मेरे बिना तो भगवान् बिना सेवा-पूजा के बासी ही रह जाते।'' वे पूजा करते करते पूजा सामग्री को लेकर पूजा की पद्धति को लेकर यहाँ तक की कभी-कभी पाटला, चौकी, स्थान को लेकर लड़ेंगे-भिड़ेंगे गाली-गलौज करते रहेंगे और समाज में फूट डालते रहेंगे। कुछ उपवास करने वाले

भी चिड़चिड़ करते रहेंगे। उपवास में भी विकथा/कलह आदि करते रहेंगे। परन्तु मेरा अनुभव है कि आहार दान करने वालों में उपर्युक्त दुर्गुण के परिवर्तन में सुगुण पाये जाते हैं। इतना ही नहीं जो आहार दान देते हैं उन्हें अधिक परिश्रम करना पड़ता है, अधिक समय देना पड़ता है और अधिक विवेक से काम करना पड़ता है। आहार देने के लिए सुबह से लेकर मध्याह्न 1 बजे तक परिश्रम करना पड़ता है। शुद्धि, मर्यादा, अन्तराय, पद्धति, भक्ति आदि का ध्यान/ विवेक रखना पड़ता है। भोजन सामग्रियों को, बर्तन, पाटा, चौका, चन्दवा, लकड़ी आदि की व्यवस्था करनी पड़ती है और उसके लिये धन भी खर्च करना पड़ता है। इतना परिश्रम, इतना ध्यान, इतने सही तरीके से धन का सद्-उपयोग वर्तमान में अन्य क्षेत्र में देखने में नहीं आता है। अन्य क्षेत्र में ज्यादा करके नाम के लिये, दिखावे के लिये काम होता है परन्तु आहार दान में तथा दान कर्त्ता में इतनी विकृतियाँ अभी भी नहीं आयी है।

न क्रोधो न च मत्सरो न च मदो माया न कामो न न।
द्वेषो मोहसरागदर्पमदना लोभो भवेत्तस्य न।।
सम्यक्त्वव्रतगुप्तिपंचसमितिष्वासक्तिरभ्यासता।
नित्यं पुण्यविचारता निपुणता दानेषु यत्रादरः।।22।।

जिस भव्य को दान देने में आदर है उसको क्रोध, मात्सर्य, मद, माया, काम, द्वेष, मोह, गर्व, विषयाभिलाषा इत्यादि दोष दूषित नहीं करते हैं परन्तु सम्यक्त्व, व्रत, गुप्ति, समीति इत्यादि पुण्य विचारों में आसक्ति, नित्य पुण्य विषयों का विचार करना, सर्व कार्यों में नैपुण्य इत्यादि गुण उसको प्राप्त होते हैं।

वातघ्नो मलमुत्रकृच्छकहरो दुष्पित्तनुत्पुष्टिकृत्।
मेधाबुद्धिबलांगकांतिकरणः पापच्छिदग्निप्रदः।।
दृग्ज्ञानावरणापहो बहुगुणः शीतः सुसेव्यो बुधैः।
गव्याधार इवाप्यदभ्रगुणदो वर्षानुवत्सादरः।।20।।

जिस प्रकार गाय का घी आदि विधिपूर्वक सेवन किया जाय तो वह वातरोग को दूर करता है, मलमूत्र के विकार को नष्ट करता है, थकावट को दूर करता है, पित्तोद्रेक को हटाता है, शरीर को बल देता है, मेधा-बुद्धि और शरीर की कांति को बढ़ाता है, प्यास को दूर करता है, अग्नि तेज करता है, दृष्टिदोष, बुद्धिविकार इत्यादि

दोषों को दूर करता है। वह ठण्डा है, एवं सर्वजनों से सेव्य है उसी प्रकर जो व्यक्ति बहुत आदरपूर्वक दान देता है, उसका पापरूपी वात नाश होता है। उसका कर्ममल नष्ट होता है, उसकी तेज बुद्धि तेज हो जाती है, पाप का नाश होकर पुण्य की वृद्धि होती है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म दूर हो जाता है। वह शांत बनता है। विद्वानों द्वारा आदरणीय होता है। इस प्रकार आदरभाव से पात्रदान देने में बहुत से गुण प्राप्त होते हैं।

गृहकर्मणापि निचितं कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानाम्।
अतिथीनां प्रतिपूजा रूधिरमलं धावते वारि।।24।।

जिन्होंने अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग से घर का त्याग कर दिया है तथा सब तिथियाँ जिन्हें एक समान हैं, किसी खास तिथि से राग-द्वेष नहीं है ऐसे मुनियों के लिये जो दान दिया जाता है वह सावद्य व्यापार सपाप कार्यों से संचित बहुत भारी कर्म को भी उसी तरह नष्ट कर देता है जिस तरह कि जल, मलिन रूधिर को धो देता है नष्ट कर देता है।

उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा।
भक्तेः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु।।25।।

तपस्वियों को प्रणाम करने से उच्चगोत्र, दानादिक देने से, पड़गाहने से पूजा-प्रभावना, भक्ति अर्थात् गुणानुराग से उत्पन्न श्रद्धा विशेष से सुन्दर रूप, तथा 'आप ज्ञान के सागर है' इत्यादि स्तुति करने से कीर्ति प्राप्त होती है।

क्षितिगतमिव वटबीजं पात्रगतं दानमल्पपि काले।
फलति च्छायाविभवं बहुफलमिष्टं शरीरभृताम्।।26।।

जिस प्रकार उत्तम भूमि में उचित समय में डाला हुआ छोटा-सा वट का बीज संसारी जीवों को बहुत भारी छाया के साथ बहुत से इष्ट फल को फलता है उसी प्रकार उचित समय में सत्पात्र के लिये दिया हुआ थोड़ा भी दान संसारी प्राणियों के लिए अभिलाषित सुन्दर रूप तथा भोगोपभोग आदि अनेक प्रकार के फल को प्रदान करता है। दानपक्ष में छाया विभव का समास इस प्रकार होता है। **छाया माहात्म्यं विभवः सम्पत् तौ विद्येते यस्मिन् इति फलस्य विशेषणं** छाया का अर्थ माहात्म्य होता है और विभव का अर्थ संपत्ति होता है। छाया और माहात्म्य ये दोनों जिस फल

में विद्यमान है उस फल को दान देता है। वटबीज पक्ष में छाया का अर्थ अनातप-घामका अभाव होता है और विभव का अर्थ-प्राचुर्य-अधिकता लिया जाता है। छाया-आतप-निरोधिनी तस्या विभवः प्राचुर्यं यथाभवत्येवं। इस प्रकार क्रिया-विशेषण किया जाता है।

आचार्य श्री समन्तभद्रस्वामी ने दान को वैयावृत्ति/सेवा कहा है ''दान वैयावृत्यं'' - भोजनादिदानमपि वैयावृतयमुच्यते अर्थात् भोजनादि दान को भी वैयावृत्य कहते हैं। धवला, जयधवला, तत्त्वार्थ सूत्र, भगवती आराधना आदि में वैयावृत्य का सविस्तार वर्णन पाया जाता है। उन में सविस्तार वर्णन किया गया है कि जो वैयावृत्य करता है वह तीर्थंकर पुण्य प्रकृति का बन्ध करता है और आगे तीर्थंकर बनकर धर्मतीर्थ का प्रवर्तन करके मोक्ष को प्राप्त करता है। तीर्थंकर बनने की 16 भावना में से (1) वैयावृत्य के साथ-साथ (2) शक्ति के अनुसार त्याग (3) शक्ति के अनुसार तप (4) आचार्य भक्ति (5) बहुश्रुत भक्ति (6) वात्सल्य भाव। ये सब प्रत्यक्ष, परोक्ष या आंशिक रूप से वैयावृत्य सेवा/भक्ति/दान में गर्भित हैं। इससे भी सिद्ध होता है कि वैयावृत्य की महानता तथा व्यापकता कितना श्रेष्ठ/ज्येष्ट/गरिष्ट है। उपर्युक्त वर्णन से वैयावृत्य का महत्त्व स्पष्ट प्रतिभासित हो जाता है। स्वामी समन्तभद्र ने दान के साथ-साथ उनकी शारीरिक सेवादि को भी वैयावृत्य कहा है। यथाः-

व्यापत्तिव्यपनोदः पदयोः संवाहनं च गुणरागात्।
वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनाम्।।22।।

टीकार्थ : देशव्रती और सकलव्रती के भेद से संयमी दो प्रकार के हैं। इनके ऊपर यदि बीमारी आदि नाना प्रकार की आपत्तियाँ आई हैं तो उन्हें गुणानुराग से प्रेरित होकर दूर करना उनके पैर आदि अङ्गों का मर्दन करना तथा इसके सिवाय और भी जितनी कुछ समयानुकूल सेवा है वे सब वैयावृत्त्य नामक शिक्षाव्रत है। यह वैयावृत्य व्यवहार अथवा किसी दृष्टफल की अपेक्षा से न होकर मात्र गुणानुराग अर्थात् भक्ति के वश की जाती है।

भगवती आराधना जो मुख्यतः मुनियों के लिये रचना की गई है उसमें वर्णन किया गया है कि जो मुनि 6 महीना का उपवास करके पर्वत के ऊपर तप करता है या स्वाध्याय करता है उससे भी श्रेष्ठ वैयावृत्ति करने वाले साधु को कहा गया है।

वैयावृत्ति अन्तरंग तप है जैसा कि स्वाध्याय, ध्यान अन्तरंग तप है। रयणसार में कहा है - ''दाणं पूजा मुक्खं सावय धम्मे ण सावया तेण विणा'' अर्थात् दान, पूजा श्रावक धर्म में प्रमुख है और दान, पूजा बिना कोई श्रावक नहीं होता है। प्रवचनसार में आचार्य कुन्द कुन्द देव ने कहा है कि वैयावृत्ति श्रावक के मुख्य कर्त्तव्य है तथा साधुओं के गौण कर्त्तव्य है। तथापि साधुओं की शुभ क्रिया में वैयावृत्ति का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण बताया है यथा-

उवकुणदि जो वि णिच्चं चादुव्वण्णस्स समणसंघस्स।

कायविराधणरहिदं सो वि सरागप्पधाणो से।।249।। प्र. सार

(जा वि) जो कोई (चादुव्वण्णस्स समणसंघस्य) चार प्रकार साधु संघ का (णिच्चं) नित्य (कायविराधणरहिदं) छहकाय के प्राणियों की विराधना से रहित क्रिया द्वारा (उपकुणदि) उपकार करता है (सोवि) वह साधु भी (सरागप्पधाणो) शुभोपयोगीधारियों में मुख्य होता है।

समीक्षा : कुंदकुंद देव ने इस गाथा में सिद्ध किया है कि जो चतुर्विध संघ का उपकार करता है, वह धर्मानुरागी में श्रेष्ठ है। इससे सिद्ध होता है कि चतुर्थ गुणस्थानवर्ती से लेकर छट्ठे गुणस्थानवर्ती श्रमण तक का कर्त्तव्य धर्मात्मा का उपकार करना है। तुलसीदास ने कहा है :-

परोपकार सम धर्म नहि भाई।

नीतिकार व्यास ने भी कहा है-

अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयं।

परोपकाराय पुण्याय पापाय परपीडनम्।।

व्यास जी कहते हैं 18 पुराणों व 4 वेदों का संकलन मैंने दो वाक्यों में किया है ''परनोपकारं पुण्याय पापाय परपीड़नम्।'' पुण्य धर्म क्या है? कर्त्तव्य, परोपकार। अधर्म क्या है? अनीति, पाप, पर अपकार। हमारे आचार्यों ने भी कहा है -

श्लोकार्द्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रंथ कोटिभिः।

परोपकाराय पुण्याय पापाय परपीडनम्।।

रहिमन कवि ने कहा भी है -

तरुवर फल नहि खात है, नदि न संचै नीर।

रहिमन पर काज हित, सज्जन धरै शरीर।।

प्राचीन नीतिकारों ने भी कहा है -

परोपकाराय फलंति वृक्षा परोपकाराय वहन्ति नद्याः।

परोपकाराय दुहन्ति गावः परोपकाराय सतां प्रवृत्तयः।।

परोपकार के लिये जीवन भर वृक्ष जीवन शक्ति प्रदायक अमृत तुल्य उत्तमोत्तम फल देते हैं। परोपकार के लिए नदियाँ शीतल मधुर जल लेकर बहती हैं। परोपकार के लिये गाय अमृत तुल्य दूध जीवन भर देती हैं। इसी प्रकार परोपकार के लिए सज्जन सतत प्रयत्नशील रहता है।

वैयावृत्ति का वर्णन भगवती आराधना में निम्न प्रकार से किया है -

सतीए भत्तीए विज्जावच्चुज्जदा सदा होइ।

आणाए णिज्जरिति य सबालउड्डाउले गच्छे।।306।।

बालमुनि और वृद्धमुनियों से भरे हुए इस गण में सर्वज्ञ की आज्ञा से सदा अपनी शक्ति और भक्ति से वैयावृत्ति करने में तत्पर रहो। सर्वज्ञदेव की आज्ञा है कि वैयावृत्ति तप है और तप से निर्जरा होती है।

सेज्जागासणिसेज्जा उवधी पडिलेहणाउवग्गहिदे।

आहारोसहवायणविकिंचणुव्वत्तणादीसु।।307।।

सोने के स्थान, बैठने के स्थान और उपकरणों की प्रतिलेखना करना, योग्य आहार, योग्य औषधि का देना, स्वाध्याय कराना, अशक्त मुनि के शरीर का शोधन करना, एक करवट से दूसरी करवट लिटाना ये उपकार वैयावृत्य है।

अध्दाणतेण सावयरायणदीरोधगासिवे ऊमे।

वेज्जावच्चं उत्तं सगहसारक्खणोवेदं।।308।।

जो मुनि मार्ग के श्रम से थक गये हैं उनके पैर आदि दबाना, जिन्हें चोरों ने सताया हैं जंगली जानवरों से, दुष्ट राजा से, नदी को रोकने वालों से और भारी रोग से जो पीड़ित हैं विद्या आदि से उनका उपद्रव दूर करना, जो दुर्भिक्ष में फँसे है उन्हें सुभिक्ष देश में लाना 'आप न डरें' इत्यादि रूप से उन्हें धैर्य बंधाना तथा उनका संरक्षण करना वैयावृत्य कहा है।

वैयावृत्य न करने की निन्दा करते हैं :-

अणिगुहिदवलविरिओ वेज्जावच्चं जिणोवदेसेण।
जदि ण करेदि समत्थो संतो सो होदि णिध्दम्मो।।309।।

अपने बल और वीर्य को न छिपाने वाला जो मुनि समर्थ होते हुए भी जिन भगवान् के द्वारा कहे हुए क्रम के अनुसार यदि वैयावृत्ति नहीं करता है तो वह धर्म से बहिष्कृत हो जाता है यह इस गाथा का अभिप्राय है।

तित्थयराणाकोवो सुदधम्मविधणा अणायारो।
अप्पापरोपवयणं च तेण णिज्जूहिंद होदि।।310।।

वैयावृत्य न करने से तीर्थंकरों की आज्ञा का भंग होता है। शास्त्र में कहे गये धर्म का नाश होता है। आचार का लोप होता है और उस व्यक्ति के द्वारा आत्मा, साधुवर्ग और प्रवचन का परित्याग होता है। तप में उद्योग न करने से आत्मा का त्याग होता है। आपत्ति में उपकार न करने से मुनिवर्ग का त्याग होता है और शास्त्र आचरण न करने से आगम का त्याग होता है।

गुणपरिणामो सड्ढ़ा वच्छल्लं भत्तिपत्तलंभो य।
संधाणं तव पूया अव्वोच्छित्ति समाधी य।।311।।

वैयावृत्य करने का पहला गुण है 'गुण परिणाम' अर्थात् जो वैयावृत्य करता है उसकी पीड़ित साधु के गुणों में वासना होती है कि मैं भी ऐसा बनूँ और जिस साधु की वैयावृत्य की जाती है उसकी सम्यक्त्व आदि गुणों में विशेष प्रवृत्ति होती है। इसके सिवाय श्रद्धा, वात्सल्य, भक्ति, पात्र का लाभ, सन्धान अपने में गुण पूजा छूट गये हैं इनका पुनः आरोपण, तप, धर्म, तीर्थ की परम्परा का विच्छेद न होना तथा समाधि ये गुण हैं।

आणा संजमसाखिल्लदा य दाणं च अविदिगिंछा य।
वेज्जावच्चस्स गुणा पभावणा कज्जपुण्णाणि।।312।।

सर्वज्ञ के द्वारा उपदिष्ट वैयावृत्य करने से सर्वज्ञ की आज्ञा का पालन होता है। आज्ञा पालन से आज्ञा संयम होता है। वैयावृत्य करने वाले का उपकार होता है। निर्दोष रत्नत्रय का दान होता है। संयम में सहायता होती है। विचिकित्सा ग्लानि दूर

होती है। धर्म की प्रभावना होती है और कार्य का निर्वाह होता है।

इय दृढगुणपरिणामो वेज्जावच्चं करेदि साहुस्स।
वेज्जावच्चेण तदो गुणपरिणामो कदो होदि।।316।।

इस प्रकार ऊपर कहे गये यति गुणों में जिसका परिणाम दृढ़ होता है वह साधु की वैयावृत्य करता है। वैयावृत्य करने से गुण परिणाम होता है। आशय यह है कि इस यति में जो गुण हैं यदि मैं इनकी सेवा न करूँगा तो ये गुण नष्ट हो जायेंगे।

मानव तू महामानव बन!

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : 1. आ लौट के आ जा मेरे मीत...)

आओ! आओ रे! मानव आओ रे!ऽऽऽ... तू स्व-गुण धर्म पहचानो रे!ऽऽऽ
तू नहीं भौतिक तन-मन रे!ऽऽऽ तू नहीं बन्दर की सन्तान रे!ऽऽऽ
/(तू नहीं बन्दर के वंशज रे!ऽऽऽ)..(स्थायी)...

तू तो चेतनामय जीव द्रव्य...ज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्यमय...
तेरे पूर्वज थे मनु-राम-बुद्ध...तीर्थंकर-गणधर-सिद्ध...
खाना-पीना/(सोना) ही नहीं तेरे काम...होऽऽऽ होऽऽऽ होऽऽऽ2
आत्म पुरुषार्थ से सिद्ध बननाऽऽऽ आओ...(1)

सत्ता-सम्पत्ति-डिग्री ही नहीं लक्ष्य...आत्म श्रद्धा प्रज्ञा चर्या लक्ष्य...
दान-दया-सेवा-परोपकार करो...काम-भोग-विलासिता त्यज..
संकीर्णता-कट्टरता/(कटुता) त्यज रे..होऽऽऽ होऽऽऽ होऽऽऽ...2
सरल-सहज-मधुर बन रे!ऽऽऽ आओ...(2)

अस्त-व्यस्त-संत्रस्त तू त्यज रे!....सत्य-समता-शान्ति भज रे!...
दिखावा-आडम्बर तू त्यज रे!...ढोंग-पाखण्ड परे धर्म कर रे!...
आत्म विशुद्धि-शान्ति ही धर्म रे!...होऽऽऽ होऽऽऽ होऽऽऽ...2
ख्याति-पूजा-प्रसिद्धि त्यज रे! ऽऽऽ आओ...(3)...

भेड़-भेड़िया चाल तू त्यज रे!...आत्म विश्वास-अनुभव कर रे!...

नैतिक-सदाचार पालन कर...स्व-पर उपकार तू कर रे!...
दीन-हीन-दम्भ तू त्यज रे!...होऽऽऽ होऽऽऽ होऽऽऽ...2
आत्म-गौरवशाली बन रे!..ऽऽऽ आओ...(4)...

इस हेतु ध्यान-अध्ययन कर रे!..आत्म विश्लेषण-सुधार कर रे!...
सत्यग्राही व गुणग्राही बन कर...उदार सहिष्णु बन रे!...
समय-शक्ति का सदुपयोग कर...होऽऽऽ होऽऽऽ होऽऽऽ...2
'कनक' तू महामानव बन रे! ऽऽऽ आओ...(5)

सागवाड़ा दि. 12.06.2018, रात्रि 01.45

केन्द्रीय मंत्री सत्यपालसिंह ने फिर किया दावा

पूर्वज नहीं थे बंदर, बोले 10-20 साल में सब इसे मानेंगे

बागपत। केन्द्रीय मंत्री सत्यपालसिंह ने एक बार दावा किया है कि मानव के क्रमिक विकास का चार्ल्स डार्विन का सिद्धान्त वैज्ञानिक रूप से गलत है। मंत्री ने यह भी कहा कि विज्ञान के छात्र के तौर पर उनका मानना है कि उनके पूर्वज बंदर नहीं थे। इसके साथ ही उन्होंने दावा किया आने वाले 10-20 साल में सभी उनकी बात से सहमत होंगे।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय में राज्य मंत्री सिंह ने इस बारे में दी गई अपनी पूर्व की टिप्पणियों पर हमला बोलने वालों पर निशाना साधते हुए कहा, किसी अन्य व्यक्ति के नजरिए की निन्दा करना वैज्ञानिक भावना नहीं है। मैं विज्ञान का छात्र हूँ और मैंने रसायन शास्त्र में पीएचडी की है। मेरे खिलाफ बोलने वाले लोग कौन थे और कितने लोगों ने मेरा साथ दिया? हमें इस पर मंथन करना चाहिए।

एक कार्यक्रम में यहाँ पहुँचे केन्द्रीय मंत्री ने कहा, आज नहीं तो कल। कल नहीं तो 10-20 साल में, लोग मेरी कही गई बातें स्वीकार करेंगे। कम से कम मेरा मानना है कि मेरे पूर्वज कपि (बंदर) नहीं थे। मुम्बई के पुलिस आयुक्त रह चुके सिंह ने कुछ महीने पहले मानव के क्रमिक विकास के चार्ल्स डार्विन के सिद्धान्त को

गलत करार दिया था और कहा था कि स्कूलों और कॉलेजों के पाठ्यक्रम में यह बदलाव नजर आने चाहिए। सिंह के इस बयान की कई वर्गों ने तीखी आलोचनाएँ की थीं।

'देश का सौभाग्य, यहाँ राष्ट्रवादी सरकार'

पूर्व आईपीएस अधिकारी ने कहा कि उन्हें शिक्षित राजनेता होने पर गर्व है और देश का सौभाग्य है कि राष्ट्रवादी मानसिकता की एक राष्ट्रवादी सरकार शासन में है। उन्होंने कहा कि विदेशों के 99 फीसदी विश्वविद्यालय हिन्दू धर्म की गलत व्याख्या करते हैं, गलत अनुवाद करते हैं।

'अंग्रेजों की मानसिकता पालना सबसे बड़ी भूल'

सिंह ने कहा, मैं एक किताब लिख रहा हूँ। किताब में इस पर भी एक अध्याय होगा। हम किसी पश्चिमी देश के व्यक्ति से मदद नहीं लेंगे। हम साक्ष्य और दस्तावेजी प्रमाण देंगे। हम साबित करेंगे कि हम जो कह रहे है वही सही है। क्या हमारे किसी साधु-संत ने इंग्लैंड के किसी प्रोफेसर को अपनी बातें सत्यापित करने के लिए कही थी? उन्होंने कहा कि सबसे बड़ी भूल यह थी कि भारत ने अंग्रेजों की शैक्षणिक प्रणाली और मानसिकता का पालन करना जारी रखा।

उम्र से बेफिक्र रहें तो दिमाग होगा तेज

बुढ़ापे की चिंता छोड़, जो अधिक उम्र में भी खुद को जवान महसूस करते हैं, उनका दिल और दिमाग उन लोगों से ज्यादा तेज होता है जो उम्र के बोझ से दबे रहते हैं। दक्षिण कोरिया की यूनिवर्सिटी ऑफ सियोल के वैज्ञानिक 59 साल की उम्र पार कर चुके लोगों के एम.आर.आइ. स्कैन के अध्ययन से इस नतीजे पर पहुँचें है। शोधकर्ताओं के मुताबिक जिन लोगों को अपनी उम्र का अहसास होता है उनकी याददाश्त कमजोर होती जाती है। शोध के अनुसार अपनी बढ़ती उम्र से बेफिक्र लोगों के दिमाग की संरचना बिल्कुल युवाओं की तरह होती है।

आइंस्टीन ने डायरी में लिखा था-15 मिनट से ज्यादा आगे-पीछे का नहीं सोच पाते भारतीय

लन्दन। दुनिया के सर्वकालिक महान् वैज्ञानिकों में शुमार अल्बर्ट आइंस्टीन

भारतीयों को शारीरिक और मानसिक रूप से कमजोर समझते थे। ऐसा उन्होंने अपनी डायरी में लिखा था। आइंस्टीन ने लिखा है, ''भारत की जलवायु ही कुछ ऐसी है कि यहाँ के लोग शारीरिक और मानसिक रूप से कमतर लगते हैं। भारतीय 15 मिनट से ज्यादा आगे-पीछे का सोच ही नहीं पाते। अनुवांशिक कारण भी इसके पीछे जिम्मेदार होते हैं।'' खास बात तो यह है कि जब आइंस्टीन ने यह लिखा था, उस वक्त तक वो भारत आए भी नहीं थे। श्रीलंका में आइंस्टीन कुछ भारतीयों से मिले थे और उसी आधार पर अपनी राय बना ली थी। हालांकि, आइंस्टीन अलग-अलग जगहों पर घूमने के शौकीन जरूर थे। वह अपनी ट्रैवल डायरी भी लिखते थे।

बुजुर्गों से दुर्व्यवहार का हेल्प एज इंडिया की रिपोर्ट में हुआ खुलासा

राजधानी दिल्ली भारत के ऐसे 5 शहरों में से शामिल है, जहाँ बुजुर्गों के साथ सबसे ज्यादा दुर्व्यवहार होता है। एक सर्वे में इसका खुलासा हुआ है। हेल्प एज इंडिया की रिपोर्ट के मुताबिक बुजुर्गों के साथ सबसे ज्यादा दुर्व्यवहार कर्नाटक के शहर मेंगलुरु में होता जहाँ इसका प्रतिशत 47 है। इसके बाद दूसरे नम्बर पर है अहमदाबाद के 46 प्रतिशत, भोपाल 39 प्रतिशत, अमृतसर 35 प्रतिशत और दिल्ली पाँचवें नम्बर पर 33 प्रतिशत में होता है।

रिपोर्ट के मुताबिक

बहुओं की तुलना में बेटे अपने बुजुर्ग पैरेंट्स के साथ ज्यादा ज्यादती करते हैं। इस रिसर्च का उद्देश्य यह पता लगाना था कि दुर्व्यवहार किस हद तक कितना ज्यादा किस रूप में कितनी बार होता है और इसके पीछे कारण क्या है। इसमें पता चला कि बुजुर्गों को लगभग एक चौथाई आबादी व्यक्तिगत तौर पर उत्पीड़न का सामना करती है।

हैरान करने वाली बात

अक्सर उत्पीड़न के लिए बहुओं को जिम्मेदार ठहराया जाता है, लेकिन इस रिपोर्ट के मुताबिक बहुओं से ज्यादा घर के बेटे ही बुजुर्ग पैरंट्स का उत्पीड़न करते

हैं। एक तरफ जहाँ 52 प्रतिशत बेटे बुजुर्गों का उत्पीड़न करते हैं वहीं बुजुर्गों के साथ दुर्व्यवहार करने वाली बहुओं का प्रतिशत 34 है। रिपोर्ट के मुताबिक, इलेक्ट्रॉनिक गैजेट जैसे फोन, टैब और कम्प्यूटर बुजुर्गों के साथ दुर्व्यवहार की सबसे बड़ी वजह बन गए हैं। इसका कारण ये है कि इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों पर ज्यादा ध्यान देने के वजह से बुजुर्गों के साथ गलत व्यवहार किया जा रहा है।

शिकायत नहीं करते

82 प्रतिशत बुजुर्ग परिवार की खातिर नहीं करते शिकायत हेल्प एज इंडिया के सीईओ मैथ्यू चेरियन ने कहा, दुर्भाग्य से बुजुर्गों का उत्पीड़न घर से शुरू होता है और इसे अंजाम वे लोग देते हैं, जिनका वह सबसे ज्यादा विश्वास करते हैं। इस साल दुर्व्यवहार को अंजाम देने वाले लोगों में सबसे पहले बेटे हैं, उसके बाद बहुएँ। पहले के सर्वेक्षणों में पाया गया कि बुजुर्गों के साथ दुर्व्यवहार करने वालों में सबसे आगे बहुएँ होती थीं। इसमें यह भी पता चला कि दुर्व्यवहार के शिकार 82 फीसदी बुजुर्ग परिवार की खातिर इसकी शिकायत नहीं करते या वह यह नहीं जानते कि समस्या से किस प्रकार निपटा जा सकता है।

हाथों का इस्तेमाल तय करता है भावनाएँ

वैज्ञानिकों ने ताजा शोध में पता लगाया है कि नए सिद्धान्त के मुताबिक हमारी मस्तिष्क की भावनाएँ हाथों के इस्तेमाल से प्रभावित होती हैं। हम अपने दाएँ और बाएँ हाथ का जिस तरह से इस्तेमाल करते हैं, वह हमारे मस्तिष्क में भावनाओं को उसी तरह से व्यवस्थित करता है। दरअसल, 1970 से ही सैकड़ों अध्ययन में सुझाव दिया गया है कि मस्तिष्क के हर आधे हिस्से में एक खास तरह की भावना मौजूद रहती है। मस्तिष्क की बायीं ओर खुशी, गर्व और गुस्सा जैसी भाव-भंगिमाएँ होती हैं। घृणा और भय जैसी भावनाएँ दायीं ओर होती हैं।

फूड सेफ्टी एक्ट में 100 संशोधनों का ड्राफ्ट
मिलावट पर उम्रकैद और 10 लाख तक का जुर्माना

लगेगा

खाने-पीने की चीजों में मिलावट करने वालों को उम्रकैद की सजा और 10 लाख रु. तक का जुर्माना हो सकता है। फूड सेफ्टी एंड स्टैंडर्ड्स अथॉरिटी ऑफ इंडिया (एफएसएसएआई) ने फूड सेफ्टी एंड स्टैंडर्ड्स एक्ट में संशोधन के प्रस्तावों में यह सिफारिश की है। फूड सेफ्टी एंड स्टैंडर्ड्स एक्ट में कुल 100 संशोधनों का ड्राफ्ट जारी किया गया है। खाने में मिलावट पर सख्ती के लिए तो एक नया सेक्शन ही जोड़ने का प्रस्ताव है। ड्राफ्ट में कहा गया है कि कोई भी शख्स खाने-पीने की चीजों में ऐसा कुछ मिलाता है, जिसे खाने वाले को नुकसान, मृत्यु, घायल-बीमार होने की आशंका हो तो मिलावटखोर को कम से कम सात साल जेल की सजा देनी चाहिए। इसे बढ़ाकर उम्रकैद भी किया जा सकता है। जुर्माना भी 10 लाख रुपए से कम नहीं होगा।

राज्यों के लिए अलग अथॉरिटी का भी प्रस्ताव

- राज्यों में भी फूड सेफ्टी अथॉरिटी बनाई जाएँ, ताकि यह कानून सही मायने में लागू किया जा सके।
- फूड सेफ्टी अधिकारी के काम में बाधा डालने, धमकी देने और हमला करने की सजा भी बढ़ाने का प्रस्ताव है। 6 महीने से दो साल तक जेल और 5 लाख जुर्माने की सिफारिश की गई है। अभी 3 माह तक जेल और एक लाख रुपए जुर्माने का प्रावधान है।
- मिलावट के दोषी को खाने की जाँच के लिए हुए खर्च की भरपाई भी करनी होगी।
- निर्यात किए जाने वाले खाद्य पदार्थों को भी कानून के तहत कवर करने का प्रस्ताव है। अभी घरेलु बाजार में बिकने वाले खाद्य पदार्थ ही कवर होते हैं।

औसतन हम 78 साल जिंदा रहते हैं

- 4 साल खाने और पीने में निकल जाते हैं
- 3.5 साल पढ़ाई में निकल जाते हैं।

- 2.5 साल ग्रूमिंग में निकल जाते हैं।
- 2.5 साल शॉपिंग में गुजर जाते हैं।
- 1.5 साल बच्चों की देखभाल में।
- 1.3 साल यात्रा में
- 6 साल नाखुशी में बिताते हैं
- 9 साल टीवी, वीडियो, गेम और सोशल नेटवर्किंग में
- 10.5 साल वर्किंग में
- 28.3 साल सोने में चले जाते हैं।

सिर्फ 9 साल बचते हैं जीवन में। यह आप पर है कि आप इसे कैसे खर्च करें?

स्रोत : वर्ल्ड बैंक ब्यूरो ऑफ लेबर स्टेटिस्टिक्स

शहर पास आए, 80% बड़े शहरों से 1 घंटे की दूरी पर

1300 वर्ग किमी में आ जाएगी दुनिया की आबादी। सभी को साथ खड़ा किया जाए तो। यह जगह लॉस एंजिलिस से भी छोटी है।

80 फीसदी लोग बड़े शहरों से एक घंटे की दूरी पर

1800 में सिर्फ 3 प्रतिशत दुनिया शहरों में रह रही थी। अभी 54 प्रतिशत आबादी शहरों में शिफ्ट हो गई है। 2050 तक शहरों में दुनिया की 66 प्रतिशत आबादी होगी।

12 फीसदी अमीर आबादी में 85 फीसदी पानी का इस्तेमाल

20 फीसदी अमीर दुनिया की 86 फीसदी चीजों का उपभोग करते हैं। 20 फीसदी सबसे गरीब 1.3 फीसदी वस्तुओं का।

300 करोड़ लोग रोजाना 100 रु. से कम राशि में गुजारा करते हैं।

50.4 फीसदी पुरुष 49.6 फीसदी महिला आबादी है दुनिया में

20 साल की उम्र का अंतर है गरीब और अमीर देशों में। अमीर देशों की औसत उम्र 77.1 और गरीब देशों की 55.9 साल है।

115 करोड़ लोगों का फर्स्ट नेम मोहम्मद है। ये दुनिया का सबसे कॉमन फर्स्ट नेम है।

दुनिया में लोग जिन्दगी के 7 साल ट्रैफिक में बिता देते हैं। हर दूसरा शख्स रोजाना 3 बस मिस करता है।

- भारत के 4 महानगरों को ट्रैफिक की वजह से हर साल 1.47 लाख करोड़ रुपए का नुकसान होता है।
- पीक आवर सुबह 7 से 9 बजे और शाम 6 से 8 बजे लोगों का ट्रैवल टाइम डेढ़ गुना तक बढ़ जाता है।
- दिल्ली में प्रति वर्ग किमी में सबसे ज्यादा 11 हजार लोग रहते हैं। अरुणाचल में सबसे कम 17 लोग।
- देश की 33 फीसदी आबादी झुग्गियों में रहती है। 1674 लोगों पर महज एक ही डॉक्टर उपलब्ध है।

और भारत की बात

- 5-17 साल के 78 लाख बच्चे को पढ़ाई के साथ काम करना पड़ता है। इनमें 57 प्रतिशत लड़के, 43 प्रतिशत लड़कियाँ।
- 5-17 साल के 8.4 करोड़ छात्रों का स्कूल छूट जाता है। इनमें 81 प्रतिशत की पढ़ाई छूटने की वजह आबादी है।
- भारत में 14 करोड़ दंपती जनसंख्या नियंत्रण करने के लिए गर्भनिरोध के आधुनिक तरीके अपना रहे हैं।
- एक साल में 4 करोड़ अनचाही प्रेग्नेंसी, 13 लाख अबॉर्शन व प्रसव के दौरान 21,600 जिन्दगी बच रही।

आबादी के लिहाज से 5 सबसे बड़े देशों में दुनिया के 43 प्रतिशत लोग, पर जमीन 21 फीसदी

चीन : दुनिया की 18 फीसदी आबादी, इसके पास धरती का 6 फीसदी हिस्सा

आबादी 141 करोड़ दुनिया की 18.5 फीसदी
6.3 फीसदी दुनिया की जमीन का हिस्सा 151 लोग/वर्ग किमी
जीडीपी 962 लाख करोड़ रुपए

प्रति व्यक्ति आय 6.9 लाख रु.

भारत : दुनिया की 17.7 फीसदी आबादी, जमीन सिर्फ 2 फीसदी ही है।

आबादी 135 करोड़ दुनिया की 17.7 फीसदी
2 फीसदी दुनिया की जमीन का हिस्सा। 455 लोग/वर्ग किमी
जीडीपी 192 लाख करोड़
प्रति व्यक्ति आय 1.4 लाख रु.

अमेरिका : दुनिया की 4.3 फीसदी आबादी है, लेकिन जमीन 6 फीसदी है।

आबादी 33 करोड़ दुनिया की 4.3 फीसदी
6.1 फीसदी दुनिया की जमीन का हिस्सा
36 लोग/वर्ग किमी
जीडीपी 1327 लाख करोड़
प्रति व्यक्ति आय 40.9 लाख रु.

इंडोनेशिया : दुनिया की 3.5 फीसदी लोग और जमीन 1.2 फीसदी है।

आबादी 27 करोड़ दुनिया की 3.5 फीसदी
1.2 फीसदी दुनिया की जमीन का हिस्सा
147 लोग/वर्ग किमी
जीडीपी 73 लाख करोड़
प्रति व्यक्ति आय 2.8 लाख रु.

ब्राजील : दुनिया की 2.8 फीसदी आबादी और जमीन 5.6 फीसदी है।

आबादी 21 करोड़ दुनिया की 2.8 फीसदी
5.6 फीसदी दुनिया की जमीन का हिस्सा
25 लोग/वर्ग किमी
जीडीपी 144 लाख करोड़
प्रति व्यक्ति आय 7.1 लाख रु.

कट्टर धार्मिक होते हैं संकीर्ण मानसिक

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : क्या मिलिए...,आत्मशक्ति....)

जो होते अधिक कट्टर धार्मिक, वे होते अधिक संकीर्ण मानसिक।
राग-द्वेष-मोह से होते संयुक्त, ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा से होते सहित।।
सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि चाहते अधिक, अपना-पराया भेद-भाव करते अधिक।
दीन-हीन-अहंकार से होते मंडित, संकल्प-विकल्प-संक्लेश युक्त।।(1)

दिखावा-आडम्बर करते अधिक, ख्याति-पूजा-लाभ-चाहे अधिक।
पर निन्दा-अपमान करते अधिक, स्व-दोष अनभिज्ञ व छिपाते अधिक।।
वाद-विवाद व विसंवाद करते, हठाग्रही-दुराग्रही-संकीर्ण होते।
मुँह में प्रभुनाम बगल में छूरी रखते, ''गोमुख-व्याघ्र'' व ''बगुला भक्त'' होते।।(2)

ठगी-मायाचारी-चोरी करते, धर्म के नाम पर शोषण करते।
दिन में साहुकार रात के चोर होते, मन-वचन-काय से दोष करते।।
सत्य-समता-शान्ति से रहित होते, उदार-पावन भाव से विरक्त होते।
प्रगति समन्वय से रहित होते, शोध-बोध-अनुभव से विमुख होते।।(3)

स्वयं को ही श्रेष्ठ-ज्येष्ठ मानते, स्व-दोष-कमियों को भी नहीं जानते/(मानते)।
गुण व गुणीओं से द्रोह करते, उनकी निन्दा से ले हत्या करते।।
तीर्थंकर तक के वे विरोधी होते, सुकरात-बुद्ध-मीराबाई को सताते।
गेलेलियो ईसा मसीह को मारते, नवीनता/(उदारता) प्रगतिशीलता की हत्या करते।।(4)

आचार्य शान्तिसागर का भी विरोध किया, प्रेस से ग्रन्थ छपाने का विरोध किया।
चश्मा व पैन प्रयोग का विरोध किया, फल व मेवा का भी विरोध किया।।
इनके भी अनुयायी होते हैं अनेक, चोर-चोर मौसरा भाई के समान।
अनन्त बहु भाग जीव होते हैं ऐसे,गृहीत या अगृहीत मिथ्यात्व संयुक्त।।(5)

आत्मविकास हेतु ये सर्व त्यजनीय, आत्मविश्वास-ज्ञान-चारित्र सेवनीय।
समता-शान्ति-शुचिता ग्रहणीय, 'कनक सूरी' हेतु ये सब वरणीय।।

सागवाड़ा दि. 23.06.2018 मध्याह्न 02.:25

(यह कविता बंशीलाल (रायपुर) के कारण बनी।)

सन्दर्भ-

धर्म, दर्शन, विज्ञान का प्रयोजन

हितं करोति सर्वेषां, सुखं तस्मात्तदिष्यते।
धर्मादि त्रितयं तद्धि, सुखं वै प्राप्यते यतः।।15।। कनकनंदी

सम्पूर्ण जीव जगत के लिए सुख हितकर है। इसलिये सर्व जीव जगत् सुख चाहते हैं। जिन-जिन उपायों से सुख प्राप्त होता है वे धर्म-दर्शन विज्ञान हैं।

देह सुखदं विज्ञानं, दर्शनं च मनः सुखम्।
सर्वेषां सुखदो धर्मः, सर्वाधार नभः समः।।16।। कनकनन्दी

विज्ञान से शारीरिक सुख मिलता है, दर्शन से मानसिक सुख मिलता है, धर्म सब प्रकार सुख देने वाला है। जिस प्रकार आकाश सम्पूर्ण द्रव्यों के लिए आधार स्वरूप है उसी प्रकार धर्म सम्पूर्ण सुखों के लिए आधार स्वरूप है।

जीव का प्राकृतिक स्वभाव अनन्त सुख शान्तिमय है, अर्थात् प्रत्येक जीव मूल स्वरूप से ''सच्चिदानन्द स्वरूप'' है। इसलिए कीट-पतंग, पशु-पक्षी, गरीब-अमीर, ज्ञानी-अज्ञानी आदि प्रत्येक जीव सुख के लिये अत्यन्त उत्कंठित रहते हैं। कोई भी दुःख नहीं चाहता है क्योंकि दुःख आत्मा का अप्राकृतिक रूप विकार धर्म है। सुख का उत्स स्वयं आत्मा होते हुए भी कर्म संयोग अवस्था में सुख का तिरोभाव हुआ है। सामान्यतः सुख एक प्रकार होते हुए भी निमित्त के कारण सुख अनेक प्रकार हैं। यथा-शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक। जब पूर्ण आध्यात्मिक सुख प्राप्त नहीं होता है तब वह जीव शरीरादि सुखों को स्वीकार करता है। शारीरिक सुख प्राप्त करने के लिए बाह्य साधनों की आवश्यकता है। भौतिक विज्ञान ने यान, वाहन, रेडियो, टी.वी., पंखा, कूलर आदि-आदि भौतिक साधनों से जीवों को सुख पहुँचाया है। तात्विक विचार, मनन-चिन्तन आदि से मन में एक प्रकार प्रशस्त प्रकाशमय भाव उत्पन्न होता है जिसके माध्यम से मानसिक सुख मिलता है। परन्तु धर्म से शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, इहलोक, परलोकादि सम्बन्धी सुख मिलता है।

समस्त सुखों का आधार धर्म

धर्मः सर्व सुखाकरो हितकरो धर्म बुधाश्चिन्वते।

धर्मेणैव समाप्यते शिव सुखं धर्माय तस्मै नमः।।

धर्मान्नास्त्यपरः सहृदभवभृतां धर्मस्य मूलं दया।

धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म! मां पालय।।

धर्म समस्त प्रकार के सुखों को एवं हितों को करने वाला हैं, धर्म से ही शाश्वतिक सुख प्राप्त होता है। धर्म को छोड़कर दुःखी संसारी जीवों का कोई भी बंधु-बांधव नहीं है। इसलिये हे सुख इच्छुक ज्ञानी जीव! धर्म का संचय करो। धर्म का मूल विश्व प्रेम हैं। मैं धर्म में अपने चित्त का समर्पण करता हूँ। हे सर्व सुख दातार! धर्म मेरा पालन करो।

धारणाद्धर्ममित्याहु धर्मो धारयते प्रजाः।

यः स्याद्धारण संयुक्तः स धर्म इति निश्चयः।।

जो धारणा करता है उसे धर्म कहते हैं। धर्म सम्पूर्ण जीवजगत् का धारण, पोषण, रक्षण करता है। जिसमें धारण करने की शक्ति, सामर्थ्य और क्षमता हो उसे निश्चयपूर्वक धर्म जानो।

यस्मादभ्युदयः पुंसां निःश्रेयस फलाश्रयः।

वदन्ति विदिताम्ना यास्तं धर्मं धर्मसूरयः।। (धर्म रत्नाकर)

''यस्मादभ्युदयः निःश्रेयस सुखं सः धर्म।।'' (हिन्दू धर्म)

जिससे शारीरिक, सांसारिक, आधिदैविक, आधिभौतिक, इन्द्र, विद्याधर, चक्रवर्ती, तीर्थंकर, मनुष्य, पशु आदियों के सुख प्राप्त होता है उसको अभ्युदय सुख कहते हैं। आध्यात्मिक, अतीन्द्रिय, अभौतिक, शाश्वतिक, निराबाध, अविषय-जनित, स्वातन्त्र्य मोक्ष सुख को निश्रेयस सुख कहते हैं। धर्म से उपरोक्त निश्रेयस एवं अभ्युदय सुख प्राप्त होता है।

देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिवर्हणम्।

संसारदुःखतः सत्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे।।2।। रत्नकरण्ड

महान् दार्शनिक, तत्त्ववेत्ता, तार्किकचूड़ामणि समन्तभद्र स्वामी प्रतिज्ञा करते हैं कि मैं उस समीचीन धर्म को कहूँगा जो धर्म दुःखों से संतप्त जीवों के कर्म को विध्वंस करके, समस्त दुःखों से उद्धार करके जीवों को शाश्वतिक अति उत्तम सुख

में धारण कराता है। अर्थात् दुःखों से पार करने वाले एवं उत्तम सुख में धारण करने वाले को धर्म कहते हैं।

धर्मो गुरुश्च मित्रं च धर्मः स्वामी च बान्धवः।

अनाथ वत्सलः सोऽयं स त्राता कारणं बिना।।

धर्म ही गुरु, मित्र, स्वामी, बांधव है तथा अनाथों का रक्षण करने वाला है। धर्म निःस्वार्थ भाव से स्वेच्छापूर्वक अकारणक रक्षक के समान सबकी रक्षा करता है।

पवित्री क्रियते येन येनैव घ्रियते जगत्।

नमस्तस्मै दयाद्राय धर्मकल्पाङ्घ्रिपाय वै।।

जो सम्पूर्ण विश्व को पवित्र करता है एवं धारण करता है, उस विश्व प्रेम से आर्द्र (ओत-प्रोत) धर्मरूपी कल्पवृक्ष के पवित्र चरण कमल में मेरा शतशः अभिवन्दन हो।

धर्म से किस प्रकार समस्त प्रकार का सुख मिलता है। इसी पुस्तक में आगे सन्दर्भ के अनुसार अनेक स्थलों में दिग्दर्शन किया जाएगा।

धर्मादि के अन्यथा प्रयोग से दुःख

मूढः स्वार्थी च मानी च, मोही जानाति न त्रयम्।

अन्यथा ते प्रयुञ्जन्ति, तस्माद्त्रिदुःख कारणम्।।17।। कनकनंदी

मूढ़, स्वार्थान्ध, अहंकारी, मोही जीव धर्म दर्शन विज्ञान को यथार्थ रूप से नहीं जानता है, उनका दुष्प्रयोग करता है जिससे तीनों दुःखदायी बन जाते हैं।

मिथ्या धर्म से हानि

तर्क दर्शनं विज्ञान हीनं राजा यथा परिषदः विहीनम्।

ते धर्म न हि मिथ्या कुवाद सर्वमनर्थवृक्षस्य बीजम्।।10।।

तर्क दर्शन विज्ञान से रहित धर्म नहीं है परन्तु मिथ्या रुढ़िवाद है, जैसे राजा हितोपदेशी मंत्री आदि परिषद से रहित होने पर देश के अहित के लिए होता है उसी प्रकार मिथ्या धर्म समस्त अनर्थ के लिए बीज स्वरूप है।

राजा यथार्थ से एक जन नायक, प्रजा पालक, नीति नियम का संरक्षक एवं प्रजा का रक्षक होता है। परन्तु जब राजा स्वार्थान्ध होकर मंत्री, पुरोहित, गुरुजन,

पारिषदादिकों के हितोपदेश सलाह, मन्त्रणादि नहीं सुनकर स्वार्थ सिद्धि के लिए प्रवृत्त होता है तब वह रक्षक न होकर भक्षक बन जाता है। इसी प्रकार जब धर्म, नीति, नियम, सदाचार, विनय, तर्क, दर्शन, विज्ञान से रहित हो जाता है तब वह धर्म जीवों के विकास के लिए कारण नहीं बनता है परन्तु विनाश के लिए समर्थ कारण बन जाता है।

यदि हम निरपेक्ष दृष्टि से विश्व इतिहास का सूक्ष्म अध्ययन करेंगे तब हमको इतिहास का प्रत्येक पृष्ठ पुकार-पुकार कर कहेगा कि ''विश्व में अभी तक जो रक्तपात, युद्ध, विषाद, कलह, वैमनस्य, द्वेष पक्षपातादि हुआ है उसका बहुत कुछ श्रेय मिथ्याधर्म को है।'' धर्म के नाम पर यज्ञ में निरपराधी पशुओं की बलि, शोषण मिथ्यादंभ (अहम्), मिथ्यारुढ़ि, सती दाह प्रथा, यहाँ तक कि यज्ञ में राजाओं की आहुति ये सब अवदान मिथ्या धर्म का है। मनुष्य समाज में विभिन्न सम्प्रदाय के कारण जो संकीर्ण मनोभाव, गुटबन्दी, भेदभाव व घृणा भाव है उसका मूल कारण कुधर्म (पाखण्ड धर्म) कहने पर कोई अतिशयोक्ति न होगी। इसलिए मनुष्य के नम्र पुजारी साम्यवाद के पुरस्कर्ता लेलिन कहते हैं कि -

Religion to his master, Marx had been the "opium of the people" and to Lenin it was" a kind of spiritual cocaine in which the salves of capital drawn their human perception and their demands for any life worthy of a human being."

Fulop Miller, Mind and face of Bolshevism. P. 78

धर्म की ओट में हुए अत्याचारों से व्यथित ही कहता है कि विश्व कल्याण के लिए धर्म की कोई आवश्यकता नहीं है। उसके प्रभाव में आए हुए व्यक्ति धर्म को उस अफीम की गोली के समान मानते हैं जिसे खाकर कोई अफीमची क्षण भर के लिए अपने में स्फूर्ति और शक्ति का अनुभव करता है। इसी प्रकार उनकी दृष्टि में धर्म भी कृत्रिम आनन्द अथवा विशिष्ट शान्ति प्रदान करता है।

उपरोक्त लेनिन के ही विचार को बहुत शताब्दी के पहले जैनाचार्य रविषेण जैन रामायण (पद्मपुराण) में पाखण्डियों को स्पष्ट रूप से ललकारते हुए कहते हैं कि-

धर्मः शब्द मात्रेण बहुशः प्राणिनोऽधर्माः।

अधर्ममेव सेवन्ते विचार जड़ चेतसाः।।

अधिकांशतः विचार हीन अधर्म प्राणी धर्म शब्द को लेकर अधर्म ही सेवन करते हैं। एक शान्ति प्रिय अहिंसावादी निस्पृह साधु श्री दिगम्बर जैनाचार्य रविषेण पाखण्डियों की पाखण्ड क्रियाओं से जो सम्पूर्ण जीव जगत का अकल्याण, अनर्थ (अवनति) होता है उसको स्पष्ट रूप से अनुभव करके उसके प्रतिकार के लिए निर्भीक वीर सिंह के समान ललकार करके भर्त्सना करते हैं, क्योंकि मिथ्याधर्म से प्राणी जगत की जो क्षति और अवनति होती है वह क्षति अपूर्णनीय है। इसी प्रकार क्षति नहीं पहुँचे अतः पहले से प्राज्ञ व्यक्तियों को सतर्क रहना चाहिए। इस प्रकार आदि शंकराचार्य कहते हैं कि -

जटिलो मुण्डी लुंचित केशः कषायाम्बरः बहुकृतवेषः।
पश्यन्नपि न च पश्यति मूढ़ः उदर निमित्तं बहुकृत वेषः।।24।।

जटा बढ़ाने वाले, सिर मुण्डन करने वाले, कषायाम्बरादि अनेक धार्मिक वेषों को धारण करने वाले मूढ़ लोक जो कि आत्म-धर्म से रहित होने के कारण आत्मा के सत्य धर्म को नहीं देखते हैं वे मूर्ख केवल उदर (पेट) पोषण के लिए अनेक प्रकार बाह्य वेष को धारण करते हैं। वे केवल स्वार्थ सिद्धि के लिए, यश प्रतिष्ठा मान सम्मान के लिए, अर्थ शोषण के लिए बाह्य वेष बनाकर धर्मोपदेश करते हैं परन्तु अन्तरंग में बगुला भक्त होते हैं। जैसे कि वक पक्षी बाह्य में शुक्ल होता है एवं जलाशय में एक पैर पर खड़ा रहकर ध्यानी के समान ध्यान करता है परन्तु जब जलाशय के ऊपर मत्स्य आती है तब मछली को ओम् स्वाहाः करता है। इसी प्रकार कुछ पाखण्डी साधु बाह्य से धार्मिक वेशभूषा धारण करते हैं और भोले प्राणियों को अपने चंगुल में फँसाने के लिए अनेक धार्मिक मायाजाल फैलाते हैं और संयोग मिलने पर वक पक्षी के समान प्राणियों के धन, जन, जीवन तक अपहरण कर लेते हैं। किसी नीतिकार ने कहा भी है -

परोपदेशे पांडित्यं सर्वेषां सुकरं नृणाम्।
धर्मे स्वयमनुष्ठानं कस्याचित् महात्मनः।।

दूसरों को सदाचार का धर्म का उपदेश देना सुलभ है किन्तु उसी उपदेशानुसार स्वयं आचरण करने वाले जगत में बिरले ही कोई सज्जन है।

स्वार्थ सिद्धि के लिए धर्म के नाम पर जो अन्याय अत्याचार, हिंसा आदि करते हैं उनको वक्र (व्यंग्य) दृष्टि से परोक्ष रूप से भर्त्सना करते हुए वैदिक ऋषि कहते हैं :-

यूपं छित्वा पशुना हत्वा, कृत्वा रुधिर कर्दमम्।
यद्येवं गम्मते स्वर्गं, नरकं केन गम्यते।।

यज्ञ काष्ठ को छेदकर, पशुओं की निर्मम भाव से हत्या कर जो भूमि को रक्त से कीचड़ करके स्वर्ग जाएगा तो और किस कर्म से नरक जाएगा? अर्थात् नरक जाने का सर्वोत्तम मार्ग उपरोक्त कर्म ही है। उपरोक्त कर्म करके कोई भी स्वर्ग नहीं जा सकता।

धर्म के नाम से यज्ञ में बकरा, घोड़ा, भैंसा, मनुष्य, राजा आदि की आहुति देना, दुर्गा, काली, चण्डी, मुण्डी, भूत-प्रेत आदियों को सन्तुष्ट करने के लिए उनके सामने बलि देना, वैदिक काल में यज्ञ में राष्ट्रीय एवं सामाजिक स्तर पर अत्यन्त प्रचार में था। परन्तु वर्तमान आधुनिक वैज्ञानिक सभ्यकाल में भी उपरोक्त असभ्य दानवीय कुकृत्य स्वयं को सभ्य, तार्किक मानने वाले लोग अभी भी करते हैं।

कलकत्ते के काली मन्दिर में देवी के आगे रक्त की वैतरिणी देखकर गाँधी जी की आत्मा आकुलित हो गई थी और उनका करुणापूर्ण अन्तःकरण रो पड़ा था। अपनी अन्तःवेदना को व्यक्त करते हुए बापू अपनी आत्मकथा में लिखते हैं :-

"We passed on the temple. We were greeted by rivers of blood, I could not bear to stand there. I was exasperated and restless. I have never forgotten that sight...I thought of the story of Buddha but I also saw that the task was beyond my capacity. I hold today the same opinion as I held them. It is my constant prayer that there may be born on earth some great spirit man or woman, who will..purify the temple. How is it that Bengal with all its knowledge, intelligence, sacrifice and emotion tolerates this Slaughter? The ferrible sacrifice offered to Kali in the name of religion enhanced my desire to know Bengal life."

- Vide Gandhiji's Autobiography

जब हम मन्दिर में पहुँचे तब खून की नदी से हमारा स्वागत हुआ, यह दृश्य मैं देख नहीं सका। मैं बेचैन और व्याकुल हो गया। मैं उस दृश्य को भी नहीं विस्मृत कर सकता हूँ। मुझे बुद्ध देव की कथा याद आई, किन्तु मुझे वह कार्य मेरी सामर्थ्य के परे प्रतीत हुआ। मेरे विचार जो पहले थे वे आज भी उसी प्रकार हैं। मेरी अनवरत यही प्रार्थना है कि इस भूतल पर ऐसी महान् आत्मा का नर अथवा नारी के रूप में आविर्भाव हो, जो मन्दिर की हिंसा बन्द करके उसे पवित्र कर सके। यह बड़ी विचित्र बात है कि इतना विज्ञ बुद्धिमान त्यागी तथा भावुक वर्ग प्रान्त इस बलिदान को सहन करता है। धर्म के नाम पर काली के समक्ष किया जाने वाला भीषण जीव वध देखकर मेरे हृदय में बंगालियों के जीवन को जानने की इच्छा जागृत हुई।

मिथ्याधर्म के कारण जीव समाज को जो महान् क्षति उठानी पड़ रही है उसको देखकर आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने धर्म के नाम पर ''हत्या अपराध...'' नामक एक क्रान्तिकारी पुस्तक लिखी हैं। उसमें वे प्रारम्भ में लिखते हैं -

धर्म ने हजारों वर्ष से मनुष्य जाति को नाकों चने चबाये हैं, करोड़ों नर नारियों का गर्म रक्त इसने पिया है, हजारों कुल बालाओं को इसने जिन्दा भस्म किया है, असंख्य मनुष्यों को इसने जिन्दा से मुर्दा बनाया है, यह धर्म पृथ्वी की मानव जाति का नाश करेगा या उद्धार? आज इस बात पर विचार करने का समय आ गया है।

धर्म के कारण ही सिक्खों ने मुगलकाल में अंग कटवाये, बच्चों को दीवार में चिनवाया। धर्म के कारण ही रोमन कैथोलिकों के भीषण अत्याचार की भेंट लाखों ईसाई हुए। धर्म के कारण ही नीरो ने ईसाईयों को मशाल की भाँति जलाया। धर्म के कारण ही मुसलमानों ने पृथ्वी को रौंद डाला और मनुष्य के गर्म लहू में तलवार रंगी। धर्म के लिए ही ईसाईयों ने प्राणों का विजर्सन किया।

रोम के पोप, मरने वालों से उनके पाप स्वीकृत कराके स्वर्ग के नाम हुण्डी लिखते थे। लाखों रुपये हड़प लेते थे। गया के पण्डे स्त्रियों तक को दान करा लेते थे। काशी और प्रयाग में लोग प्राण तक दे देते थे।

जातियों की जातियों का इस धर्म संघर्ष में नाश हो गया। पर धर्म को मनुष्य ने पहचाना नहीं। बौद्धों ने पृथ्वी को एक बार चरणों में झुकाया। पीछे रक्त की नदियाँ बहाई और अन्त में नष्ट हो गए। ईसाईयों ने भी मनुष्यों में हाहाकार मचाया। मुसलमानों

ने शताब्दियों तक मनुष्य को सुख की नीन्द सोने न दिया। धर्म मनुष्य जाति के हृदय पर पर्दा बना खड़ा है पर मनुष्य सचेत नहीं होता, सावधान नहीं होता।

जिसने रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेन्ट नामक हजरत ईसा के मानने वालों का रक्त रंजित इतिहास पढ़ा है अथवा दक्षिण भारत में मध्य युग में शैव और लिंगायतों ने हजारों जैनियों का विनाश कर रक्त की वैतरिणी बहाई तथा जिस बात की प्रमाणिकता दिखाने वाले चित्र मुद्रा मीनाक्षी नामक हिन्दू मन्दिर में उक्त कृत्य के साक्षी के स्वरूप में विद्यमान है। ऐसे धर्म के नाम पर हुए क्रूर कृत्यों पर जिसने दृष्टि डाली है वह अपने जीवन की पवित्र श्रद्धा निधि ऐसे मार्गों के लिए कैसे समर्पण करेगा?

देखो, जर्मन डॉ. वान ग्लैप्सेन का जैन धर्म सम्बन्धी ग्रन्थ।

- Jainisum P. 64

''जितना ईश्वर के नाम पर खून खच्चर हुआ उतना अन्य किसी वस्तु के लिए नहीं।''

- विवेकानन्द

''धर्म ने मनुष्य को कितना नीचे गिराया, कितना कुकर्मी बनाया इसको हम स्वयं सोचकर देखें। ईश्वर को मानना सबसे पहले बुद्धि को सलाम करना है। जैसे शराबी पहला प्याला पीने के समय बुद्धि की विदाई को सलाम करते हैं वैसे ही खुदा को मानने वाले भी बुद्धि से विदा हो लेते हैं। धर्म की हत्या की जड़ है। कितने पशु धर्म के नाम पर रक्त के प्यासे ईश्वर के लिए काटे जाते हैं, उसका पता लगाकर पाठक स्वयं देख लें। एक समय आएगा कि धर्म की बेहूदगी से संसार छुटकारा पाकर सुखी होगा और आपस का कलह मिट जायेगा। एक अत्याचारी मूर्ख शासक, खुद-मुख्तयार एवं रद्दी ईश्वर की कल्पना करना मानों स्वतंत्रता, मानव धर्म और न्याय को तिरस्कार करके दूर फेंक देना है। यदि आप चाहें कि ईश्वर आपका भला करे तो उसका नाम एकदम भुला दें फिर संसार मंगलमय हो जायेगा।''

''वेद-पुराण, कुरान, इंजील आदि सभी धर्म पुस्तकों को देखने से प्रगट है कि सारी गाथाएँ वैसी ही कहानियाँ है जैसी कुपढ़, बूढ़ी दादी, नानी अपने बच्चों को सुनाया करती है। बिना देखे सुने, अनहोने लापता ईश्वर या खुदा के नाम पर अपने

देश को, जाति को, व्यक्तित्व को और धन सम्पत्ति को नष्ट कर डालना, एक ऐसी मूर्खता है, जिसकी उपमा नहीं मिल सकती। यदि हम मनुष्य जाति का कल्याण चाहते हैं तो हमें सबसे पहले धर्म और ईश्वर को रद्दी से उतारना चाहिए।''

प्रपञ्च परिचय पृ. 296-20

धर्म के नाम पर व्यभिचार

कुछ जिह्वा लालची, स्वार्थ वश कामुक व्यक्ति धर्म के ठेकेदार बनकर धर्म के नाम पर मद्य, माँस आदि का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं।

मद्य माँसं च मीन मुद्रा मैथुनमैव च।
एते पंच मकारास्युर्मोक्ष दाहि युगे-युगे।।काली तंत्र

अज्ञानी-मोही-लाभ से वंचित-अदर्शनी बनने के कारण

(अनावश्यक जीव ईर्ष्या-घृणा-दंभ से उक्त दोषी बनते।)

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : मोक्ष डगरिया...प्यारी है...2)

ज्ञानावरणीय कर्म बन्धता है, बन्धता है, देव-शास्त्र-गुरु गुण छिपाने से।
मोहनीय कर्म बन्धता है, बन्धता है, देव-शास्त्र-गुरु निन्दा से।।(1)
अन्तराय कर्म बन्धता है, बन्धता है, धर्म में विघ्न डालने से।
दर्शनावरणीय कर्म बन्धता है, बन्धता है, सम्यग्दृष्टि में दूषण लगाने से।।(2)
प्रदोष दोष लगता है, लगता है, प्रशंसा सहन न होने से।
अन्तरंग में होता है, होता है, ईर्ष्या भाव गुण सुनने से।।(3)
निह्नव दोष लगता है, लगता है, गुरु व ग्रन्थ नाम छिपाने से।
शास्त्रदान जो न करते हैं, न करते हैं, योग्य पात्र होने पर भी।।(4)
मात्सर्य दोष होता है, होता है, ज्ञान होने पर भी न देने से।
अन्तराय दोष होता है, होता है, ज्ञान में बाधा डालने से।।(5)
आसादना दोष लगता है, लगता है, प्रकाशित ज्ञान न कहने से।
उपघात दोष लगता है, लगता है, सही ज्ञान में दूषण लगाने से।।(6)

आचार्य पाठक विरोध से, विरोध से, आलस्य अनादर करने से।
ज्ञान का घमण्ड करने से, करने से, हठाग्रह-दुराग्रह करने से।।(7)
बन्धते उक्त सभी महापाप, महापाप, केवल भावदोष कारणों से।
बाह्य से धर्म पालने से (भी), पालने से (भी),कर्म बन्धते उक्त दोषों से।।(8)
अतएव त्यजनीय निन्दा घृणा, निन्दा घृणा, करणीय ज्ञानदान-प्रशंसा।
श्रद्धा-प्रार्थना-पूजा से, भाव से, 'कनक' न कर्म बन्धे शुचि से।।(9)

सागवाड़ा दि. 13.06.2018 रात्रि 09:12

ज्ञानावरण और दर्शनावरण के आस्रव

तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः।(10)

1. प्रदोष Depreciation of the learned scriptures.
2. निह्नव Concealment of knowledge
3. मात्सर्य Envy, Jealousy, Refusal to impart knowledge out of envy.
4. अन्तराय Obstruction, Hindering the progress of knowledge
5. आसादना Denying the truth proclaimed by another by body and speech.
6. उपघात Refuting the truth, although it is known to be such.

ज्ञान और दर्शन के विषय में प्रदोष, निह्नव, मात्सर्य, अन्तराय, आसादना और उपघात ये ज्ञानावरण और दर्शनावरण के आस्रव हैं।

1. प्रदोष : किसी के ज्ञानकीर्तन (महिमा सुनने) के अनन्तर मुख से कुछ न कहकर अन्तरंग में पिशुनभाव होना, ताप होना प्रदोष है। मोक्ष की प्राप्ति के साधनभूत मति, श्रुत आदि पाँच ज्ञानों की वा ज्ञान के धारी की प्रशंसा करनरे पर वा उसकी प्रशंसा सुनने पर मुख से कुछ नहीं कह करके मानसिक परिणामों में पैशून्य होता है वा अन्तकरण में उसके प्रति जो ईर्ष्या का भाव होता है, वह प्रदोष कहलाता है।

निह्नवः दूसरे के अभिसन्धान से ज्ञान का व्यपलाप करना निह्नव है। यत् किञ्चित् परनिमित्त को लेकर किसी बहाने से किसी बात को जानने पर भी मैं इस बात को नहीं जानता हूँ, पुस्तक आदि के होने पर भी ''मेरे पास पुस्तक आदि नहीं

है'' इस प्रकार ज्ञान को छिपाना ज्ञान का व्यपलपन करना, ज्ञान के विषय में वञ्चन करना निह्नव है।

3. मात्सर्य : देय ज्ञान को भी योग्य पात्र के लिए नहीं देना मात्सर्य है। किसी कारण से आत्मा के द्वारा भावित, देने योग्य ज्ञान को भी योग्य पात्र के लिए नहीं देना मात्सर्य है।

4. अन्तराय : ज्ञान का व्यक्च्छेद करना अन्तराय है। कलुषता के कारण ज्ञान का व्यवच्छेद करना, कलुषित भावों के वशीभूत होकर ज्ञान के साथ पुस्तक आदि का व्यवच्छेद करना, नाश करना, किसी के ज्ञान में विघ्न डालना अन्तराय है।

5. आसादना : वचन और काय से वर्जन करना आसादना है। दूसरे के द्वारा प्रकाशित ज्ञान का काय एवं वचन से वर्जन (गुण-कीर्तन, विनय आदि नहीं करना) आसादना है।

6. उपघात : प्रशस्त ज्ञान में दूषण लगाना उपघात है। स्वकीय बुद्धि और हृदय की कलुषता के कारण प्रशस्त ज्ञान भी अप्रशस्त, युक्त भी अयुक्त प्रतीत होता है अतः समीचीन ज्ञान में भी दोषों का उद्भावन करना, झूठा दोषारोपण करना उपघात कहलाता है, उसको उपघात जानना चाहिये।

आसादान और उपघात में एकत्व नहीं है क्योंकि आसादना में विद्यमान ज्ञान का विनय-प्रकाशन, गुणकीर्तन आदि न करके अनादर किया जाता है और उपघात में ज्ञान को अज्ञान कहकर ज्ञान का ही नाश किया जाता है। अथवा ज्ञान के नाश करने का अभिप्राय रहता है; अतः आसादना और उपघात में भेद स्पष्ट है।

'तत्' शब्द से ज्ञान-दर्शन ग्रहण किये जाते हैं। 'तत्' शब्द से ज्ञान-दर्शन के प्रति निर्देश किया गया है। अर्थात् ज्ञान और दर्शन के प्रति प्रदोष, निह्नव, मात्सर्य, अन्तराय, आसादना और उपघात, ज्ञानावरण और दर्शनावरण कर्म के आस्रव के कारण हैं।

प्रदोषादि के विषयभेद से भेद सिद्ध होने से ज्ञानावरण और दर्शनावरण के आस्रव पृथक्-पृथक् हैं। ज्ञानावरण और दर्शनावरण के आस्रव भिन्न-भिन्न समझने चाहिये, क्योंकि विषय-भेद से प्रदोषादि भिन्न हो जाते हैं। ज्ञानविषयक प्रदोषादि ज्ञानावरण के और दर्शन विषयक प्रदोषादि दर्शनावरण के आस्रव के कारण होते हैं।

आचार्य और उपाध्याय के प्रतिकूल चलना, अकाल में अध्ययन करना, अश्रद्धा, शास्त्राभ्यास में आलस्य करना, अनादर से अर्थ का श्रवण, तीर्थोपरोध (दिव्यध्वनि) के काल में स्वयं व्याख्यान करने लगना, स्वकीय बहुश्रुत का गर्व करना, मिथ्योपदेश देना, बहुश्रुतवान् का अपमान वा अनादर करना, अपने पक्ष का दुराग्रह, स्वपक्ष के दुराग्रह के कारण असंबद्ध प्रलाप करना, सूत्रविरुद्ध बोलना, असिद्ध से ज्ञानाधिगम (असिद्ध से ज्ञान-प्राप्ति) शास्त्रविक्रय और हिंसादि कार्य ज्ञानावरण कर्म के आस्रव के कारण हैं। दर्शनमात्सर्य, दर्शनान्तराय, आँखें फोड़ना, इन्द्रियों के विपरीत प्रवृत्ति, अपनी दृष्टि का गर्व, बहुत देर तक सोये रहना, दिन में सोना, आलस्य, नास्तिक्य, सम्यग्दृष्टियों में दूषण लगाना, कुतीर्थ प्रंशसा, जीवहिंसा और मुनिगणों के प्रति ग्लानि के भाव आदि भी दर्शनावरणकर्म के आस्रव के कारण हैं।

महाभारत में कहा भी हैं :-

ये पुरा मनुजा देवि ज्ञानदर्पसमन्विताः।
श्लाघमानाश्च तत् प्राप्य ज्ञानाहङ्कारमोहिताः।।
वदन्ति ये परान् नित्यं ज्ञानाधिक्येनदर्पिताः।
ज्ञानदयासूयां कुर्वन्ति न सहन्ते हि चापरान्।।
तादृशा मरणं प्राप्ताः पुनर्जन्मनि शोभने।
मानुष्यं सुचिरात् प्राप्य तत्र बोधविवर्जिताः।।
भवन्ति सततं देवि यतत्रो हीनमेधसः।।

जो मनुष्य ज्ञान के घमण्ड में आकर अपनी झूठी प्रशंसा करते हैं और ज्ञान पाकर अहंकार से मोहित हो दूसरों पर आक्षेप करते हैं, जिन्हें सदा अपने अधिक ज्ञान का गर्व रहता है, जो ज्ञान से दूसरों के दोष प्रकट किया करते हैं, और दूसरे ज्ञानियों को नहीं सहन कर पाते हैं, शोभने। ऐसे मनुष्य मृत्यु के पश्चात् पुनर्जन्म लेने पर चिरकाल के बाद मनुष्य योनि पाते हैं। देवि! उस जन्म में वे सदा यत्न करने पर भी बोधहीन और बुद्धिरहित होते हैं।

अन्तराय कर्म का आस्रव

विघ्नकरणमन्तरायस्य।(27)

The inflow of obstructive अन्तराय Karma is caused by

disturbing others in दान Charity लाभ gain, भोग enjoyment of consumable things; and वीर्य making use of their powers.

दानादिक में विघ्न डालना अंतराय कर्म का आस्रव है।

दानादि का विघात करना विघ्न कहलाता है। दानादि अर्थात् दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य। किसी के दान लाभादि में विघ्न उपस्थित करना विघ्न कहलाता है। ज्ञान का प्रतिच्छेद सत्कारोपरघात (किसी के सत्कार में विघ्न डालना) दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य, स्नान, अनुलेपन, गन्ध, माल्य, आच्छादन, विभूषण, शयन, आसन, भक्ष्य, भोज्य, पेय, लेह्य और परिभोग आदि में विघ्न करना, किसी के विभव, समृद्धि में विस्मय करना, द्रव्य का त्याग नहीं करना, द्रव्य के उपयोग के समर्थन में प्रमाद करना, देवता के लिए निवेदित किये गये या अनिवेदित किये गये द्रव्य का ग्रहण करना, देवता का अवर्णवाद करना, निर्दोष उपकरणों का त्याग, दूसरों की शक्ति का अपहरण, धर्म का व्यवच्छेद करना, कुशल चारित्र वाले तपस्वी, गुरु तथा चैत्य की पूजा में व्याघात करना, दीक्षित, कृपण, दीन, अनाथ आदि को दिये जाने वाले वस्त्र, पात्र, आश्रय, आदि में विघ्न करना, परनिरोध, बन्धन, गुह्य अंगच्छेदन, कान, नाक, ओंठ आदि का काट देना, प्राणिवध आदि अन्तराय कर्म के आस्रव के कारण हैं।

तपस्विगुरूचैत्यानां पूजालोपप्रवर्तनम्।
अनाथदीनकृपणभिक्षादिप्रतिषेधनम्।।55।।
वधबन्धनिरोधैश्च नासिकाच्छेदकर्तनम्।
प्रमादाद्देवतादत्तनैवेद्यग्रहणं तथा।।56।।
निरवद्योपकरणपरित्यागो वधोऽङ्गिनाम्।
दानभोगोपभोगादिप्रत्यूहकरणं तथा।।57।।
ज्ञानस्य प्रतिषेधश्च धर्मविघ्नकृतिस्था।
इत्येवमन्तरायस्य भवन्त्यास्रवहेतवः।।58।। (तत्त्वार्थसार)

तपस्वी, गुरु और प्रतिमाओं की पूजा न करने की प्रवृत्ति चलाना, अनाथ, दीन तथा कृपण मनुष्यों को भिक्षा आदि देने का निषेध करना, वध-बन्धन तथा

अन्य प्रकार की रूकावटों के साथ पशुओं की नासिका आदि का छेद करना, देवताओं को चढ़ाये हुए नैवेद्य का प्रमाद से ग्रहण करना, निर्दोष उपकरणों का परित्याग करना (जिन पीछी या कमण्डल आदि उपकरणों में कोई खराबी नहीं आई है उन्हें छोड़कर नये ग्रहण करना), जीवों का घात करना, दान-भोग-उपभोग आदि में विघ्न करना, ज्ञान का प्रतिषेध करना-स्वाध्याय या पठन-पाठन का निषेध करना, तथा धर्मकार्यों में विघ्न करना ये सब अन्तराय-कर्म के आस्रव के हेतु हैं।

दर्शनमोहनीय का आस्रव

केवलिश्रुतसंघधर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य।(13)

The inflow of दर्शनमोहनीय right-belief-deluding-karmic matter is caused by अवर्णवाद defeming the Ommiscient Lord अरहत् i.e. केवलि, the scriptures श्रुत, the saint's brother hoods संघ the true religien धर्म and the celestial being देवा e.g. saying that the celestion being take meant or wine, etc. and to offer these as sacrifices to them.

केवली श्रुत, संघ, धर्म और देव इनका अवर्णवाद दर्शनमोहनीय कर्म का आस्रव है।

जिनका ज्ञान आवरण रहित है वे केवली कहलाते हैं। अतिशय बुद्धि वाले गणधर देव उनके उपदेशों का स्मरण करके जो ग्रन्थों की रचना करते हैं वह श्रुत कहलाता है। रत्नत्रय से युक्त श्रमणों का समुदाय संघ कहलाता है। सर्वज्ञ-द्वारा प्रतिपादित आगम में उपदिष्ट अहिंसा ही धर्म है। चार निकाय वाले देवों का कथन पहले कर आये हैं। गुणवाले बड़े पुरुषों में जो दोष नहीं है उनका उनमें उद्भावन करना अवर्णवाद है। इन केवली आदि के विषय में किया गया अवर्णवाद दर्शनमोहनीय के आस्रव का कारण है। यथा केवली कवलाहार से जीते हैं इत्यादि रूप से कथन करना केवलियों का अवर्णवाद है। शास्त्रों में माँस भक्षण

आदि को निर्दोष कहा है इत्यादि रूप से कथन करना श्रुत का अवर्णवाद है। ये शूद्र हैं, अशुचि हैं, इत्यादि रूप से अपवाद करना संघ का अवर्णवाद है। जिन देव के द्वारा उपदिष्ट धर्म में कोई सार नहीं जो इसका सेवन करते हैं वे असुर होंगे इस प्रकार कथन करना धर्म का अवर्णवाद है। देव सुरा और माँस आदि का सेवन करते हैं इस प्रकार का कथन देवों का अवर्णवाद है।

चारित्र मोहनीय का आस्रव

कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्र मोहस्य।(14)

The inflow of चारित्र मोहनीय right-conduct -deluding-karmic matter is caused by the intense thought activity produsedby the rise of the passions and of the quesi-passions no-kasaya.

कषाय के उदय से होने वाला तीव्र आत्मपरिणाम चारित्र मोहनीय के आस्रव के कारण है।

कषायों के उदय से जो आत्मा का तीव्र परिणाम होता है वह चारित्र मोहनीय का आस्रव जानना चाहिए।

कषायवेदनीय के आस्रव- स्वयं कषाय करना, दूसरों में कषाय उत्पन्न करना, तपस्वीजनों के चारित्र में दूषण लगाना, संक्लेश को पैदा करने वाले लिंग (वेष) और व्रत को धारण करना, धर्म का विध्वंस करना, किसी को शीलगुण, देशसंयम और सकलसंयम से च्युत करना, मद्य-माँस आदि से विरक्त जीवों को उनसे बिचकाना धार्मिक कार्यों में अन्तराय करना, आदि क्रियाएँ एवं भाव, कषाय वेदनीय के आस्रव के कारण।

(2) हास्य वेदनीय के आस्रव- सत्य धर्म का उपहास करना, दीन मनुष्य की दिल्लगी उड़ाना, कुत्सित राग को बढ़ाने वाला हँसी मजाक करना, बहुत बकने और हँसने की आदत रखना आदि हास्य वेदनीय के आस्रव हैं।

3. रति वेदनीय के आस्रव-नाना प्रकार की क्रीड़ाओं में लगे रहना, व्रत और शील के पालन में रूचि न रखना, आदि रति वेदनीय के आस्रव हैं।

4. अरति वेदनीय के आस्रव-दूसरों में अरति उत्पन्न हो और रति का विनाश हो ऐसी प्रवृत्ति करना और पापी लोगों की संगति करना आदि अरति वेदनीय आस्रव हैं।

5. शोक वेदनीय के आस्रवः स्वयं शोकातुर होना, दूसरों के शोक को बढ़ाना तथा ऐसे मनुष्यों का अभिनन्दन करना शोक वेदनीय के आस्रव हैं।

6. भय वेदनीय के आस्रवः-भयरूप परिणाम और दूसरों को भय पैदा करना आदि भय वेदनीय के कारण हैं।

7. जुगुप्सा वेदनीय के आस्रव-सुखकर क्रिया और सुखकर आचार से घृणा करना और अपवाद करने में रूचि रखना आदि जुगुप्सा वेदनीय के आस्रव हैं।

8. स्त्री वेदनीय के आस्रव : असत्य बोलने की आदत, अतिसन्धानपरता (दूसरों का भेद खोलना), दूसरों के छिद्र ढूँढ़ना और बढ़ा हुआ राग आदि हैं।

येऽत्रमायाविनो मर्त्या अतृप्ताः कामसेवने।
विकारकारिणोऽङ्गादौ योषिद्वेषादिधारिणः।।(96)

(श्री वीर वर्धमान चरिते)

मिथ्यादृशश्च रागान्धा निःशीला मूढ़ चेतसः।
नार्यो भवन्ति ते लोके मृत्वा स्त्रीवेदपाकतः।।

जो मनुष्य यहाँ पर मायावी होते हैं, काम सेवन करने पर भी जिनकी तृप्ति नहीं होती शरीरादि में विकारी कार्य करते हैं, स्त्री आदि के वेष को धारण करते हैं, मिथ्यादृष्टि हैं, रागान्ध है, शील रहित हैं और मूढ़ चित्त हैं, ऐसे मनुष्य मरकर स्त्री वेद के परिपाक से इस लोक में स्त्री होते हैं। अधिक शृंगार प्रिय होना (फैशन करना) स्व-पर शृंगार में रूचि रखना आदि कार्य सभी स्त्री वेदनीय के आस्रव हैं।

पुरुष वेदनीय के आस्रव- क्रोध का अल्प होना, ईर्ष्या नहीं करना, अपनी स्त्री में संतोष करना आदि पुरुष वेदनीय के आस्रव हैं।

भय की आत्मकथा

(सम्यग्दृष्टि सप्त भय रहित व निर्वेद रूपी भय/(पापभीरु) सहित होते)

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : पूछ मेरा क्या नाम रे...)

भय मेरा नाम है डरना मेरा काम है।
सम्यग्दृष्टि आत्मज्ञानी से होता हूँ भयभीत है।।
आगम में सप्त प्रकार कहा है मेरा भेद।
और भी मेरे अनेक भेद सप्त में होते गर्भित।।

इह लोक भय-परलोक भय-आकस्मिक व वेदना है।
मरण भय-अरक्षा भय-अगुप्तिभय मेरे ही मुख्य भेद।
जो होते हैं मिथ्यादृष्टि वे मुझ से होते संत्रस्त है।
'अहंकार' 'ममकार' सहित वे आत्मज्ञान से रहित है।।

शरीर को वे स्वरूप मानते सत्ता-संपत्ति में 'ममकार' है।
सप्तमद से सहित होकर करते वे अहंकार है।
इनके लाभ को लाभ मानते इन की हानि से अलाभ है।
जिससे वे हानि होकर त्रास होते मेरे गुलाम है।।

किन्तु जो आत्मविश्वास ज्ञान से होते परिपूर्ण है।
वे स्वयं को शाश्वत (जीवद्रव्य) मानकर मुझसे होते निर्भय है।
वे मानते 'मैं' स्वयंभू-सम्पूर्ण-अनादि-अनिधन द्रव्य हूँ,
तन-मन-इन्द्रिय व सत्ता-सम्पत्ति परे जन्म-मरण से रहित हूँ।।

भले मैं अभी कर्म संयोग से तन-मनादि से सहित हूँ।
तथापि मेरा शुद्ध स्वरूप अजर-अमर अतः मैं निर्भय हूँ।
वे होते सप्तमद व मुझसे रहित प्रशम-संवेग-सहित है।
निर्वेद-अनुकम्पा-आस्तिक्य सहित अष्टअंग व गुण संयुक्त है।।

प्रशमगुण से सहित होने से अपराधी से भी न करते क्रोध है,
संसार-शरीर-भोग से संवेग (अतः) चक्री के सुख को माने दुःख है।
पाप व भोगों से जो होती विमुखता अथवा उद्वेग या भयभीत/(पाप भी)
वह गुण होता है निर्वेद अतः सम्यग्दृष्टि का भय शुभप्रद।।

देवशास्त्र गुरु व गुण गुणी निन्दा से होते सम्यग्दृष्टि भयभीत।
पंचपाप सप्त व्यसन-मद व अन्याय-अत्याचार से भयभीत।।
शोषण-मिलावट-चोरी-ठगी से होते हैं भयभीत।
स्वाभिमान व मर्यादा रहित भाव-काम से होते हैं भयभीत।।
संवेदनशील होते सुदृष्टि संसारी जीवों के दुःखों से दुःखी।
जिससे दुःखिओ के दुःख दूर हेतु बनते यथायोग्य सहयोगी।
इसे कहते हैं अनुकम्पागुण जो सम्यग्दृष्टि में होता अवश्य।
जिससे प्रेरित होकर करते वे दयादान सेवा परोपकार।।
जिनेन्द्र द्वारा कथित सत्य को स्वीकार करता है आस्तिक्य।
सनम्र सत्यग्राही होकर सम्यग्दृष्टि मानता है समस्त सत्य।
ऐसे होते हैं सम्यक्त्वी व मिथ्यात्वी जिसे डराऊँ व डरूँ।
'सूरी कनक' की कविता द्वारा मेरी आत्मकथा वर्णन करूँ ।।

सागवाड़ा : 16.06.2018, रात्रि 11.47

सन्दर्भ-

तं उवसमसंवेगाइएहि लक्खिज्जई उवाएहिं।
आयपरिणामरूवं बज्झेहिं पसत्थजोगेहि।।53।।
इत्थं य परिणामो खलु जीवस्स सुहो उ होइ विन्नेओ।
किं मलकलंकमुक्कं कणगं भुवि सामलं होइ।।54।। (श्रावक प्रज्ञप्ति)

आगे दुर्लक्ष्य आत्मपरिणामरूप उस सम्यक्तव के अनुमापक कुछ चिह्नों का निर्देश किया जाता है -

आत्मपरिणामस्वरूप वह सम्यक्त्व बाह्य प्रशस्त व्यापाररूप उपशम व संवेग आदि उपायों से लक्षित होता है-जाना जाता है।।53।।

कारण इसका यह है कि इस सम्यक्त्व के होने पर जीव का परिणाम (व्यापार या आचरण) उत्तम ही होता है-निन्द्य आचरण उसका कभी नहीं होता है। सो ठीक भी है, क्या लोक में कभी मल-कलंक-कीट-कालिमा से रहित सुवर्ण मलिन हुआ है? नही!

विवेचन-प्रकृत सम्यक्त्व अतीन्द्रिय आत्मा का परिणाम है, अतः छद्मस्थ के लिए उसका परिज्ञान नहीं हो सकता। इससे यहाँ उसके परिचायक कुछ बाह्य चिह्नों का निर्देश किया गया है। वे चिह्न ये हैं-प्रशम, संवेग, निर्वेद, अनुकम्पा और आस्तिक्य। ये सब बाह्य प्रवृत्ति रूप हैं। जिस जीव के उक्त सम्यक्त्व प्रादुर्भूत हो जाता है उसकी बाह्य प्रवृत्ति प्रशस्त होती है, वह कभी निन्द्य आचरण नहीं करता। इसी से उक्त प्रशम-संवेगादिरूप प्रवृत्ति को देखकर उसके आश्रय से किसी के उस सम्यक्त्व का अनुमान किया जा सकता है। इनके होते हुए वह सम्यक्त्व हो भी सकता है और कदाचित् नहीं भी हो सकता है, पर इनके बिना उस सम्यक्त्व का अभाव सुनिश्चित समझना चाहिए। कारण इसका यह है कि वैसी प्रवृत्ति अन्तःकरण पूर्वक न होकर कदाचित् कपट से भी की जा सकती है।।

आगे उन प्रशमादिकों के स्वरूप का निरूपण करते हुए प्रथमतः प्रशम के स्वरूप को प्रकट किया जाता है-

पयईइ वे कम्माणं वियाणिउं वा विवागमसुहं ति।
अवरद्धे वि न कुप्पइ उवसमओ सव्वकालं पि।।55
नरविबुहेसरसुक्खं दुक्खं चिय भावओ य मन्नंतो।
संवेगओ न मुक्खं मुत्तूणं किंचि पत्थेइ।।56

सम्यक्त्व से विभूषित जीव उपशम (प्रशम) के आश्रय से स्वभावतः अथवा कर्मों के अशुभ विपाक को जानकर सदा अपराधी प्राणी के ऊपर भी क्रोध नहीं किया करता है।

विवेचन-सम्यक्त्व को प्राप्त कर लेने पर जीव का स्वभाव इस प्रकार का हो जाता है कि यदि कोई प्राणी प्रतिकूल होकर उस का अनिष्ट भी करता है तो भी वह उससे ऊपर कभी क्रोध नहीं करता। ऐसे समय में वह यह भी करता है कि क्रोधादि कषाय हो तो कर्मबन्ध के कारण हैं। कषाय के वशीभूत होकर प्राणी अन्तर्मुहूर्त में

जिस कर्म को बाँधता है उसके फलको वह अनेक कोड़ाकोड़ी सागरोपम काल तक कष्ट के साथ सहता है। इस प्रकार कर्म के अशुभ फल को जानकर वह अपराध करने वाले के ऊपर भी जब क्रोध नहीं करता तब भला वह निरपराध प्राणी के ऊपर तो क्रोध कर ही कैसे सकता है? इस प्रकार से जो सम्यक्त्व के प्रभाव से उसके क्रोधादि कषायों की स्वभावतः उपशान्ति होती है उसी का नाम प्रशम है।।55।।

संवेग का स्वरूप

सम्यग्दृष्टि जीव संवेग निमित्त से चक्रवर्ती और इन्द्र के सुख को भी यथार्थ में दुःख ही मानता है। इसी से वह मोक्ष को छोड़कर अन्य कुछ भी नहीं चाहता है।

विवेचन-यथार्थ सुख उसे ही कहा जा सकता है जहाँ कुछ भी आकुलता न हो। चक्रवर्ती और इन्द्र आदिका सुख स्थायी नहीं है-विनश्वर है, अतः वह आकुलता से रहित नहीं हो सकता। इसीलिए सम्यग्दृष्टि जीव इन्द्र व चक्रवर्ती आदि के सातावेदनीयजन्य उस सुखको विनश्वर व पापका मूल जानकर दुख ही मानता है। वास्तविक सुख परावलम्बन के बिना होता है। कर्मोदय के बिना प्राप्त होनेवाला स्वाधीन व शाश्वतिक वह सुख मोक्ष में ही सम्भव है। अतएव सम्यग्दृष्टि जीव क्षणनश्वर, पराधीन व परिणाम में दुःखोत्पादक सांसारिक सुख की अभिलाषा न करके निर्बाध व शाश्वतिक सुख के स्थानभूत मोक्ष की ही अभिलाषा करता है। इस मोक्ष को अभिलाषा का नाम ही संवेग है जो उस सम्यक्त्व के प्रकट होने पर स्वभावतः होता है।।56।।

नारयतिरियनरामरभवेसु निव्वेयओ वसइ दुक्खं।
अकयपरलोयमग्गो ममत्तविसवेगरहिओ वि।।57।।
दट्ठूण पाणिनिवहं भीमे भवसागरंमि दुक्खत्तं।
अविसेसओ णुकंपं दुहावि सामत्थओ कुणइ।।58।।
मन्नइ तमेव सच्चं निस्संकं जं जिणेहि पन्नत्तं।
सुहपरिणामो सव्वं कंक्खाइविसुत्तियारहिओ।।59।।

निर्वेदका स्वरूप

ममतारूप विष के वेग से रहित भी प्राणी परलोक के मार्ग को न करके-उत्तम परलोक के कारणभूत सदाचरणको न करके निर्वेद के आश्रय से नारक, तिर्यंच,

मनुष्य और देव पर्यायों में दुखपूर्वक रहता है।

विवेचन-नारक, तिर्यंच और कुमानुष अवस्था का नाम निर्वेद है (दशवै, निर्युक्ति 203) तत्त्वार्थाधिगमभाष्य को सिद्धसेन गणि विरचित्त वृत्ति (1-3) के अनुसार विषयों में जो अनासक्ति होती है उसे निर्वेद कहा गया है। यहीं पर आगे (7-7) पुनः यह कहा गया है कि शरीर, भोग, संसार और विषयों से जो विमुखता, उद्वेग अथवा विरक्ति होती है उसका नाम निर्वेद है। प्रकृत गाथा का अभिप्राय यह है कि सम्यग्दृष्टि जीव निर्वेद के आश्रय से नारक आदि भवों में दुखपूर्वक रहता है। वह ममत्वभावसे रहित होता हुआ भी यद्यपि उत्तम परलोक के योग्य आचरण नहीं कर पाता है, फिर भी वह उन्हें कष्ट पर मानता है व उनकी ओर से विमुख रहता है।।57।।

अनुकम्पा के स्वरूप

सम्यग्दृष्टि जीव भयानक संसाररूप समुद्र में दुःखों से पीड़ित प्राणीसमूह को देखकर बिना किसी विशेषता के-समानरूपसे-यथाशक्ति द्रव्य व भाव के भेद से दोनों प्रकार की अनुकम्पा को करता है। अभिप्राय यह है कि चारों गतियों में परिभ्रमण करते हुए प्राणी अनेक प्रकार से शरीरिक व मानसिक दुखों से पीड़ित रहते हैं। उन्हें इस प्रकार दुखी देखकर सम्यग्दृष्टि जीव स्वभावतः उनके दुखको अपना समझता हुआ यथायोग्य उन्हें प्रासुक भोजनादि देकर जहां द्रव्य से अनुकम्पा करता है वहाँ उन्हें सन्मार्ग में लगाकर वह भाव से भी अनुकम्पा करता है वहाँ उन्हें सन्मार्ग में लगाकर वह भाव से भी अनुकम्पा करता है। यह अनुकम्पा कार्य वह अपना व परका भेद न करके सभी के प्रति समान रूप से करता है। उपर्युक्त प्रशमादि के समान यह भी उसके सम्यक्त्व परिचायक है।।58।।

सम्यग्दृष्टि के आस्तिकय

आस्तिक्य आदि रूप शुभ परिणाम से युक्त सम्यग्दृष्टि जीव कांक्षा आदि विश्रोतसिका-प्रतिकूल प्रवाह-से रहित जिनदेव के द्वारा जो भी वस्तुका स्वरूप कहा गया है उस सभी को सत्य मानता है।

विवेचन-जीवादि पदार्थ यथासम्भव अपने-अपने स्वभाव के साथ वर्तमान है, इस प्रकार की वृद्धिका नाम आस्तिक्य है, (त.वा. 1,2,30। 'आत्मा आदि पदार्थ

समूह हैं' इस प्रकार की बुद्धि जिसके होती है उसे आस्तिक और उसकी इस प्रकार की परिणति को आस्तिक्य कहा जाता है। यह गुण सम्यग्दृष्टि जीव में स्वभावतः होता है। जिन भगवान् के द्वारा जीवादि पदार्थों का जैसा स्वरूप कहा गया है उसे ही यह यथार्थ मानता है। कारण यह कि वह यह जानता है कि जिन भगवान् सर्वज्ञ व वीतराग हैं, अतः वे वस्तुस्वरूप का अन्यथा कथन नहीं कर सकते। असत्य वही बोलता है जो या तो अल्पज्ञ हो या राग-द्वेष के वशीभूत हो। सो जिन भगवान् में इन दोनों का ही अभाव है। अतएव उनसे असत्यभाषण की सम्भावना नहीं की जा सकती। ऐसा सम्यग्दृष्टि के दृढ़ विश्वास हुआ करता है। यही आस्तिक्य गुण का लक्षण है। सम्यग्दृष्टि जीव इस आस्तिक्य गुण के साथ पूर्वनिर्दिष्ट प्रशम, संवेग, निर्वेद, अनुकम्पा से संयुक्त होता है। साथ ही वह सम्यक्त्वगुण के साथ पूर्वनिर्दिष्ट प्रशम, संवेग, निर्वेद, अनुकम्पा से संयुक्त होता है। साथ ही वह सम्यक्त्व को मलिन करने वाले कांक्षा व विचिकित्सा आदि अतिचारों से रहित भी होता है। इन अतिचारों का स्वरूप ग्रन्थकार के द्वारा आगे स्वयं निर्दिष्ट किया जाने वाला है। (87-88)। यहाँ कांक्षा आदि को विश्रोतसिका कहा गया है। उसका अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार खेत में बोयी गयी फसल की वृद्धि के लिए उसका जल से सिंचन किया जाता है, पर सिंचन के लिए उपयुक्त जल का प्रवाह यदि विपरीत दिशा में जाने वाला हो तो उससे फसल का संरक्षण व संवर्धन नहीं हो सकता है, ठीक इसी प्रकार संयम का संरक्षण व संवर्धन करने वाला यह सम्यक्त्व यदि कांक्षा आदि से मलिन हो रहा हो तो उससे स्वीकृत संयम का संरक्षण व संवर्धन नहीं हो सकता है। इसी से सम्यग्दृष्टि को उनसे रहित कहा गया है।।59।।

एवंविहपरिणामो सम्मद्दिट्ठी जिणेहिं पन्नत्तो।
एसो य भवसमुद्दं लंघइ थोवेण कालेण।।60

उपसंहार

इस पकार जिन देव के द्वारा सम्यग्दृष्टि जीव को उक्त प्रकार के प्रथम-संवेगादिरूप शुभ परिणामों से युक्त कहा गया है। इसी प्रकार की उत्तम परिवार से युक्त यह सम्यग्दृष्टि ही थोड़े समय में अधिक से अधिक उपार्धपुद्गलपरावर्त काल के भीतर ही संसार रूप समुद्र को लांघता है-वह भयानक चतुर्गतिस्वरूप संसार से शीघ्र मुक्त

हो जाता है।।60।।

जं मोणं तं सम्मं जं सम्मं तमिइ होइ मोणं ति।
निच्छयओ इयरस्य उ सम्मं सम्मत्तहऊ वि।।61।।
जं मोणं ति पासहा तं सम्मं ति पासहा।
जं सम्मं ति पासहा तं मोणं ति पासहा।। इत्यादि
निश्चयतः परमार्थेन निश्चयनयमतेनैव एतदेवमिति
जो जहजायं न कुणइ मिच्छद्दिट्ठी तआ हु को अन्नो।
वड्ढेइ य मिच्छत्तं परस्स संकं जणेमाणो।।

आगे मुनि धर्म को ही सम्यक्त्व का निर्देश किया जाता है -

यथार्थ में यहाँ निश्चयनय की अपेक्षा जो मुनि का चारित्र है वह सम्यक्त्व है और जो सम्यक्त्व है वह मुनि का चारित्र है। पर व्यवहार नय की अपेक्षा सम्यक्त्व का जो कारण है उसे भी सम्यक्त्व कहा जाता है।

विवेचन- प्रकृत गाथा में निश्चय और व्यवहार इन दोनों नयों की अपेक्षा सम्यक्त्व के स्वरूप को दिखलाते हुए कहा गया है कि निश्चय से जो मुनिधर्म है वही सम्यक्त्व है और जो सम्यक्त्व है वही मुनि धर्म है-दोनों में कुछ भेद नहीं है। कारण यह कि निश्चय से आत्म-पर-विवेक का होना ही सम्यक्त्व है जो उस मुनि धर्म से भिन्न नहीं है। इस आत्म-पर विवेक के प्रकट हो जाने पर प्राणी को हेय और उपादेय का ज्ञान होता है, जिसके आश्रय से वह पापाचरण को छोड़कर संयम में प्रवृत्त होता है। 'मन्यते जगतस्त्रिकालावस्थामिति मुनिः' इस निरुक्ति के अनुसार मुनि का अर्थ है तीनों काल की अवस्था को समझने वाला तपस्वी। इसी से निश्चयनय की अपेक्षा इन दोनों में भेद नहीं किया गया। टीका में इसकी पुष्टि आचारांग सूत्र (156, पृ. 192) से की गयी है। जो यथार्थ आचरण नहीं करता है उससे अन्य मिथ्यादृष्टि और कौन हो सकता है? जैसे ही मिथ्यादृष्टि जानना चाहिए। ऐसा मिथ्यादृष्टि शंका को उत्पन्न करता हुआ दूसरे के भी मिथ्यात्व को बढ़ाता है। व्यवहार नय से जो जिनशासन विषयक अनुराग आदि सम्यक्त्व के कारण हैं उन्हें भी कारण में कार्य के उपचार से सम्यक्त्व कहा जाता है, क्योंकि परम्परा से वे भी मुक्ति के कारण हैं। जैनशासन की यह एक विशेषता है कि वहाँ वस्तुतत्त्व का विचार दुराग्रह को छोड़कर अनेकान्त दृष्टि से-

निश्चय व व्यवहार नयों के आधार से किया गया है। परस्पर सापेक्ष इन दोनों नयों के बिना वस्तु के स्वरूप को यथार्थ से समझा ही नहीं जा सकता। इसी से आगम में यह कहा गया है कि जो आत्महितैषी भव्य जीव जिनमत को स्वीकार करता है उसे व्यवहार और निश्चयनयों को नहीं छोड़ना चाहिए। इसका कारण यह है कि व्यवहार नय के छोड़ देने पर जैसे तीर्थ का-धर्म प्रवर्तन का-विनाश अवश्यम्भावी है 'वैसे ही निश्चयनय के छोड़ देने पर तत्त्व का-वस्तु व्यवस्था का-विनाश भी अनिवार्य है। अतः तत्त्व को समझने के लिए मुख्यता व गौणता या विवक्षा व 'अविवक्षा के आधार से यथासम्भव उक्त दोनों नयों का उपयोग अवश्य करना चाहिए।।61।।

जइ जिणमयं पवज्जह ता मा ववहारनिच्छए मुयह।
ववहारनयउच्छेए तित्थुच्छेओ जओऽवस्सं।।इत्यादीनि।।61।।
तत्तत्थसद्दहाणं सम्मत्तं तंमि पसममाईया।
पढमकसाओवसमादविक्खया हुंति नियमेण।।62।।
जीवाजीवासवबंधसंवरा निज्जरा य मुक्खो य।
तत्तत्था इत्थं पुण दुविहा जीवा समक्खाया।।63।।

आगे वाचक उमास्वाति के द्वारा जिस सम्यग्दर्शन का लक्षण तत्त्वार्थश्रद्धान निर्दिष्ट किया गया है वह प्रथम-संवेगादि का हेतु है, इसे दिखलाते हैं-

जीवाजीवादि तत्त्वार्थों के श्रद्धान का नाम सम्यग्दर्शन है। उसके हो जाने पर प्रथम कषाय-के उपशम आदि की अपेक्षा से पूर्वोक्त प्रशम-संवेग आदि नियम से होते हैं।

विवेचन- तत्त्वार्थाधिगम सूत्र (1-2) में जीव-अजीव आदि सात तत्त्वार्थों के श्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहा गया है। जिस जीव के तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप यह सम्यग्दर्शन उत्पन्न हो जाता है उसके पूर्वोक्त प्रशम, संवेग, निर्वेद, अनुकम्पा और आस्तिक्य ये गुण नियम से होते हैं। इसका कारण यह है कि वह तत्त्वार्थश्रद्धानरूप सम्यग्दर्शन प्रथम अनन्तानुबन्धी कषाय के उपशम, क्षय अथवा क्षयोपशम के होने पर ही होता है-उसके बिना नहीं होता। उक्त प्रशमादि भी प्रकृत कषाय के उपशमादि की अपेक्षा रखते हैं। यही कारण है जो उसके उदय युक्त जीवों के असम्भव वे प्रशमादि भाव सम्यग्दृष्टि के नियम से होते है। इस प्रकार सम्यग्दर्शन के अविनाभावी वे

प्रशमादिक उस (सम्यग्दर्शन) के परिचायक होते हैं।।62।।

आशंकाओं का सामना करें और विकसित होवें

जिससे आप भयभीत है वह करें, और भय की मृत्यु सुनिश्चित है।
- राल्फ वाल्डो इमर्सन

श्रोताओं में बैठकर प्रेरणादायक वक्ता गिल ईगल्स को सुनते समय मैंने तनिक-सी भी कल्पना नहीं की थी कि उनका एक वाक्य मेरे समूचे जीवन को बदल देगा।

गिल ईगल्स की उस दिन की प्रस्तुति अद्‌भुत थी, उन्होंने अनेकों बहुमूल्य बातें कही, पर एक पंक्ति-एक अनमोल रत्न उन-सब में अलग से चमक रहा था, उन्होंने यह कहा था :

''यदि आप सफल होना चाहते हैं, तो कष्टप्रद परिस्थितियों के लिए तैयार रहें।''

मैं इन शब्दों को कभी नहीं भूलूँगा। और गिल का कथन सिक्के की उछाल-जैसा सही था। अपने सामर्थ्य को समझने और लक्ष्यों को पाने के लिए असुविधाओं को भोगना आवश्यक है ताकि हम उन कार्यों को कर सकें जिन्हें करने से हम डरते हैं और तभी हम अपने सामर्थ्य और अन्तःशक्ति को पहचान सकेंगे।

सुनने में कितना सरल लगता है, है न? फिर भी, अनेकों व्यक्ति भयावह परिस्थितियों के आने पर अथवा नया कार्य करते समय क्या करते हैं? वे डरकर पीछे हट जाते हैं। वे कार्यारम्भ नहीं करते। मैं जानता हूँ...क्योंकि मैंने भी अपने जीवन के आरम्भिक 30 वर्षों में, यही किया था और मैं बिना हिचक के कह सकता हूँ कि यह पराजय की रणनीति है।

मुझे एक भी सफल व्यक्ति बताये और उसमें मैं एक ऐसा व्यक्ति खोज निकालूँगा जिसने अपने भय पर विजय पाई थी और कर्मठ बनकर आगे बढ़ा था।

अपने डर को टटोलें

क्या आप कभी किसी नए कठिन कार्य को आरम्भ करने से पहले भयभीत अथवा चिन्तित हुए हैं? क्या उस भय ने कभी आपको क्रियाशील होने से रोका है?

मुझे मालूम है, आप भी अपने जीवन में, कभी-न-कभी, भय से स्तम्भित या अवाक् रह गए होंगे। मैं जानता हूँ क्योंकि मैं ऐसा रह चुका हूँ। ऐसा हो जाना मनुष्य का सहज स्वभाव है।

निःसन्देह, हर व्यक्ति के भय की अपनी-अपनी चौखट होती है। जो किसी बात को मरने-जैसा बना देती है, उसी बात का, सम्भव है, दूसरे पर कोई प्रभाव न हो। जैसे, किसी के लिए नया व्यापार आरम्भ करना अथवा जन-समूह के सामने व्याख्यान देना। भय से काँपने वाली बात हो, किसी को, रास्ते का मार्गदर्शन लेना अथवा मिलन की तारीख पूछना भयभीत करे। आपका भय अथवा आशंका कितना ही तुच्छ अथवा मूर्खतापूर्ण हो, यह पाठ आपके लिए लिखा गया है।

जब मैं डर की बात करता हूँ, तो मैं उन शारीरिक खतरों के बारे में बात नहीं कर रहा होता हूँ, जो आपके शरीर को आघात पहुँचा सकते या स्वास्थ्य को खतरे में डाल सकते है, जैसे एकापुल्को की खड़ी पहाड़ी चट्टानों पर कूदकर गोता लगाना या बंगी जम्प करना, मैं भी इनसे भयभीत हूँ, मेरी ऐसा करने की कोई योजना भी नहीं है, मैं यहाँ उन चुनौतियों की बात कर रहा हूँ जो आपके व्यावसायिक और व्यक्तिगत जीवन के विकास के मार्ग में आती हैं, ये वे बातें हैं जो आपको भयभीत करती है - पर आप यह भी जानते है कि यदि आपको जीवन में अपनी इच्छित वस्तुएँ चाहिए, तो ये आवश्यक है।

''जीवन में कुछ भी डरने लायक नहीं है वह सिर्फ समझने योग्य है''

- मेरी क्यूरी

आरामदेह क्षेत्र

जब आप भय और चिन्ता से त्रस्त होते हैं, तो उस समय आप अपने आराम क्षेत्र से बाहर निकल चुके होते हैं, आइए, इस प्रमुख धारणा पर विचार करने में कुछ समय लगाएँ और समझें कि यह आपकी सफलता और सामर्थ्य के विकास से कैसे जुड़ा हैं।

हमारा प्रत्येक का एक सुविधा-क्षेत्र-कम्फर्ट जोन होता है, जो हमारा परिचित होता है और हम वहाँ आराम और सुरक्षा का अनुभव करते हैं, इस सर्कल-घेरे के अन्दर आप अपने सुविधा-क्षेत्र की कल्पना करें।

आरामदेय क्षेत्र

एक मुस्कान आपके चेहरे को अधिक सुन्दर बनाने का अनमोल साधन है। - अज्ञात

इस क्षेत्र की गतिविधियाँ और परिस्थितियाँ भयभीत न करने वाली और परिचित होती हैं, वे हमारे दैनन्दिन जीवन की रोज की घटनाएँ होती हैं-जिन्हें हम बिना पसीना बहाए कर सकते हैं। इस श्रेणी में आपके मित्रों से वार्तालाप करना, सहकर्मी से बोलना और/या ऑफिस का रोज का कामजाती काम निबटाना आता है।

फिर भी, अनेक बार हम कुछ अनुभव या चुनौतियाँ ऐसी भोगते हैं, जो हमारे आराम क्षेत्र के बाहर की होती है, इन्हें ऊपर X के द्वारा दर्शाया गया है, घेरे के केन्द्र से X जितना अधिक दूर होगा, उसे करने में आप उतने अधिक भयभीत होंगे।

जब हम अपने आराम-क्षेत्र के बाहर की किसी समस्या का सामना करते हैं तो सहसा अधीर हो जाते हैं, आपकी हथेलियों में पसीना आ जाता है और आपका हृदय जोरों से धड़कने लगता है, आप आश्चर्य करने लगते हैं :

''क्या मैं इसे सँभाल सकूँगा?''

''क्या लोग मुझ पर हँसेंगे?''

''मेरे मित्र और रिश्तेदार क्या कहेंगे?''

ऊपर रेखांकित चित्र पर दृष्टि डालें। Xआपकी राय में क्या बताता है? दूसरे शब्दों में, कौन-से भय आपको प्रगति की अगली सीढ़ी तक पहुँचने से अथवा जीवन में सन्तोष पाने से रोक रहे हैं?

क्या यह नए सम्भावित ग्राहकों से मिलने का डर हैं?

क्या यह व्यवसाय-परिवर्तन से सम्बन्धित भय हैं?

यह क्या नई कुशलताओं को सीखने की आशंका से उत्पन्न भय हैं?

क्या यह वापिस स्कूल जाने का भय है?

क्या यह अपने मन की बात को औरों को बताने का डर हैं?

क्या यह भीड़ को सम्बोधित करने का भय है?

वह Xचाहे जिस विचार का प्रतिनिधित्व करे, आप ईमानदारी से उसे मान लें। मेरा अनुमान है, लाखों नहीं तो कम-से-कम हजारों व्यक्तियों को वही भय होता

है जो आपको है, आओ हम उनके भय को निकट से देखकर जानें कि अधिकांश लोग किन बातों से भयभीत रहते हैं।

सबसे सामान्य भय

अपनी अनेकों प्रस्तुतियों के बीच में अपने श्रोताओं को ''इण्डेक्स कार्ड्स'' बाँटता हूँ और उनसे कहता हूँ कि वे इनमें गुप्त रूप से (बिना नाम के) लिखें कि वे कौन-से भय हैं जो उनके व्यावसायिक और वैयक्तिक विकास के बीच आ रहे हैं, फिर मैं उन कार्डो को जमा करता हूँ और जोर से पढ़कर सुनाता हूँ।

आप क्या सोचते हैं, लोग इन कार्डो पर क्या लिखते हैं? अधिकांश श्रोता, अपने व्यवसाय अथवा रहने के स्थान की विविधता के बावजूद, एक-जैसे उत्तर देते हैं, उनके द्वारा आशंकित कुछ सामान्य भय को हम यहाँ चिह्नित कर रहे हैं :-

1. सार्वजनिक व्याख्यान या प्रस्तुति, प्रत्येक समूह में यह #1 का डर था, विशाल जन-समूह का अधिकांश, लोगों के सामने बोलने से बुरी तरह से भयभीत था।
2. ''ना'' शब्द को सुनकर, अथवा अपने प्रस्ताव की अस्वीकृति का भय, विक्रयकर्मियों में यह भय बहुत अधिक फैला हुआ है, विशेषकर उनमें जिनके फोन-कॉल्स अनुत्तरित रह जाते हैं।
3. नौकरी बदलने अथवा स्वयं का व्यवसाय आरम्भ करना, अनेकों वर्षों से मैं देखता आ रहा हूँ कि दिन-प्रति दिन अधिक व्यक्ति इस भय के शिकार हो रहे हैं, आज अमेरिका के अनेकों सामूहिक संस्थाओं में बड़ी संख्या में लोग असन्तुष्ट हैं और वे अधिक अच्छे सन्तोषजनक कार्य-परिस्थितियों की आकांक्षा करते हैं...पर वे इस बारे में कुछ भी करने से डरते हैं।
4. व्यवस्थापकों और प्रबन्धकों से ''नकारात्मक समाचार'' देने से डरना, क्योंकि वे उसे सुनना नहीं चाहते, बात इसे स्वयं समझा रही है।
5. उच्च श्रेणी के व्यवस्थापकों से बात करना, अनेकों निम्न श्रेणी के कर्मचारी और कुछ उच्च पदस्थ व्यवस्थापक भी कम्पनी के उच्च प्रबन्ध-निदेशकों से बात करने में बहुत अधिक भयभीत रहते हैं, वे ''छोटी-सी बात'' भी अपने अध्यक्ष अथवा मुख्य प्रबन्धक से नहीं कर पाते, उन्हें डर रहता है कि वे लोग

इन्हें अल्प-बुद्धि या बेवकूफ कहेंगे।

6. असफलता का डर, ये वे लोग हैं जो असफल होने के भय से कोई नया कार्य नहीं करते। (इस विषय पर हम पाठ 11 में अधिक चर्चा करेंगे)

तो क्या आप भी इस सूची में आए किसी भय से पीड़ित हैं? क्या इनमें का कोई भय अभी आपको है-या विगत में रह चुका है? सच्चाई यही है कि इनमें के किसी-न-किसी भय से हर व्यक्ति, कभी-न-कभी आक्रान्त रह चुका है, उसे अनुभव कर चुका है।

और यदि आपको कोई ऐसा डर है, जो इस सूची में नहीं है, तब भी उसकी चिन्ता न करें, आप अपने हर भय की अपेक्षा अधिक सशक्त है...और आप उस भय पर विजय पा सकते हैं।

भय से बचने के लिए पीछे हटना

जब हम किसी चिन्ताजनक परिस्थिति का सामना करते हैं तो अधिकांश व्यक्ति उसके डर और दुश्चिन्ता से बचने के लिए पीछे हट जाते हैं, मैं भी ऐसा ही किया करता था, सच है, पीछे हटने से यथार्थ में हम उस भय और चिन्ता से मुक्ति पा जाते हैं जो, यदि हम कार्य को करते रहते तो परिणामस्वरूप पाते, जैसे, यदि कोई आपसे, आपकी कम्पनी में एक प्रस्तुतीकरण-प्रेजेन्टेशन करने को कहता है और आप मना कर देते हैं, तो आप स्वयं को, चिन्तायुक्त नीन्द रहित रातों से बचा लेंगे जो आपने उसकी तैयारी में काटी होती... घबराहट और उत्तेजना, जो प्रस्तुतीकरण से पहले आपने भोगी होती।

यथार्थ में पीछे हटने के कारण, चिन्ता से कुछ समय के लिए बचने के फलस्वरूप मैंने इसी एक लाभ को पाया।

इस बारे में थोड़ा विचार करें। जब लोग अपने भय का सामना करने से इन्कार कर देते हैं, तो क्या उन्हें मिलनेवाला कोई और लाभ आप गिना सकते हैं? मैंने यह प्रश्न हजारों से पूछा और कोई भी, किसी और अतिरिक्त लाभ को नहीं बता सका और यही सच है कि कोई और लाभ है ही नहीं।

आप जो मूल्य चुकाते हैं

अब हम गम्भीरता से विचार करेंगे कि जिन भयों से डरकर हम पीछे हट

जाते हैं, हमें उसकी क्या कीमत चुकानी पड़ती है। ये भय आपकी प्रगति के बन्धक हैं, यह ऐसे होता हैं :

आपका आत्म-सम्मान-घट जाता है।

आप स्वयं को असमर्थ और कुण्ठित पाते हैं

आप अपनी सफलता को ध्वस्त कर देते हैं

आप एक निष्क्रिय नीरस जीवन जीने लगते हैं।

क्या कुछ समय के भय और चिन्ता की इतनी बड़ी कीमत देना योग्य हैं? हममें से अधिकांश यह मूल्य चुकाने को तैयार है, ताकि वे अस्थायी अड़चनों और दूसरों के सम्भावित उपहास से बच सकें।

पर मित्रों, मुझ पर विश्वास करें, यह मूर्खता है, समय बीतने पर ज्ञात होगा कि समस्या से बचना, समस्या का सर्वश्रेष्ठ निदान नहीं है। आप जीवन में कभी भी उच्च कक्षा की सफलता नहीं पा सकेंगे, अथवा जब तक आप अपने भय से संघर्ष नहीं करते, अपनी क्षमता को पूर्ण रूप से विकसित नहीं कर पाएँगे।

परिस्थिति का नया खाका खींचें

यदि मैं आपको बिना भय या चिन्ता के असुविधाजनक परिस्थितियों का सामना करने का मार्ग बता सकता तो आप हर्षोन्मत्त और मेरे प्रति अनन्त काल के लिए आभारी बन जाते है न, सच? पर क्षमा करें, ऐसा कोई जादुई समाधान नहीं है, जादू की छड़ी घुमाकर मैं आपके भय को नहीं भगा सकता हूँ।

फिर आप उन पर विजय पाने का साहस कैसे जुटाएँगे और उन कार्यो को कैसे करेंगे जिनसे आप डरते हैं, पर जो आपकी सफलता और विकास के लिए जरूरी है?

अगली बार जब आप किसी भयप्रद स्थिति का सामना करें, मेरा सुझाव है, आप उसे प्रति अपना दृष्टिकोण बदल दें। अधिकांश लोग सोचना आरम्भ कर देते हैं, ''मैं इस कार्य को ठीक से नहीं कर पाऊँगा और अन्य लोग मुझ पर हँसेंगे अथवा मेरा तिरस्कार करेंगे'' वे अपनी कार्य-कुशलता के बारे में सोचकर ढीले पड़ जाते हैं, इन चिन्ताओं के कारण वे वापिस लौटने का मन बना लेते हैं, जब कि आपको सदा रचनात्मक दृष्टिकोण के साथ बढ़ना चाहिए और हर सम्भावना के लिए पहले से

तैयार रहना चाहिए तथा परिणाम की अधिक चिन्ता नहीं करना चाहिए।

प्रयत्न आरम्भ करते ही स्वयं को तत्काल विजयी मानें और उस कार्य को करें जिससे भय लगता है यही उचित है, युद्ध परिधि में प्रवेश करते ही आप विजेता बन चुके हैं और अब, परिणाम की चिन्ता किये बिना, आप हिस्सा ले रहे हैं।

भयभीत होने पर भी आगे बढ़ें

मानों जैसे, आप सभाओं में व्याख्यान देने से डरते हैं पर आप अपने डर पर काबू पाते हैं और किसी तरह उसे निबटाते हैं, जिस क्षण आप उठते और श्रोताओं के सामने बोलते हैं, आप विजयी हैं, भले ही आपके पाँव काँप रहे हों और आवाज रुँध रही हो, वह महत्वपूर्ण नहीं है। आपने अपने भय का सामना किया और मुकाबला मंजूर किया, शुभ-कामनाएँ आपकी ओर चल पड़ी, इसका सम्भावित परिणाम यही होगा कि आपका आत्म-गौरव बढ़ जाएगा और आप उन्नत महसूस करेंगे।

अपने प्रथम प्रयत्न में लोग आपको विश्व का सर्वश्रेष्ठ व्याख्याता नहीं मानेंगे, पर इससे क्या फर्क पड़ता है? हमें समझना चाहिए कि अपनी प्रथम प्रस्तुति में आप एक निपुण व्याख्याता नहीं बन सकते। क्या अपने प्रथम टॅनिस के गेम के बाद आप कुशल टॅनिस-खिलाड़ी बन गए थे? अथवा महान् तैराक्, पानी में पहली बार प्रवेश करने के बाद? किसी भी कौशल को विकसित करने में समय लगता है।

भोजनदाता व रोगी के शोषक (भक्षक) अन्यायी देश इंडिया

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : 1. क्या मिलिए...2. आत्मशक्ति...)

सुनो! इंडियन सुनो अन्यायी देश तुम न पालत हो न्याय विशेष।
राजा-प्रजा, कानून-कम्पनी-नौकरशाही तक में तेरी ये दुर्दशा।।
न्याय न करते स्व-अन्नदाताओं से तथाहि फल-सब्जी-दूध दाताओं से।
फैशन-व्यसन व मनोरंजन में अपव्यय करते हो आडम्बरों में।।(1)
अन्नदाता भी भूखे मरते अन्नअभाव से तेरे ही कारणों से।

पारिश्रमिक व लागत मूल्य भी उन्हें न देते हो तेरी अन्याय प्रवृत्ति तक भी।
उनका खाते हो उनको खाते हो तुम तो मानव रूप से दानव/(राक्षस) भी।।(2)

अन्न-फल-सब्जी-दूध का तो भोजन करके बनते हृष्ट-पुष्ट।
किन्तु इसके उत्पादन कर्त्ताओं का रक्तशोषण से उन्हें देते मरण।।
तथापि उनसे वोट/(नोट) प्राप्ति हेतु देते हो उन्हें झूठे आश्वासन।
नेता व सरकार बनाकर टैक्स/(ब्याज) आदि से उनका करते हो शवदहन।।(3)

गोमुख व्याघ्र व बगुला भगत सम उन्हें देते हो बार-बार मरण।
झूठा आश्वासन व घडियालु आँसु से स्वयं को दिखाते हो गुणी महान्।
गरीब रोगी जिनगी सेवा-सुश्रुषा करना भी है मानव धर्म।
इसमें समाहित दयादान-परोपकार तथापि शोषण से करते हो अधर्म।।(4)

धरती के भगवान् डॉक्टर को बोलते किन्तु डॉक्टर/(फार्मा कम्पनी) बन गये (मानो) डाकू।
पन्द्रह सौ फीसदी (1500%) तक महँगी दवा बेचते ऐसे सफेदपोश डाकू।।
ऐसा ही होता है अन्याय-अत्याचार से भ्रष्टाचार तक।
जिसके कारण विश्वगुरु भारत बना हुआ विकासशील/(भ्रष्ट देश) अभी तक।।(5)

नारे लगाते हैं 'अहिंसो परमो धर्मः' तथा ''जीओ और जीने दो''।
किन्तु प्रायोगिक में करते विपरीत ''परोपदेशी पांडित्य'' यहाँ तक।।
भारतीय जागो स्वयं को पहचानो करो है स्व-पर उपकार।
शुद्ध-बुद्ध व आनन्द बनो इस हेतु 'सुरी कनक' करे पुकार/(आह्वान)

सागवाड़ा 19.06.2018 रात्रि 10:48

किस हाल में है देश का किसान?

किसानों की हड़ताल-असन्तोष के बीच पढ़िए उनकी स्थिति

देश में किसानों की स्थिति बेहद खराब है। इसीलिए अखिल भारतीय किसान संघर्ष समिति के नेतृतव में हाल ही में देश के 130 किसान संगठन गाँव बन्द हड़ताल कर चुके हैं। किसानों की प्रमुख समस्याएँ-न्यूनतम समर्थन मूल्य का लाभ न मिल पाना, बिचौलियों की मदद से उत्पाद बेचना और सरकार की योजनाओं का लाभ

किसानों तक नहीं पहुँच पाना है। दरअसल, नीति आयोग के आँकड़े बताते हैं कि 2011-12 से 2015-16 के दौरान कृषि संबंधी आय में सालाना सिर्फ 0.4 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। कृषक समृद्धि आयोग के सदस्य धमेन्द्र मलिक बताते हैं कि किसान कम दामों में अपना उत्पाद बाजार में बेचता है और उपभोक्ताओं को महँगे दामों में खरीदना पड़ता है। मसलन किसान गेहूँ 15-16 रुपए प्रति किलो बेचता है और उपभोक्ता केा 35 रुपए में मिलता है। सरकार को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि किसान का गेहूँ 20-22 रुपए बिके। वहीं बाजार में अधिकतम कीमत 25 रुपए तय हो। ऐसे में दोनों खुश रहेंगे।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के सेवानिवृत्त वैज्ञानिक वीरेन्द्र सिंह लाथर ने बताया कि किसानों को लागत से कम न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) मिल रहा है। यही वजह है कि किसान कर्जदार हो रहे हैं। लाथर कहते हैं, सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिए। किसान शक्ति संघ के अध्यक्ष चौधरी पुष्पेन्द्रसिंह ने कहा कि किसानों को सी2 लागत का डेढ़ गुना एमएसपी दिया जाना चाहिए, जो अभी नहीं मिल रहा है। केन्द्र सरकार ने इसकी घोषणा की थी। वहीं, इंडियन कोआर्डिनेट फार्मर्स कमेटी के संयोजक युद्धवीर सिंह ने बताया कि मौजूदा समय में गन्ना, दलहन, कपास, चावल सभी फसलों के किसान परेशान हैं। किसानों को एमएसपी से कम रेट में उत्पाद बेचना पड़ रहा है, जिससे वे कर्जदार हो रहे हैं और किसानों को आत्महत्या जैसा कदम उठाना पड़ता है। उन्होंने कहा कि इसके अलावा आयात और निर्यात में अन्तर भी किसानों की बदहाली का कारण है।

दरअसल केन्द्र हर साल 2 दर्जन फसलों का एक एमएसपी घोषित करती है। जो माँग-आपूर्ति, पैदावार अंतरराष्ट्रीय स्थिति के अनुसार होती है। ये तीन तरह के होते हैं। पहला-ए2 में किसान द्वारा वास्तव में हुआ खर्च बीज, खाद, कीटनाशक, जुताई, सिंचाई, डीजल, ट्रैक्टर और श्रम आदि खर्च होते है। दूसरी ए2+ एसएस इसमें किसान के परिवार का श्रम भी शामिल किया जाता है। तीसरा सी2 होता है इसमें ए2+ एसएस शामिल होता है। साथ ही किसान द्वारा जमीन किराए पर लेकर लीज पर लेकर या किसान द्वारा लगाई गई पूँजी, जिसकी वापसी 6 माह बाद होती है, इसमें शामिल किया जाता है।

4 साल में सिर्फ 0.4 प्रतिशत बढ़ी है किसानों की आमदनी

किसान क्या कहते हैं, उगाते हैं और पाते हैं

किसान 14 करोड़ के करीब हैं देश में छोटे-बड़े किसान

50 प्रतिशत के करीब आबादी कृषि पर निर्भर है। 66 प्रतिशत जनसंख्या आजादी के समय कृषि पर निर्भर थी। देश में किसानों के पास 13 करोड़ हेक्टेयर कृषि योग्य जमीन है।

60 प्रतिशत किसान देश में सिर्फ साक्षर है और 50 प्रतिशत के करीब पढ़े-लिखे हैं। देशभर में 28 करोड़ टन पैदावार प्रति वर्ष होती है। सकल घरेलू उत्पाद में कृषि की हिस्सेदारी 16 प्रतिशत है।

क्या कर रहे हैं 4-5 लाख किसान प्रतिवर्ष कृषि छोड़ जॉब कर रहे हैं

90 प्रतिशत लघु किसान हैं, जिनके पास 2 हेक्टेयर तक भूमि है। 45 प्रतिशत सिंचित और 55 प्रतिशत गैर सिंचित भूमि है।

55 प्रतिशत जमीन मानसून पर निर्भर है। देश के किसान 11 करोड़ टन धान, 9.8 करोड़ टन गेहूँ, 2.4 करोड़ टन दालें, 4.8 करोड़ टन ज्वार, बाजरा और मक्का के अलावा अन्य खाद्यान्न उगा रहे हैं।

कितनी कमाई रु. 6400 है मासिक औसत आय प्रति किसान

3080 रु. प्रतिमाह कमा पा रहा है किसान कृषि से। 3320 रु. प्रतिमाह आय इन्हें पशु पालन जैसे गैर कृषि कार्यों से होती है। इस तरह औसत 6400 रु. होते हैं।

12 प्रतिशत प्रति वर्ष ग्रोथ रेट चाहिए 6 साल में किसानों की आय दोगुनी करने के लिए। क्योंकि सरकार ने फरवरी 2016 में कहा था कि 2022 तक आय दोगुनी हो जाएगी।

कितना कर्ज रु. 50 हजार प्रति किसान है देश में औसतन कर्ज

3.25 लाख किसानों ने आत्महत्या की है 25 सालों में। नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो के अनुसार।

वर्ष 2016-17 की रिपोर्ट के अनुसार देश में एग्रीकल्चर इंडस्ट्री पर कुल 12.6 लाख करोड़ रुपए का कर्ज था। एक गैर सरकारी आँकड़े के मुताबिक देश में रोज करीब 35 किसान खुदकुशी कर रहे हैं।

90 प्रतिशत किसान छोटे हैं, 50 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर है इसलिए बदहाल हैं किसान

गन्ना-22 हजार करोड़ रु. गन्ना किसानों का बकाया है। किसानों ने ऋण लेकर लगाया था।

दलहन-एमएसपी 5400 से 5500 रु. है लेकिन किसान 4200 से 4400 में बेच रहा है।

चावल-पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि क्षेत्रों में बासमती चावल की फसल ली जाती है। सरकार मोटा दाना ही लेती है।

कपास-चीन में निर्यात होता है जिससे कपास की खेती करने वाले किसान का गुजारा होता था। अब चीन के अलावा देश में कपास की माँग कम हो गई है। कपास किसान भी किसान भी परेशान है।

और हम उन्हें क्या देते हैं

2008 में केन्द्र सरकार ने 72 हजार करोड़ रुपए के कर्ज माफ किए थे। लेकिन बाद में सीएजी ने कहा इसमें गड़बड़िया हुई है।

2017 में उत्तरप्रदेश में किसानों के दस-बीस रुपए के कर्ज माफी की बात सामने आई।

कर्नाटक में हाल ही के चुनाव से पहले जेडीएस ने वादा किया था कि सरकार में आते ही पहले दिन किसानों के 53 हजार करोड़ रु. के कर्ज माफ कर देंगे। पर ऐसा नहीं हुआ।

22 हजार करोड़ रु. फसल बीमा योजना के लिए बीमा कम्पनियों को दिए हैं, पर किसानों को मुआवजा 13 हजार करोड़ ही दिया गया है।

राष्ट्रीय किसान महासंघ

केन्द्र ने किसानों से किया धोखा

नई दिल्ली। देश के 110 किसान संघों के संगठन राष्ट्रीय किसान महासंघ ने एक से दस मई तक देशव्यापी गाँव बन्द करा आह्वान् किया है।

राष्ट्रीय किसान महासंघ के कोर कमेटी के सदस्य और जाने माने किसान नेता

शिवकुमार कक्काजी ने कहा कि गाँव बन्द के दौरान किसान अपना दूध, अनाज, फल सब्जी शहर नहीं भेजेंगे। राष्ट्रीय किसान महासंघ के मार्गदर्शक और पूर्व भाजपा नेता यशवन्त सिन्हा ने कहा कि मोदी सरकार ने किसानों के साथ धोखा किया है। सरकार बनने से पहले जो वादे किए थे उनमें से पचास फीसदी वादे भी पूरे नहीं हुए हैं।

10 जून को भारत बन्द का आह्वान्

5 जून को धिक्कार दिवस के रुप में किसान मनाएँगे। 6 जून को मंदसौर में मारे गए किसानों के लिए श्रद्धान्जलि दिवस मनाएँगे। 8 जून को असहयोग दिवस और 10 जून को भारत बन्द का आह्वान किया गया है।

गन्ना किसान और राजनीति

एस.एस. आचार्य कृषि अर्थशास्त्री

केन्द्र सरकार ने उत्तर प्रदेश की कैराना लोकसभा सीट हारने के बाद गैर-सरकारी चीनी मिलों को 7000 करोड़ का बेलआउट पैकेज दिया है। ऐसा कहा जा रहा है कि गैर-सरकारी क्षेत्र की चीनी मिलों को जबर्दस्त घाटा झेलना पड़ रहा है। वर्ष 2017-18 सीजन के दौरान चीनी का बंपर उत्पादन 360 लाख टन हुआ और इसके दाम साल भर नीचे ही रहे। इससे चीनी मिलों पर दबाव पड़ने लगा और उन्होंने विशेष तौर पर उत्तर प्रदेश के गन्ना किसानों का पैसा रोकना शुरू कर दिया।

उत्तर प्रदेश में गन्ना किसानों की बकाया देनदारी (एरियर) बढ़ती हुई 12 हजार करोड़ रुपए के पार चली गई। महाराष्ट्र और कर्नाटक में यह बकाया देनदारी तीन-तीन हजार करोड़ रुपए तक ही है। यह भी कहा जा रहा है कि उत्तर प्रदेश में गन्ना किसानों को इस बकाया देनदारी में बड़ी हिस्सेदारी कैराना के गन्ना किसानों की थी। राजनीतिक विश्लेषक मानते हैं कि भारतीय जनता पार्टी के कैराना लोकसभा सीट गंवाने के पीछे गन्ना किसानों की नाराजगी एक प्रमुख कारण थी।

बहरहाल, राजनीतिक हार-जीत का गणित जो भी हो, लेकिन गन्ना किसानों के चीनी मिलों पर बकाया (एरियर) का एक राजनीतिक अर्थशास्त्र जरूर है। इसे समझने के लिए जरूरी है कि हम गन्ने की फसल की प्रकृति को समझें। गन्ना आम

अनाज और दलहन से अलग तीन साल की फसल है। पहली बार इसकी बुआई के बाद इसका क्षेत्र कम नहीं होता। इसका कारण यह है कि गन्ने की एक ही फसल लगातार तीन साल तक चलती है। इस फलस के चार इस्तेमाल होते हैं। इसका बीज नहीं होता, इसलिए इसका पहला इस्तेमाल बुआई के लिए होता है। दूसरा इस्तेमाल ताजा रस निकालने के तौर पर। तीसरा इस्तेमाल गुड़ तैयार करने में और चौथा चीनी उत्पादन के लिए।

चीनी उत्पादन में करीब नब्बे फीसदी गन्ना इस्तेमाल होता है। चूँकि कटाई के दो या तीन दिन में यह सूखने लगता है और रस की मात्रा घटने लगती है, इसलिए खरीददार निकटवर्ती चीनी मिलें ही होती हैं। ढुलाई करके इसे दूर की चीनी मिल तक ले जाना जोखिमपूर्ण होता है क्योंकि गन्ने की कीमत उसमें रस की मात्रा के आधार पर मिलती है। इन हालात में किसान के पास इसकी बिक्री का अन्य विकल्प नहीं होता।

खरीदार एक ही चीनी मिल हो तो किसानो के शोषण की आशंका बहुत अधिक रहती है। चीनी मिले किसानों का शोषण न करें, इसके लिए सरकारी दखल जरूरी हो जाता है। सरकार की कोशिश होती है कि किसानों को उनके गन्ने का उचित मूल्य मिले। इसके लिए वह फेअर एंड रिम्युनरिटव प्राइस (एफआरपी) घोषित करती है। इस तय एफआरपी पर ही मिलें किसानों से उनका गन्ना खरीदती हैं। इसके साथ सरकारी चीनी मिलों की माली हालत का भी ध्यान रखती है ताकि वे किसानों को गन्ने का उचित मूल्य दे सकें।

देश में चीनी मिलें तीन तरह की हैं। एक सरकारी चीनी मिलें हैं, जिनकी संख्या बेहद कम है। दूसरी सहकारी चीनी मिलें हैं, जो अधिकतर महाराष्ट्र, गुजरात और उत्तर कर्नाटक में है। उत्तर प्रदेश और बिहार में अधिकतर गैर-सरकारी चीनी मिलें ही है। हम यदि सहकारी और गैर-सरकारी चीनी मिलों की बात करें तो सहकारी चीनी मिलें आमतौर पर बेहतर काम करती हैं। वे समय पर गन्ना किसानों को उनकी उपज की कीमत देती है और उत्पादन के बाद लाभ का एक अंश सदस्यों को, जो किसान ही होते हैं, उपलब्ध कराती है। लेकिन, सबसे अधिक समस्या गैर-सरकारी चीनी मिलों के साथ है। ये मिलें किसानों से एफआरपी पर एक समय तक जो गन्ना खरीदती है। लेकिन जब लाभ में हिस्सेदारी की बात आती है तो बाजार में चीनी के

दाम कम होने, उत्पादन अधिक होने जैसी कारण गिनाकर खातों में घाटा दिखाती हैं। उनकी कोशिश सरकार से अधिकाधिक प्रोत्साहन राशि हासिल करने की होती है।

घाटे की भरपाई होने पर ही वे किसानों को बकाया राशि चुकाने की बात करते हैं। गन्ने और चीनी का परस्पर अर्थचक्र घूमता रहे, इसके लिए सरकार मिलों को धन मुहैया कराती है। कभी चीनी का बफर स्टॉक रखने के लिए तो कभी चीनी उत्पादन के दौरान तैयार हुए सह उत्पादों के इस्तेमाल को प्रोत्साहित करने के लिए

कुछ राज्य सरकारें भी मिलों के उत्पादन पर लाभ के मद्देनजर गन्ने की कीमत की घोषणा करती हैं जिसे स्टेट एडवाइजरी प्राइस (एसएपी) कहते हैं। घाटा दिखाने वाली चीनी मिलों को इस दर पर गन्ने की कीमत देने में परेशानी होती है। ऐसे में ये मिले किसानों का पैसा बकाया रखने लगती है। यह बकाया देनदारी जब धीरे-धीरे बढ़ने लगती है, तब सरकार पर भी दबाव बढ़ने लगता है।

एक ओर किसान जल्द से जल्द मिलों से बकाया रकम लेना चाहते है तो दूसरी ओर मिल मालिक जल्द से जल्द घाटे पूर्ति। घाटे की भरपाई होने पर ही वे किसानों को बकाया राशि चुकाने की बात करते हैं। गन्ने और चीनी का परस्पर अर्थचक्र घूमता रहे, इसके लिए सरकार मिलों को धन मुहैया कराती है। कभी चीनी का बफर स्टॉक रखने के लिए तो कभी चीनी उत्पादन के दौरान तैयार हुए सह उत्पादों के इस्तेमाल को प्रोत्साहित करने के लिए। सरकार ने हाल में चीनी मिलों को बेलआउट पैकेज दिया है। चीनी मिलें इस राशि में से किसानों की कितनी बकाया देनदारी चुकाएगी और सत्तारुढ़ भाजपा इस फैसले को चुनावों के दौर में अपने पक्ष में कितना भुना पाएगा, यह देखना होगा

9 राज्यों के 349 किसान परिवारों पर किया अध्ययन

खेती का 80% काम कर रहीं महिलाएँ घर परिवार में बोलने का हक नहीं

उदयपुर। महिला सशक्तीकरण की कई सरकारी योजनाओं के बावजूद जिले में महिलाओं की हालत दयनीय है। कई महिलाएँ परिवार में भी खुलकर नहीं बोल

पाती तो कई घरों में परम्परा के नाम पर दबाया जाता है। जबकि इन क्षेत्रों में खेती का 80 प्र. काम महिलाएँ ही करती हैं। ये खेती का काम कर फिर घर और बच्चों को भी संभालती हैं। ग्रामीण भारत की यह हैरानीजनक तस्वीरें आईसीएआर को अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना के तहत मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग से कृषक परिवारों के गुणवत्तापूर्ण जीवन के लिए किए गए शोध में सामने आई हैं। यह अध्ययन तीन विषयों पर 9 राज्यों के 9 केन्द्रों में 349 किसान परिवारों पर किया गया। शोध में प्रत्येक केन्द्र से 35-55 परिवार को शामिल किया गया। अध्ययन में उदयपुर में किसान महिलाओं का सर्वाधिक शोषण होने की की बात कही गई है।

इन केन्द्रों पर हुआ

असम के जोरहाट, हैदराबाद, हरियाणा के हिसार, हिमाचल प्रदेश के पालमपुर, उत्तराखंड के पंतनगर, उदयपुर, महाराष्ट्र के परभानी, पंजाब के लुधियाना, कर्नाटक के धारवाड़।

1500 फीसदी तक महंगी बिक रही हैं दवाएँ, कंपनी एक, दाम अलग-अलग

डायबिटीज की 7 रुपए की दवा भी 97 रुपए में, कैल्शियम की 7 रुपए की दवा 120 रुपए में

नई दिल्ली। देश में दवाएँ 1500 फीसदी तक ज्यादा दामों में बेची जा रही हैं। यह खुलासा देश की सबसे बड़ी निजी दवा निर्माता कंपनी की रिपोर्ट में हुआ है। रिपोर्ट के मुताबिक, यूरिन संबंधी बीमारी की 9 रुपए की दवा सिडनेफिल 149 रु. में, हड्डियों को मजबूत करने वाली 7 रु. की दवा कैल्शियम कार्बोनेट 120 रुपए में, डायबिटीज की सात रुपए की दवा ग्लिमप्राइड 97 रु. में, हृदय रोग में इस्तेमाल होने वाली 11 रुपए की एटोरवस्टेटिन दवा 131 रु. में बेची जा रही है। दवाओं की यह सूची लंबी है। यही नहीं भास्कर ने जब इस दवा निर्माता कंपनी से बातचीत की तो पता चला कि उन्हीं की दवा अलग-अलग दवा कंपनियाँ अलग-अलग कीमतों पर

बेचती हैं।

रिपोर्ट तैयार करने वाली निंजी कंपनी देश में कुल खपत की 16 फीसदी दवा बनाता है। दवा इस कंपनी की होती है, मगर जब ये बाजार में कंपनी का नाम और रैपर बदलकर आती है, तो कीमत कई गुना तक बढ़ जाती है। ये दवाएँ ऐसी हैं, जिनके मूल्यों पर सरकारी नियंत्रण नहीं है। यानी बाजार में बेचने वाली दवा कंपनियाँ दाम खुद तय करती हैं। देश में सिर्फ 850 तरह की दवाइयाँ ऐसी हैं, जिन्हें सरकार ने जरूरी दवा की श्रेणी में रखा है और इन्हीं दवाइयों की कीमतों पर सरकारी नियंत्रण होता है।

1500 फीसदी तक....

दवा निर्माता कंपनी ने बताया कि 12 फीसदी जीएसटी और 10 फीसदी लाभ के बाद जिस दवा की कीमत नौ रुपए होती है। उसी दवा को बाजार में दवा की मार्केटिंग करने वाली कंपनियाँ 150 रुपए तक में बेचती हैं। रसायन और उर्वरक मंत्रालय के अधीन कार्यरत औषधि विभाग के एक वरिष्ठ अधिकारी ने बताया कि जरूरी दवाओं की कीमतों पर से सरकार ने नियंत्रण कर रखा है, लेकिन अब दूसरी जरूरी दवाओं की कीमतों की अधिकतम कीमत तय करने पर काम किया जा रहा है। इसके लिए एक प्रपोजल तैयार किया गया है जिस पर रसायन मंत्रालय, स्वास्थ्य मंत्रालय और नीति आयोग मिलकर काम कर रहे हैं। देश में ढ़ाई लाख करोड़ रुपए का दवा कारोबार और दवाईयों की बिक्री के सामने में भारत विश्व में तीसरे स्थान पर है। ड्रग्स एंड कॉस्मेटिक एक्ट के अनुसार दवा की गुणवत्ता खराब होने, बिना लाइसेंस दवा बनाने अथवा नकली दवा होने पर दवा बेचने वाली कंपनी के ऊपर किसी तरह की जिम्मेदारी नहीं होती। जो कंपनी दवा बनाती है उसी कंपनी के ऊपर दवा की पूरी जिम्मेदारी होती है। ड्रग्स एंड कॉस्मेटिक्स एक्ट के अनुसार जो भी सजा और जुर्माना होगा वह दवा निर्माता कंपनी पर होगा। हालांकि अब ड्रग्स एंड कॉस्मेटिक एक्ट में बदलाव लाकर दवा निर्माता और दवा की मार्केटिंग करने वाली कंपनी को भी जिम्मेदार बनाने की तैयारी की गई है। फाइल स्वास्थ्य मंत्रालय के पास है। निर्माता कंपनी खुद करती है दूसरी कम्पनियों की पैकेजिंग : दवा निर्माता कंपनी से मिले दस्तावेजोंसे पता चला कि जो कंपनी दवा बनाती है वही कंपनी, दवा की मार्केटिंग

करने वाली कम्पनीका नाम और कीमत दवा के पैकेट पर लिखती है। यहाँ तक कि मार्केटिंग करने वालाी कम्पनी की बताई गई जगह पर पहुँचाती भी है, सिर्फ कम्पनियों के नाम बदलने से दवाओं की कीमत कई गुना बढ़ जाती है।

इस साल उपज फेंकी गई अब खेती पर फोकस रहेगा

किसान की आय दोगुनी करना ही संकट का समाधान

जब 2017 का साल खत्म हो रहा है तो ही हताशाजनक खबरों में भारतीय कृषि की हालत का पता चलता है। उत्तर प्रदेश के आगरा व कन्नौज शहरों में कोल्ड स्टोरेज वाले सड़कों पर आलू फेंक रहे थे। आलू की 50 किलो की बोरी की लागत 100 रुपए होती है, जबकि कोल्ड स्टोरेज में प्रति बोरी 115 रुपए लगते हैं। इस तरह किसान को 15 रुपए घाटा तो बेचने के पहले ही हो जाता है। नतीजा यह हुआ कि किसान कोल्ड स्टोरेज से आलू ही नहीं उठा रहे थे। उधर, आन्ध्र के कुरनूल जिले के पट्टीकोंडा और आलू के बाजारों में टमाटर 50 पैसा प्रति किलो रह गया। बम्फर फसल के बाद भी किसान की आँखों में आँसू उमड़ आए हैं। चार एकड़ में टमाटर उगाने में 1.40 लाख रुपए लगते हैं। फिर किराये के ट्रेक्टरों में नजदीकी बाजार में भेजे जाते हैं। लेकिन, जब पता चला की 10 किलो का भाव 5 रुपए हैं तो गुस्से और हताशा में टमाटर सड़कों पर फेंकने के अलावा उनके पास कोई चारा नहीं था। किराया देकर उपज वापस लाने का कोई औचित्य नहीं था।

2017 में सारी कृषि उपज की कीमतों का यही हाल था। कृषि क्षेत्र पर नोटबंदी का खासतौर पर असल पड़ा, जिससे यह अब तक नहीं उबर सकता है। मुझे तो याद नहीं आता कि हाल के वर्षों में कृषि जिंसों की कीमत इतनी गिरा हों। दो साल लगातार सूखे के बाद 2016 के खरीफ में सामान्य या लगभग सामान्य मानसून देखा गया पर इससे कृषि क्षेत्र में उत्साह नहीं लौटा। 2017 का यह साल हाल के इतिहास में सबसे ज्यादा हताशाजनक रहा। उड़द की दाल का समर्थन मूल्य था 5,400 प्रति क्विंटल पर किसान को हर क्विंटल पर हजार से 1,800 रुपए का नुकसान हुआ। सोयाबिन का समर्थन मूल्य था 3,050 प्रति क्विंटल पर बिकी 2,660 से 2,800 रुपए प्रति क्विंटल।

गुजरात में मूँगफली का भाव 2,675 से 2,750 रुपए प्रति क्विंटल के बीच रहा, जबकि समर्थन मूल्य था 4,450 रुपए प्रति। 5,575 प्रति क्विंटल समर्थन मूल्य की मूँग पर औसतन प्रति क्विंटल 1,600 रुपए घाटा हुआ। कपास, गेहूँ, धान, बाजरा, सनफ्लावर, सरसो, प्याज और अन्य दालों व फलियों की हालत कोई बेहतर नहीं थी। किसानों में गुस्सा रहा और विरोध प्रदर्शन व रैलियां देखी गई। कुछ शहरों में तो खाद्यान्न व सब्जियों की सप्लाई तक रोकी गई। महाराष्ट्र में शुरू हुआ यह आन्दोलन मध्यप्रदेश में पाँच किसानों की मौत का कारण बना। इसकी परिणति नई दिल्ली में किसान मुक्ति आन्दोलन के तहत विशाल प्रदर्शन से हुई। कई और किसान संघों ने नए साल में जनवरी और फरवरी में विरोध प्रदर्शन का आह्वान किया।

स्पष्ट है कि किसान का गुस्सा फट पड़ा है। महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, कर्नाटक, तेलंगाना और आन्ध्र में बीटी कॉटन की नाकामी ने किसान की हताशा और बढ़ा दी है। पहले दावा किया गया था कि बीटी कॉटन यानी आनवांशिक रूप से सुधारी गई कपास की किस्म पर पिंक बॉल वर्म नामक कीट का कोई असर नहीं होगा पर हुआ उलटा। वही पिंक बॉल वर्म 70 फीसदी फसल खा गया। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के कमजोर अमल से कर्ज माफी की माँग और बढ़ी है। पहले ही पंजाब, महाराष्ट्र, तेलंगाना, उत्तर प्रदेश और कर्नाटक 1.07 लाख करोड़ माफ कर चुके हैं। यह माँग भविष्य में और बढ़ेगी।

क्या 2018 का साल इससे बेहतर होगा? हाल के चुनाव में ग्रामीण गुजरात ने सत्तारूढ़ भाजपा को जो सबक सिखाया है, उसे देखते हुए लगता है कि आगामी बजट में फोकस फिर कृषि पर होगा, हालांकि मुझे संदेह है। किसान कर्ज की सीमा एक लाख करोड़ रुपए और बढ़ाने अथवा कुछ और योजनाएँ लाने से कोई फर्क पड़ने की संभावना नहीं है। कृषि को तो किसान के हाथों में अधिक आमदनी पहुँचाने का पक्का रास्ता चाहिए। सच तो यह है कि कॉपोरेट एग्रीकल्चरल के लिए पूर्व शर्त ही यह है कि न्यूनतम समर्थन मूल्य या खरीद के मूल्य की व्यवस्था को खत्म कर दिया जाए। फल-सब्जियाँ इससे बाहर कर दी गई हैं और हालात जैसे हैं उनमें गेहूँ-चावल भी इससे बाहर किए जा सकते हैं। बाजार व्यवस्था इतनी कुशल होती तो कोई कारण नहीं कि 94 फीसदी भारतीय किसान को खरीद मूल्य व्यवस्था का

फायदा नहीं मिले। शांता कुमार कमेटी ने बताया था कि केवल 6 फीसदी किसान ही इसका फायदा ले पाते हैं। शेष बाजार पर निर्भर होते हैं, जिससे क्या नतीजा निकलता है, यह हम इस लेख की शुरूआत में देख चुके हैं। ऐसी स्थिति में किसान के हाथों में अधिक आमदनी आए, इसके उपाय करना ही उचित समाधान है।

वैसे भी प्रधानमंत्री ने 2014 के आम चुनाव के पहले यही तो वादा किया था। आधी राह में आकर लक्ष्य बदलकर अगले पाँच साल में विकास की आय दोगुनी करने के वादे से किसानों में उत्साह नहीं लौटेगा। आइए, देखें और इंतजार करें।

सुप्रीम कोर्ट में दायर याचिका में खुलासा...

25 सांसदों, 257 विधायकों की संपत्ति पाँच साल में 5 गुना बढ़ी

बांसगाँव के भाजपा सांसद की संपत्ति में 5,649 प्र. का इजाफा

नई दिल्ली। बीते पाँच साल में दूसरी बार चुने गए 25 सांसदों और 257 विधायकों की संपत्ति पाँच गुना बढ़ गई थी। सुप्रीम कोर्ट में दायर एक याचिका में यह खुलासा उस वक्त हुआ है, जब हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने चुनाव लड़ रहे उम्मीदवारों को अपनी और अपने आश्रितों की संपत्ति के स्रोत का भी खुलासा करने को कहा था।

शीर्ष कोर्ट में दायर याचिका के मुताबिक, बांसगांव के भाजपा सांसद कमलेश पासवान की संपत्ति में 5,649 फीसदी का इजाफा हो गया। उनकी संपत्ति, 17,68,000 से बढ़कर 10,16,40,625 रुपए हो गई। केरल के मुस्लिम लीग सांसद ईटी मोहम्मद बशीर की संपत्ति 2000 गुना बढ़ गई है।

कितने सांसद-विधायकों की कितनी संपत्ति बढ़ी

5 वर्ष में दूसरी बार चुने गए सांसद और विधायक

	100 प्र. वृद्धि	500 प्र. वृद्धि
महाराष्ट्र	84	23
उत्तरप्रदेश	79	24
गुजरात	61	21

मध्यप्रदेश	53	13
राजस्थान	48	05

सोनिया की संपत्ति 573 प्र. बढ़ी

कांग्रेस की पूर्व अध्यक्ष सोनिया गाँधी की संपत्ति में 573 फीसदी का इजाफा हुआ। उनकी संपत्ति 1,37,94,768 से बढ़कर 9,28,95,288 रुपए हो गई। केरल के मावेलीकारा से सांसद कोडिकुन्नील सुरेश की संपत्ति 702 फीसदी बढ़ गई, जो 16,62,747 से बढ़कर 1,32,51,330 रुपए हो गई।

इनकी संपत्ति में बेहिसाब बढ़ोतरी

विधायकों में सबसे ज्यादा कर्नाटक के चेंगानूर से कांग्रेस विधायक विष्णुनाथ की संपत्ति बढ़ी है। उनकी संपत्ति 5,632 रुपए से बढ़कर 25,02,000 हो गई। यह 44,325 फीसदी है। ओडिशा के शेरगढ़ से भाजपा विधायक बाबूसिंह की संपत्ति में 39,367 फीसदी बढ़ी। यह 5,000 से बढ़ 3,74,94,007 रुपए हो गई।

वरुण और सदानंद गौड़ा के भी नाम

यूपी के सुल्तानपुर से भाजपा सांसद वरुण गांधी का भी नाम है, जिसमें कहा गया है कि उनकी संपत्ति में 625 फीसदी का इजाफा हो गया। वही, कर्नाटक के पूर्व सीएम सदानंद गौड़ा की संपत्ति में भी 588 फीसदी का इजाफा देखा गया।

विधायकों के वेतन-भत्ते 6 बार बढ़े, पार्षदों को वेतन तो मिलता ही नहीं, जो भत्ता मिलता है उसमें भी सिर्फ दो बार हुई बढ़ोतरी

14 साल में विधायक सवा लाख तक पहुँचे, पार्षदों का भत्ता 2300 ही बढ़ा

शहर की सरकार के जनप्रतिनिधियों की हालत खस्ता है। उनको वेतन के नाम पर कुछ नहीं मिलता। जो कुछ मिलता है वह केवल भत्ते होते हैं। यह भत्ता भी इतना कम की न्यूनतम मजदूरी पाने वालों से भी बहुत कम होता है। यही कारण है कि वे पार्षद बनने के बाद सुख-सुविधाएँ जुटाने के लिए निगम में समिति अध्यक्ष बनना चाहते हैं। निगम के 2004, 2009 और 2014 में बने बोर्डो में देखा जाए तो

पार्षदों के भत्तों में कोई खास बढ़ोतरी नहीं हुई है। पिछले 18 सालों में उनके भत्तों में 2 बार बढ़ोतरी हुई है। इससे उनके भत्ते 1450 रुपए से बढ़कर अब 3750 रुपए तकपहुँच गए। यानी केवल 2300 रुपए बढ़े हैं। अगर फीसदी में देखा जाए तो यह 158 फीसदी की बढ़ोतरी है। वर्तमान में पार्षदों को टेलीफोन के 1500 रुपए, वाहन के 1500 और स्टेशनरी भत्ते के रूप में 750 रुपए मिल रहे हैं।

इन्हीं 18 सालों में अगर विधायकों के वेतन और भत्तों की बढ़ोतरी देखी जाए तो आँकड़े चौंकाने वाले हैं। इन सालों में विधायकों के वेतन-भत्ते 6 बार बढ़े और इसमें 733 फीसदी की बढ़ोतरी हुई है। विधायकों के वेतन भत्ते 2004 में केवल 15000 रुपए थे जो अब बढ़कर 125000 रुपए तक पहुँच गए हैं।

विधायकों के जब चाहे वेतन भत्तों को बढ़ने से पार्षदों के मन में पीड़ा है। पूरे क्षेत्र में लगातार सक्रिय रहकर लोगों की समस्याओं को दूर करने का दावा करने वाले पार्षद कहते हैं कि सरकार भत्तों के नाम पर केवल 3750 रुपए देती है। इतनी सी रकम में क्या होता है। वेतन तो मिलता ही नहीं है। विधायक जब चाहे अपना वेतन बढ़ा लेते हैं। लेकिन शहर की सरकार के इन जनप्रतिनिधियों को सम्मानजनक वेतन-भत्ते देने के लिए सरकार के पास बजट नहीं है। आखिर हम लोगों के साथ यह भेदभाव कब दूर होगा।

जानिए...कैसे बढ़ता चला गया वेतन-भत्तों का अंतर

विधायकों के वेतन-भत्ते 15 हजार से सवा लाख तक पहुँचे

वर्ष	वेतन	क्षेत्र भत्ता	मकान किराया	सहायक भत्ता	कुल
2004	3000	8000	4000	0	15000
2006	5000	20000	4000	0	29000
2009	10000	30000	4000	0	44000
2010	10000	30000	4000	20000	64000
2012	15000	40000	7500	20000	82500
2015	15000	50000	7500	20000	92500
2017	25000	50000	20000	30000	125000

(2004 से 2018 तक 733 फीसदी की बढ़ोतरी हुई है।)

पार्षद अब तक 3750 रु. तक ही पहुँचे

वर्ष	**भत्ता**
2004	1450
2009	2150
2015	3750

(2004 से 2018 तक 158 फीसदी की बढ़ोतरी हुई है।)

पार्षदों को डिप्टी कमिश्नर, महापौर को कमिश्नर से एक रु. ज्यादा वेतन मिले : मेयर महपौर अशोक लाहोटी से सवाल जवाब

आपको लगता है कि पार्षदों को मिलने वाले भत्ते बहुत कम हैं। इनको बढ़ाए जाने की जरूरत हैं?

हाँ, यह बिल्कुल सही है कि पार्षदों को जो भत्ते मिलते हैं। वह बहुत कम है। वेतन तो मिलता ही नहीं है। यह बहुत बड़ी विसंगति है।

इस विसंगति को कैसे दूर किया जा सकता है?

हम चाहते हैं कि पार्षदों को डिप्टी कमिश्नर और महापौर को कमिनश्नर के वेतन से एक रुपया अधिक मिले। अगर इतना नहीं दिया जा सकता है तो सम्मान स्वरूप केवल 1 रुपए वेतन दे। यह सम्मान भी काफी है। इसको लेकर प्रयास किया जाएगा। सांसद-विधायक जब चाहे अपना वेतन-भत्ता बढ़वा लेते हैं। पार्षद भी उन्हीं की तरह एक जनप्रतिनिधि है। लेकिन हमें वेतन तो दिया ही नहीं जाता। जो 3750 रुपए दिए जाते हैं वे भी केवल भत्ते होते हैं। हम भी सम्मानजनक वेतन के हकदार हैं। सरकार को इस बारे में विचार कर हमारा वेतन-भत्ता कम से कम 25 हजार रुपए महीना करना चाहिए।

- मंजू शर्मा, पार्षद कांग्रेस

यह सभी पार्षदों की पीड़ा है कि उनको सम्मानजनक भत्ते नहीं मिलते। हम सुबह से देर रात तक जनता की सेवा में लगे रहते हैं। इस कारण सम्मानजनक वेतन-भत्ते तो मिलने ही चाहिए। समय समय पर इस बात को बैठकों में उठाते रहे हैं। आगे भी बोर्ड की मीटिंग में पार्षदों को वेतन दिलाने और भत्ता बढ़ाने की मुद्दा उठाएंगे।

- अशोक गर्ग, पार्षद, भाजपा

जयपुर के किसी भी इलाके की जानकारी और वहाँ की समस्या के बारे में एक पार्षद अच्छी तरह से जानता है। किसी इलाके में क्या मूलभूत सुविधाओं की जरूरत है। इसके लिए लोग सबसे पहले पार्षद को पकड़ते हैं। पार्षद भी सुविधाएँ उपलब्ध कराने का प्रयास करता रहता है। इसलिए हम चाहते हैं कि 15 से 25 हजार तक वेतन-भत्ते मिलने चाहिए।

- प्रकाशचन्द गुप्ता, पार्षद भाजपा

समिति अध्यक्ष बन लेना चाहते हैं सुविधाएँ

जयपुर नगर निगम में इस बार 21 की बजाय 24 समितियाँ होगी। जो तीन समितियाँ बढ़ रही है, उनमें लाइट की दो अतिरिक्त समितियाँ बनाई जाएगी। साथ ही महिला उत्थान की एक नई समिति का गठन होगा। पार्षद को भत्ते बहुत कम मिलते हैं। इसलिए भाजपा के पार्षद इन समितियों के अध्यक्ष बनना चाहते हैं। ताकि निगम में कमरा, गाड़ी सहित अन्य कई प्रकार की सुविधाओं को लाभ उठाया जा सके। इसलिए विधायक अभी अपने चहेतों के लिए लॉबिंग में लगे रहते हैं। इस खींचतान का ही नतीजा है कि एक साल बाद भी निगम समितियाँ गठित नहीं हो पाई है।

भ्रष्टाचार को लेकर गरमाया था मुद्दा

पिछले दिनों पार्षदों और अधिकारियों के बीच भ्रष्टाचार को लेकर आरोप-प्रत्यारोप हुए। पार्षदों ने बोर्ड बैठक में जब अधिकारियों पर भ्रष्टाचार के आरोप लगाए। तो अधिकारी भी पीछे नहीं रहे। उन्होंने निगम में धरना देकर आरोप लगा दिया कि पार्षदों के घर हर महीने लिफाफा पहुँचाया जाता है। बाद में इस मुद्दे को लेकर पार्टी दफ्तर में शहर भाजपा और पार्षदों की बैठक भी हुई थीं। हालांकि, भ्रष्टाचार के इन आरोपों में कितनी सच्चाई है यह तो जाँच का विषय है, लेकिन पार्षदों को मिलने वाले भत्ते इतने कम है कि अधिकारियों को आरोप लगाने का मौका मिल जाता है।

अन्धेरा नाशक प्रकाश सम दुर्गुण नाशक सुगुण (सुगुणी)

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : क्या मिलिए...आत्मशक्ति...)

अन्धेरा से प्रकाश न होता हीन/(क्षीण), दुर्गुण से सुगुण न होता हीन/(क्षीण)।

जहर से अमृत न होता हीन, दुर्गणी से सुगुणी न होते हीन।। (1)

अन्धेरा से प्रकाश होता मूल्यवान्, दुर्गुण से सुगुण होता मूल्यवान्।
जहर से अमृत होता गुणवान्, दुर्गुणी से सुगुणी हो वन्दनीय।। (2)

अन्धेरा से प्रकाश न होता भयभीत, दुर्गुणी से सुगुणी न होते भयभीत/(प्रभावित)।
जहर को नाशकर देता अमृत, दुर्गुणी से प्रभावशाली सुगुणीजन।। (3)

घोर अन्धेरा नाशक होता प्रकाश, घोर दुर्गुण नाशक सुगुण श्रेष्ठ।
जहर न सर्व प्रिय सर्व प्रिय अमृत, दुर्गुणी न पूजनीय सुगुणी पूज्य।। (4)

दुष्ट कमठ से न पारस दुष्ट, तथाहि सुकरात से ईसा मसीह।
कमठ न पूजनीय पूजनीय पारस, 'सत्यमेव जयते' न होता असत्य।। (5)

सुगुण व सुगुणी में होता है सत्य, दुर्गुण व दुर्गुणी में होता असत्य।
सत्य में अनन्त शक्ति, शक्ति हीन असत्य, गुण-गुणी में शक्ति, शक्ति हीन दुर्गुण/(दुर्जन)।। (6)

मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्राणि संसारमार्ग, इसके नाशक सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र।
अनादि संसार नाशक मोक्षमार्ग, मोक्षनाशक न सम्भव संसार मार्ग।। (7)

दुर्गुणी होते भयभीत व परास्त, सुगुणी न भयाक्रान्त न होते परास्त।
घोर विस्तृत अन्धेरा नाशक प्रकाश, 'कनक' का लक्ष्य स्व-पर प्रकाश।। (8)

दुर्गुण व दुर्गुणी से मुझे मिले शिक्षा, दुर्गुण त्याग व सुगुण वृद्धि की शिक्षा।
राग-द्वेष-मोह-ईर्ष्या-घृणा तृष्णा, इनसे परे समता-शान्ति की शिक्षा।। (9)

'अंहकार'-'ममकार' से प्रायः ग्रसीत लोग, इसी हेतु करते वे पाप भी अनेक।
क्षुद्र सोचते क्षुद्र ही काम करते, इनसे परे मेरे भाव-व्यवहार होते।। (10)

आत्मदर्शन परे प्रदर्शन करते अन्य ख्याति-पूजा-लाभ-वर्चस्व के भाव/(काम) रखते।
इससे (प्रदर्शन से) परे मेरा लक्ष्य आत्मदर्शन, इस हेतु ही मेरे सभी धार्मिक काम।। (11)

स्व प्रकाशी बनूँ स्वतः होगा पर प्रकाश, बुझा हुआ दीपक न करे स्व-पर प्रकाश।
बुझा हुआ दीपक सम बनते प्रायशः लोग, इनसे शिक्षा ले करूँ स्व-पर प्रकाश।। (12)

सागवाड़ा दि 26/06/2018 अपराह्न 07:25 व 08:49

(सागवाड़ा में स्वाध्याय में आनेवाले श्रोताओं के कारण यह कविता बनी।)

संदर्भ-

सच्चे उपदेशों की दुर्लभता

जना धनाश्च वाचालाः सुलभाः स्युर्वृथोत्यिताः।
दुर्लभा ह्यन्तरार्द्रास्ते जगदभ्युज्जिहीर्षवः।।(4) आत्मानुशासन

अर्थ-खोटा उपदेश देने वाले और निरर्थक महन्तता से उद्धत मनुष्य तथा व्यर्थ गरजने वाले निरर्थक मेघ सुलभ है; परन्तु अंतरंग में धर्मबुद्धि से भीगे हुए तथा संसार के दुःखों से जीवों का उद्धार करने की इच्छा वाले मनुष्य तथा अंतरंग में जल से भीगे हुए और अन्न उत्पादन करके लोक का उपकार करने में कारणभूत मेघ दुर्लभ हैं।

उपदेशदाता वक्ता का स्वरूप

प्राज्ञः प्राप्तसमस्तशास्त्रहृदयः प्रव्यक्तलोकस्थितिः,
प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः।
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनोहारी परानिन्दया,
ब्रूयाद्धकर्मकथां गुणनिधि प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः।। (5)

अर्थ-धर्मकथा कहने वाले सभानायक गणी में निम्न गुण होना चाहिए-

1. वह बुद्धिमान होना चाहिए क्योंकि बुद्धिहीन में वक्तापना संभव नहीं है।
2. वह समस्त शास्त्रों के रहस्य का जानकार होना चाहिए क्योंकि शास्त्रों के सांगोपांग ज्ञान बिना यथार्थ अर्थ भासित नहीं होता।
3. वह लोक व्यवहार का ज्ञाता होना चाहिए क्योंकि लोक-रीति के ज्ञान बिना वह लोक-विरुद्ध वर्तन होगा।
4. वह आशावान (महत्वाकांक्षी) नहीं होना चाहिए क्योंकि आशावान होने पर वह श्रोताओं का मनोंरजन करना चाहेगा यथार्थ अर्थ का प्ररूपण नहीं करेगा।
5. यह कीर्तिमान और प्रतिभाशाली होना चाहिए क्योंकि शोभायमान न होने पर यह महान् कार्य उसे शोभा नहीं देगा।
6. वह उपशम परिणाम वाला होना चाहिए क्योंकि तीव्र कषायी व्यक्ति सबके लिए अनिष्टकारी और निन्दा का स्थान होगा।

7. वह श्रोताओं के द्वारा प्रश्न करने के पहले ही उत्तर का जानकर होना चाहिए, क्योंकि स्वयं की प्रश्नोत्तर करके समाधान करने से श्रोताओं को उपदेश में दृढ़ता होगी।

8. वह प्रचुर प्रश्नों को सहने की क्षमता वाला होना चाहिए, क्योंकि यदि वह प्रश्न करने पर नाराज होगा तो श्रोता प्रश्न नहीं करेंगे तो उनका संदेह दूर कैसे होगा?

9. वह प्रभुता सहित होना चाहिए, क्योंकि श्रोता उसे अपने से ऊँचा जानेंगे, तभी उसका कहना मानेंगे।

10. वह दूसरों का मन हरने वाला (उन्हें अच्छा लगने वाला) होना चाहिए, क्योंकि जो असुहावना लगे उसकी शिक्षा श्रोता कैसे मानेंगे?

11. वह गुणों का निधान होना चाहिए, क्योंकि गुणों के बिना नायकपना शोभा नहीं देते।

12. वह स्पष्ट और मिष्ट वचन कहने वाला होना चाहिए, क्योंकि स्पष्ट वचन कहे बिना लोग समझेगें नहीं और मिष्ट वचन कहे बिना श्रोताओं को सुनने की रूचि नहीं होगी।

श्रुतमविकलं शुद्धा वृत्तिः परप्रतिबोधने,
परणतिरुरूद्योगो मार्गप्रवर्तनसद्विधौ,
बुधनुतिरनुत्सेको लोकज्ञता मृदुताऽस्पृहा,
यतिपतिगुणा यस्मिन्नन्ये च सोऽस्तु गुरुःसताम्।। (6)

अर्थ-जिसमें निम्न गुण हो वह सत्पुरुषों को उपदेश देने वाला गुरु होता है।

1. संपूर्ण संदेह रहित शास्त्र ज्ञान हो।
2. शुद्ध, निर्दोष और यथायोग्य मन-वचन-काय की प्रवृत्ति हो।
3. दूसरों को संबोधित करने की भावना हो।
4. जिनमार्ग का प्रवर्तन करने की भली (यथार्थ) विधि में भला उद्यम करने वाला हो।
5. ज्ञानीजनों द्वारा जिसे नमन (सम्मानित) किया जाता हो तथा जो विशेष ज्ञानियों को विनय भाव से नमन करता हो।
6. उद्धतपना तथा भयावान न हो।
7. लोकरीति का ज्ञाता हो।

8. कोमलता सहित हो।
9. वाञ्छा रहित हो।
10. यतीश्वर संबंधी अन्य गुण भी हों।

भावार्थ-पूर्वोक्त गुण सहित गुरु ही सत्पुरुषों का भला करते हैं। इसलिये हमारा भी यहीं आशीर्वाद है कि इन गुणों से युक्त उपदेशदाता गुरु हो। जिससे जीवों का बुरा हो-ऐसा उपदेशदाता गुरु किसी का न हो।

हिंसादिक के त्यागी सत्पुरुष आज भी है

भर्त्तारः कुलपर्वता इव भुवा मोहं विहाय स्वयं,
रत्नानां निधयः पयोधय इव व्यावृत्तवित्तस्पृहाः
स्पृष्टाः कैरपि नो नभो विभुतया विश्वस्य विश्रान्तये,
सन्त्यद्यापि चिरन्तनान्तिकचराः सन्तः कियन्तोऽप्यमी।। (33)

अर्थ-चिरकालवर्ती महामुनियों के मार्ग पर चलने वाले शिष्य आज भी प्रत्यक्ष देखते जाते हैं। वे सत्पुरुष, कुलाचल (पर्वत) के समान पृथ्वी के स्वामी है। जिस प्रकार पर्वत पृथ्वी को धारण करता है परन्तु उसके प्रति मोह से रहित होता है, उसी प्रकार सत्पुरुष पृथ्वी में स्थित जीवों को पोषण करते हैं, परन्तु प्रति मोह से रहित हैं। जिस प्रकार समुद्र मोती आदि रत्नों की खान होने पर भी धन की अभिलाषा से रहित है, उसी प्रकार वे संत पुरुष भी सम्यग्दर्शन आदि रत्नों की खान होने पर भी धन आदि की अभिलाषा से रहित है और कैसे है सत्पुरुष? आकाश के समान अस्पर्शी हैं और सबसे बड़े होने से जगत् के जीवों के लिए विश्राम के स्थान हैं। जिस प्रकार आकाश किसी पदार्थ से लिप्त नहीं है और अखण्ड रूप से सर्व जगत् के रहने का स्थान है, उसी प्रकार वे संत पुरुष किसी परभाव से लिप्त नहीं है और महान्पने से सर्व जगत् के दुःख दूर करने के स्थान हैं।

लौकिक जीवों की मूर्खतापूर्ण प्रवृत्ति

पिता पुत्रं पुत्रः पितरमभिसंधाय बहुधा।
विमोहीदीहेते सुखलवमवाप्तुं नृपपदम्।।

अहो मुग्धो लोको मृतिजननदंष्ट्रान्तरगतो।
न पश्यत्यश्रान्तं तनुमपहरन्तं यममुम्।। (34)

अर्थ-मोह के कारण जिसमें सुख का अंश भासित होता है-ऐसे राजपद की अभिलाषा से पिता पुत्र को और पुत्र पिता को ठगता है। अहो! बड़ा आश्चर्य है कि मूर्ख लोग जन्म-मरण रूपी दाढ़ में स्थित, शरीर को निरंतर हरण करने वाले यम को नहीं देखते हैं।

विषयान्ध पुरुष की दुर्दशा का वर्णन

अन्धादयं महानन्धो विषयान्धीकृतेक्षणः।
चक्षुषाऽन्धो न जानाति विषयान्धो न केनचित्।। (35)

अर्थ-जिसके सम्यग्ज्ञानरूपी नेत्र विषयों से अंधे हो रहे है, वह अंधो से भी महा अंध है, क्योंकि जो अंधा है वह मात्र नेत्रों से ही नहीं जान पाता, परन्तु जो विषयों से अंधा है वह किसी भी इन्द्रिय से नहीं जानता।

गृहस्थाश्रम के त्याग की प्रेरणा

सर्वं धर्ममयं क्वचित् क्वचिदपि प्रायेण पापात्मकं,
क्वाप्येतद् द्वयवत्करोति चरितं प्रज्ञाधनानामपि।
तस्मादेष तदन्धरज्जुवलनं स्नानं गजस्याथवा,
मत्तोन्मत्तविचेष्टितं न हि हितो गेहाश्रमः सर्वथा।। (41)

अर्थ-यह गृहस्थाश्रम ही जीव का कल्याण करने वाला सर्वथा नहीं है। जिस प्रकार मतवाला व्यक्ति अनेक प्रकार की उन्मत्त चेष्टायों करता, उसी प्रकार यह गृहस्थाश्रम बुद्धिमान पुरुषों के भी अनेक प्रकार के चरित्र करता है। कभी तो सामायिक, प्रतिक्रमण, प्रोषधोपवास आदि से जीव को धर्ममय करता है, कभी स्त्री सेवनादि द्वारा पापमय करता है और कभी पूजा, प्रभावना, तीर्थयात्रा, चैत्य-चैत्यालय निर्माण इत्यादि कार्यों द्वारा पुण्य-पाप दोनों रूप करता है। इसलिये यह गृहस्थाश्रम अंधे द्वारा रस्सी बुनने जैसी या गज-स्नान करने जैसी पागलों की चेष्टा है।

गृहास्थाश्रम में होने वाले निरर्थक क्लेशों का वर्णन

कष्ट्वोप्त्वा नृपतीन्निषेव्य बहुशो भ्रान्त्वा वनेऽम्भोनिधौ,
किं क्लिश्नासि सुखार्थमत्र सुचिरं हा कष्टमज्ञानतः।
तैलं त्वं सिकतास्वयं मृगयसे वाञ्छेद्विषाज्जीवितुं,
नन्वाशाग्रनिग्रहात्तव सुखं न ज्ञातमेतत् त्वया।।(42)

अर्थ-हे जीव! तू इस गृहस्थाश्रम में सुख के लिए चिरकाल से व्यर्थ क्लेश करता है परन्तु इसमें सुख नहीं है। तू हल से खेत जोतकर बीज बोता है, खड्ग धारण करके राजा आदि की सेवा करता है, लेखन वृत्ति से उद्यम करता है, व्यापार के लिए वन और समुद्र में भटकता है। तूने अज्ञान के कारण चिरकाल से ये कष्ट सहन किये है। हाय-हाय! तेरी यह चेष्टा बालू में से तेल निकालने के समान और विष से जीवित रहने के समान है। अहो प्राणी! तुझे आशारूपी ग्रह शांत करने से ही सुख होगा, तृष्णा से नहीं-ऐसा न जानकर अज्ञानी होता हुआ तू व्यर्थ परिश्रम करता है।

आशारूपी अग्नि से दग्ध व्यक्ति की चेष्टा

आशाहुताशनग्रस्त वस्तूच्चैर्वंशजां जनाः।
हा किलैत्य सुखच्छायां दुःखधर्मापनोदिनः।। (43)

अर्थ-आशारूपी अग्नि से दग्ध तथा कनक कामिनी आदि वस्तुओं की निश्चय से भला जानने वाला व्यक्ति गर्मी में शीतलता प्राप्त करने के लिए बाँस की छाया ग्रहण करता है, परन्तु उसका यह प्रयास व्यर्थ है क्योंकि उससे धूप की गर्मी नहीं मिटती।

घर-कुटुम्ब आदि का स्वरूप

शरणमशरणं वो बन्धवो बन्धमूलं,
चिरपरिचितदारा द्वारमापद्गृहाणाम्।
विपरिमृशत पुत्राः शत्रवः सर्वमेतत्,
त्यजत भजत धर्मं निर्मलं शर्मकामाः।। (60)

अर्थ-जहाँ तुझे कोई बचाने वाला नहीं ऐसा घर शरण रहित है, बंधुजन बंध

के मूल है, तेरी अति परिचित स्त्री आपदारूप घर का द्वार है और पुत्र शत्रु है-इस प्रकार यह सर्व परिवार दुःख का ही कारण है। यदि तू सुख चाहता है तो इन सबका स्वरूप विचार कर इन्हें छोड़ और निर्मल धर्म को भज।

कुटुम्बीजन हितकारी नहीं

सत्यं वदात्र यदि जन्मनि बन्धुकृत्य
माप्तं त्वया किमपि बन्धुजनाद्धितार्थम्।
एतावदेव परमस्ति मृतस्य पश्चात्।
संभूय कायमहितं तव भस्मयन्ति।।(8)

अर्थ- हे आत्मन्! तू सत्य कह! क्या तूने इस संसार में बंधुओं को उनके द्वारा करने योग्य हितरूप कार्य करते हुए पाया है? हमें तो कुटुम्बियों द्वारा तेरा कुछ भी हित हुआ नहीं दिखता। उनका केवल इतना ही उपकार भासित होता है कि वे तेरे मरने के बाद इकट्ठे होकर तेरे इस शरीर रूपी शत्रु को जला देते हैं।

गुणहीनता से हानि होती है

पुरा शिरसि धार्यन्ते पुष्पाणि विबुधैरपि।
पश्चात् पादोऽपि नास्प्राक्षीत् किं न कुर्याद्गुणक्षति।। (139)

अर्थ - पहले सुगंध आदि गुणों से युक्त होने पर पुष्पों को देवों द्वारा भी मस्तक पर धारण किया जताा है और बाद में गुणों के निकल जाने के बाद कोई उन्हें पैरों से भी नहीं छूता-यह न्याय युक्त भी है क्योंकि गुणों का नाश होने पर कितनी लघुता नहीं होती? अपितु सर्व ही होती है।

भावार्थ : लोक में गुणों से ही महिमा होती है। देखो! जिस फूल को सुगंधादि गुण होने पर महान् पुरुष भी अपने मस्तक पर रखते थे, उसी फूल की सुगंध निकल जाने पर कोई पैरों की ठोकर भी नहीं मारता। इसी प्रकार ज्ञान सहित तप होने पर देव भी जिसकी पूजा करते हैं, भ्रष्ट होने पर कोई उसका समागम भी नहीं करता। अतः गुण का नाश लघुपना अवश्य करता है, इसलिये गुण की रक्षा अवश्य करना चाहिए।

यहाँ यह आशय समझना चाहिए कि कुल, पद या वेश आदि से अपने को बड़ा मानना भ्रम है। कोई जीव गुणवान होने पर वन्द्य था, वही जीव गुणहीन होने पर निन्द्य

हो जाता है, अतः स्वयं भ्रष्ट होने पर पूर्ववर्ती अन्य गुणवान जीवों के गुणों से यह वन्द्य कैसे हो सकता है? अपने वर्तमान गुणों से ही वन्द्यपना होता है, ऐसा निश्चय करना चाहिए।

गुरु के कठोर वचन भी हितकारी है

विकाशयन्ति भव्यस्य मनोमुकुलमंशवः।
रवेरिवारविन्दस्य कठोराश्च गुरुक्तयः।। (142)

अर्थ - जिस प्रकार सूर्य की किरणें भी कमल को प्रफुल्लित करती है उसी प्रकार गुरु की कठोर वाणी भी भव्य जीव के मन को प्रफुल्लित करती है।

भावार्थ- श्री गुरु दोष छुड़ाने और गुण-ग्रहण कराने के लिए कदाचित् असुहावने कठोर वचन भी कहे तो भी भव्य जीव का मन उन वचनों को सुनकर प्रसन्न ही होता है, उसे चिन्ता या खेद नहीं होता। जिस प्रकार सूर्य की किरणें यद्यपि औरों को आताप उत्पन्न करने वाली उग्र या कठोर होती हैं, तथापि वे कमल की कली को प्रफुल्लित ही करती है उसी प्रकार गुरु के वचन पापियों को स्वयं हीन होने के कारण यद्यपि दुःख उत्पन्न करने वाले कठोर होते हैं तथापि वे धर्मात्मा के मन को आनंद ही उत्पन्न करते हैं। धर्मात्मा जीवों को श्री गुरु जब दबाकर (अत्यन्त कठोरता के साथ) उपदेश देते हैं, तब वे अपने को धन्य मानते हैं।

प्रश्न-कठोर उपदेश से पापियों को तो दुःख ही होगा?

उत्तर-श्री गुरु जिसे पापी या तीव्र कषायी समझते हैं, उसे कठोर उपदेश नहीं देते वहाँ माध्यस्थ भाव रखते हैं।

यहाँ तो आचार्य शिष्य को शिक्षा देते हैं कि श्री गुरु तेरा भला करने के लिए कठोर वचन कहते हैं, उन्हें तुमसे ईर्ष्या का प्रयोजन नहीं है, अतः उन्हें इष्ट जानकर उनका आदर ही करना चाहिए।

धर्मात्माओं की दुर्लभता

लोकद्वयहितं वक्तुं श्रोतुं च सुलभाः पुरा।
दुर्लभाः कर्तुमद्यत्वे वक्तुं श्रोतुं च दुर्लभाः।। (143)

अर्थ- पूर्व काल में दोनों लोकों में हितकारी धर्म को कहने और सुनने वाले

सुलभ थे किन्तु करने वाले दुर्लभ थे लेकिन इस काल में तो कहने और सुनने वाले भी दुर्लभ हो गये हैं।

भावार्थ-इस लोक और पर-लोक में जीव का हित करने वाले धर्म को कहने वाले और सुनने वाले पहले चतुर्थ काल में बहुत होते थे परन्तु अंगीकार करने वाले तो उस समय भी थोड़े ही थे क्योंकि संसार में धर्मात्मा थोड़े ही होते हैं।

लेकिन अब यह पञ्चमकाल ऐसा निकृष्ट है कि इसमें सच्चे धर्म को कहने वाले और सुनने वाले भी थोड़े पाये जाते हैं क्योंकि कहने वाले तो अपने लोभ और मान के अभिलाषी हो गये है इसलिये वे यथार्थ नहीं कहते तथा सुनने वाले जड़ और वक्र हो गये हैं इसलिये वे परीक्षा रहित, हठग्राही होने से यथार्थ बात नहीं सुनते। जब कहना-सुनना ही दुर्लभ हो गया तो अंगीकार करने की बात ही क्या करना?

इस प्रकार इस काल में धर्म दुर्लभ हो गया है सो ठीक ही है क्योंकि यह पञ्चमकाल ऐसा निकृष्ट है कि जिसमें सभी उत्तम वस्तुएँ अल्प होती जाती है और धर्म भी तो उत्तम है अतः उसकी वृद्धि कैसे हो सकती है? इसलिये इस निकृष्ट काल में उन्हें धर्म की प्राप्ति होती है वे ही धन्य है।

विवेकी जन प्रंशसा में संतुष्ट नहीं होते

गुणागुणविवेकभिर्विहितमप्यलं दूषणं,
भवेत् सदुपदेशवन्मतिमतामतिप्रीतये।
कृतं किमपि धार्ष्टयतः स्तवनमप्यतीर्थोषितैः,
न तोषयति तन्मनांसि खलु कष्टमज्ञानता।। (144)

अर्थ- गुण-दोष के विवेक से युक्त सत्पुरुषों द्वारा अपने दोष अधिकता से प्रगट करना भी बुद्धिमानी जीवों को भले उपदेश के समान अत्यन्त प्रीति उत्पन्न करने वाला होता है और धर्म तीर्थ का सेवन न करने वाले (दुष्ट पुरुषों) द्वारा धीठता से किया गया।

गुणानुवाद भी उन बुद्धिमान विवेकी जीवों को संतोष उत्पन्न नहीं करता परन्तु तुझे (शंकाकार को) अन्यथा भासित होता है, तेरी इस अज्ञानता से हमें खेद होता है।

भावार्थ- जो जिसका हित करना चाहता है, वह वैसा ही कार्य करता है, जिसमें उसके प्रिय का हित हो इसलिये सत्पुरुष भी अपने प्रिय का अहित करने वाले

दोषों को दूर करने के लिए उसके दोष प्रगट करते हैं। यदि वे उसके दोष प्रगट नहीं करेंगे तो अज्ञानी दोषों को कैसे जानेंगे और दोषों को जाने बिना उन्हें दूर कैसे करेंगे? तथा जो जिस व्यक्ति से अपना लोभादिक प्रयोजन सिद्ध करना चाहता है वह वहीं कार्य करेगा जिससे वह व्यक्ति प्रसन्न हो इसलिये वह उस व्यक्ति के दोषों को भी धीठपने से गुण बताकर उसकी बड़ाई करेगा क्योंकि यदि वह बड़ाई न करे तो अज्ञानियों का मान कैसे बढ़ेगा और यदि उनका मान न बढ़े तो वे उसका प्रयोजन क्यों सिद्ध करेंगे?

इस प्रकार सत्पुरुष दोष भी प्रगट करते हैं और अधर्मी प्रशंसा भी करते हैं। मूर्खों को उनके दोष बताना बुरा लगता है और प्रशंसा करना अच्छा लगता है। लेकिन विवेकीजन ऐसा मानते हैं कि यह मेरा भला करने के लिए ही दोष बता रहे हैं, यह तो मुझे अच्छी शिक्षा दे रहे हैं-इस प्रकार विचार कर वे उसे अच्छा ही मानते हैं। अपने प्रयोजन की सिद्धि के लिए दोषों को गुण बताने वाले तो ठग है, उनके द्वारा की गई प्रशंसा मेरा अहित करने वाली हैं-इस प्रकार विचार कर वे उसे अनिष्ट मानते हैं।

इस प्रकार दोष बताने से विवेकियों को आर्त्तध्यान हो जायेगा-ऐसा भ्रम नहीं करना चाहिए।

अहित का त्याग और हित में प्रवर्तन करने की प्रेरणा

हितं हित्वाऽहिते स्थित्वा दुर्धीर्दुःखायसे भृशम्।
विपर्यये तयोरेधि त्वं सुखायिष्से सुधीः।। (146)

अर्थ- हे जीव! तू दुर्बुद्धि होता हुआ हित को छोड़कर अहित में स्थित रहकर अपने को अत्यन्त दुःखी करता है, इसलिये अब इसका उल्टा कर! अर्थात् सुबुद्धि होता हुआ अहित को छोड़कर हित में स्थित रहते हुए उसी की वृद्धि कर! इससे तू अपने स्वाभाविक सुख को प्राप्त करेगा।

स्वच्छन्द प्रवृत्ति करने वालों की संगति का निषेध

एते ते मुनिमानिनः कवलिता कान्ताकटाक्षेक्षणैः,
अङ्गालग्नशरावसन्नहरिणप्रख्या भ्रमन्त्याकुलाः।
संधर्तुं विषयाटवीस्थलतले स्वान् क्राप्यहो न क्षमाः,

मा व्राजीन्मरुदाहताभ्रचपलैः संसर्गमेभिर्भवान्।। (150)

अर्थ- जो प्रत्यक्ष में मुनि नहीं है, परन्तु अपने को मुनि मानते हैं, वे स्त्रियों के कटाक्ष भरे अवलोकन से ग्रसित, बाणों के धावों से पीड़ित हिरण के समान व्याकुल होकर भ्रमण करते हैं। वे विषयरूपी वन के स्थल भाग में कहीं भी स्वयं को स्थिर नहीं रख पाते-ऐसे पवन द्वारा खण्डित बादलों के समान चपल और चंचल भ्रष्ट मुनियों की संगति भव्य जीवों को नहीं करना चाहिए।

भावार्थ- जिस प्रकार हिरण के अंगों में बाण लगने पर वह उसकी पीड़ा से व्याकुल होकर कूदता फिरता है, जंगल में किसी एक जगह स्थिर नहीं रह पाता; उसी प्रकार इन भ्रष्ट मुनियों के अंतरंग में मानों स्त्रियों के कटाक्षमय अवलोकनरूपी काम बाण लगा है इसलिये ये उसकी पीड़ा से व्याकुल होकर भ्रमरूप हो रहे हैं, किसी एक विषय में मन लगाने में समर्थ नहीं हैं अर्थात् काम की तीव्रता के कारण धर्म साधन करना तो दूर; परन्तु ये देखना सुनना-सूँघना आदि विषयों में भी मन को स्थिर नहीं कर सकते।

जिस प्रकार बादल हवा से बिखरकर चंचल हो जाते हैं (यहाँ-वहाँ उड़ने लगते है) उसी प्रकार ये मुनि विकारी भावों से भ्रष्ट होकर चंचल हो जाते हैं। अरे! उनकी तो होनहार ही ऐसी है परन्तु हे भव्य! तुझे कुछ धर्म बुद्धि है अतः तुझे शिक्षा देते हैं कि तू ऐसे भ्रष्ट लोगों की संगति मत कर, यदि संगति करेगा तो तू भी उसका साथी होकर दुर्गति को प्राप्त होगा। भावार्थ यह है कि भ्रष्ट मुनि संगति करने योग्य भी नहीं है।

अयाचक वृत्ति धारण करने की प्रेरणा

गेहं गुहाः परिदधसि दिशो विहायः
संव्यानमिष्टमशनं तपसोऽभिवृद्धिः।
प्राप्तागमार्थ तव सन्ति गुणाः कलत्र-
मप्रार्थ्यवृत्तिरसि यासि वृथैव याञ्चाम्।। (151)

अर्थ- यहाँ जिसने आगम का अर्थ समझ लिया है उसे संबोधित करते हुए कहते हैं-हे प्राप्तगमार्थ! गुफा तो तेरा मंदिर है, दिशायें वस्त्र हैं, आकाश वाहन है, तप

की वृद्धि इष्ट भोजन है और गुण स्त्री है। इस प्रकार किसी और के पास जो याचना करने योग्य सामग्री नहीं है, वह तेरे पास है। अब तू व्यर्थ ही याचना क्यों करता है, तुझे दीन होना योग्य नहीं है।

कौन दीन और कौन अभिमानी

परमाणोः परं नाल्पं नभसो न परं महत्।
इति ब्रुवन् किमद्राक्षीत्रेमौ दीनाभिमानिनौ।। (152)

अर्थ- परमाणु से छोटा कोई नहीं तथा आकाश से बड़ा और कोई नहीं ऐसा कहने वालों ने क्या दीन और अभिमानियों को नहीं देखा।

भावार्थ- कुछ लोग कहते हैं कि परमाणु से छोटा और आकाश से बड़ा दूसरा कोई नहीं है, परन्तु ऐसा लगता है कि उन्होंने दीन और अभिमानी लोगों को नहीं देखा है (अन्यथा वे ऐसा नहीं कहते)। यदि वे दीन व्यक्ति को देखते तो परमाणु से छोटा दीन को कहते और यदि वे अभिमानी को देखते तो आकाश से भी बड़ा अभिमानी को कहते। यहाँ यह आशय है कि याचना करने वाला दीन पुरुष, धर्म या मानादि घटने से सबसे छोटा ही है और याचना नहीं करने वाला अभिमानी पुरुष, धर्म या मानादि बढ़ने से सबसे बड़ा है।

प्रश्न-कषाय तो धर्म का प्रतिपक्षी है, अतः दीन के मानादि घटने से और अभिमानी के मानादि बढ़ने से धर्म कैसे होगा?

उत्तर-किसी कषाय की तीव्रता से कोई अन्य कषाय मंद हो जाये तो उससे धर्म नहीं होता। दीन व्यक्ति को लोभ की तीव्रता के कारण मान आदि घट जाते हैं, परन्तु इससे उसे धर्म नहीं होता, पाप ही होता है तथा सभी कषायें घटने पर भ्रम से कषाय करने वाले जैसी अवस्था भासित होने पर भी धर्म ही है। यहाँ मान कषाय करने वाले का नाम अभिमानी नहीं है। लोभ होने पर भी किसी की याचना नहीं करना ही अभिमान है। परन्तु धर्मात्मा जीव की सभी कषायें मंद हो गई है इसलिये वह पापी जीवों की विनय नहीं करता (क्योंकि लोभ भी नहीं है) इसलिये वह भ्रम से मानी जैसा भासित होता है, परन्तु वह मानी नहीं है, उसे धर्म ही है।

सत्संग का फल दुःखक्षय

तम्हा समं गुणादो समणो समणं गुणेहिं वा अहियं।
अधिवसदु तम्हि णिच्चं इच्छदि जदि दुक्खपरिमोक्खं।। (270) प्र.सा.

Therefore, a Sramana if he desires for release from misery, should always live with an ascetic of epual merits of possessing more merits.

(तम्हा) इसलिए (जदि) यदि (समणो) साधु (दुक्ख परिमोक्खंइच्छदि) दुःखों से छूटना चाहता है तो (गुणादो समं) गुणों में समान (वा गुणेहिं अहियं समणं) वा गुणों से अधिक साधु के पास ठहरकर (णिच्चं) सदा (तम्हि) उसी ही साधु की (अधिवसदु) संगति करे क्योंकि हीन साधु की संगति से अपने गुणों की हानि होती है। इसीलिये जो साधु अपने आत्मा से उत्पन्न ासुख से विलक्षण नारक आदि के दुःखों से मुक्ति चाहता है तो उसको योग्य है कि वह हमेशा ऐसे साधु की संगति करे जो निश्चय-व्यवहार रत्नत्रय के साधन में अपने बराबर हो या मूल व उत्तर गुणों में अपने से अधिक हो जैसे-अग्नि की संगति से जल के शीतल गुण का नाश हो जाता है तैसे ही व्यावहारिक या लौकिक जन की संगति से संयमी का संयम गुण नाश हो जाता है, ऐसा जानकर तपोधन को अपने समान या अपने से अधिक गुणधारी तपोधन का ही आश्रय करना चाहिए। जो साधु ऐसा करता है उसके रत्नत्रयमय गुणों की रक्षा अपने समान गुणधारी की संगति से इस तरह होती है जैसे शीतल पात्र में रखने से शीतल जल की रक्षा होती है और उसी जल में कपूर, शक्कर आदि ठंडे पदार्थ और डाल दिये जावे तो उस जल के शीतलपने की वृद्धि हो जाती है उसी तरह निश्चय-व्यवहार रत्नत्रय रूप गुणों में जो अपने से अधिक है उनकी संगति से साधु के गुणों की वृद्धि होती है ऐसा इस गाथा का अभिप्राय है।

आत्मा परिणाम स्वभाव वाला है। इसलिए लौकिक संग से विकार अवश्यंभावी होने वह संयत भी असंयत हो जाता है। जैसे अग्नि के संग से पानी उष्ण हो जाता है इसलिए दुःखों से मुक्ति चाहने वाले श्रमण को (1) समान गुण वाले श्रमण के साथ अथवा (2) अधिक गुण वाले श्रमण के साथ सदा ही निवास करना चाहिए (1) जैसे शीतल घर के कोने में रखे हुए शीतल पानी के शीतल गुण की रक्षा होती है उसी प्रकार समान गुण वाले की संगति में उस श्रमण के गुण की रक्षा होती है और (2) जैसे अधिक

शीतल हिम (बर्फ) के संपर्क में रहने से शीतल पानी के शीतल गुण में वृद्धि होती है उसी प्रकार अधिक गुण वाले के संग से उस श्रमण के गुण वृद्धि होती है।

समीक्षा- प्रत्येक द्रव्य परिणमनशील है। परिणमन के लिए अंतरंग एवं बहिरंग कारण चाहिए। अंतरंग कारण स्वयं द्रव्य होता है। बहिरंग कारण बाह्य द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव होता है। द्रव्य यदि शुद्ध है तो परिणमन शुद्ध होगा द्रव्य यदि अशुद्ध है तो परिणमन अशुद्ध होगा। बिना बाह्य एवं अंतरंग कारण द्रव्य में परिवर्तन नहीं हो सकता है। संसार के प्रत्येक कार्य भले बंध हो या मोक्ष हो-अच्छे हो या बुरे हो दोनों कारण के बिना नहीं हो सकते हे। समंतभद्र स्वामी ने स्वयंभूस्तोत्र में वासुपूज्य भगवान् की स्तुति में कहा भी है-

बाह्येतरोपाधिसमग्रतेयं कार्येषु ते द्रव्यगतः स्वभावः।
नैवान्यथामोक्षविधिश्च पुंसां तेनाभिवन्द्यास्त्वमृषिर्बुधानाम्।।

हे भगवन्! घट आदि कार्यों में यह जो बाह्य और आभ्यन्तर कारणों की पूर्णता है वह आपके मत में जीवादि द्रव्यगत स्वभाव है अन्य प्रकार से घटादि की विधि ही नहीं किन्तु मोक्षाभिलाषी पुरुषों के मोक्ष की विधि भी घटित नहीं होती है इसलिए परम ऋद्धियों से युक्त आप गणधरादि बुद्धिजनों के वंदनीय है।

मूलाचार में संगति के गुण-दोष का वर्णन निम्न प्रकार से किया है-

वड्ढदि बोही संसग्गेण तह पुणो विणस्सेदि।
संसग्गविसेसेण दु उप्पलगंधो जहा कुम्भो।। (905)

संसर्ग से बोधि बढ़ती है तथा पुनः नष्ट भी हो जाती है। जैसे संसर्ग विशेष से जल का घड़ा कमल की सुगंध से युक्त हो जाता है।

सदाचार के संपर्क से सम्यग्दर्शन आदि की शुद्धि बढ़ जाती है।

स्व-आत्म आराधना हेतु धर्माराधना

(वन्दे तद् गुणलब्धये)

(निश्चय से स्व शुद्धात्मा ही गण-गच्छ-संघ-संयम (धर्म))

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल :1. मन रे तू... 2.सायोनारा...)

'कनक' तू स्व-आत्महित/(शुद्धि) कर ऽऽऽ
आत्महित हेतु ही देव-शास्त्र-गुरु...गण-गच्छ व संघ ऽऽ (ध्रुव)

रयणत्तयमेव गणं, गच्छ गमणस्स मोक्ख मग्गस्स।
संघो गुण संघाओ, समयो खलु णिम्मलो अप्पा।। (163) रयणसार
रत्नत्रयमेव होता है गण...मोक्षमार्ग में गमन है गच्छऽऽ
संघ होता है गुणों का समूह..समय/(ज्ञान) होता निश्चय से निर्मल आत्मा
इस हेतु ही व्यवहार गण-गच्छ संघऽऽऽकनक...(1)

देवगुरुसमयभत्ता, संसार सरीर भोग परचित्ता।
रयणत्तय संजुत्ता ते मणुया सिव सुहं पत्ता।। (9 रयण.)
देवगुरु शास्त्र की भक्ति सहित...संसार शरीर भोग से हो विरक्तऽऽ
रत्नत्रय से हो तू संयुक्त...तब मिलेगा तुम्हें शिव सुखऽऽ
वन्दे तद्गुण लब्धये सिद्धान्तऽऽ 'कनक' ..(2)

णियसुद्धप्पणुरत्तो बहिरप्पावच्छवज्जियो णाणी।
जिणमुणि धम्मं मण्णइ गइदुक्खी होइ सद्दिट्ठी।। (6 रयण.)
निज शुद्धात्मा में हो अनुरक्त...बहिरात्मा व बाह्य पदार्थ त्यागोऽऽऽ
जिनेन्द्र मुनि जिनधर्म को मानो...दुःखक्षय होगा सुदृष्टि ज्ञानीऽऽ
इस हेतु ही बनो ज्ञानी-ध्यानऽऽ 'कनक'... (3)

इसके अतिरिक्त अन्य न चाहो...अन्य न हो तेरे कोई लक्ष्यऽऽ
ख्याति पूजा लाभ सत्कार पुरस्कार..वर्चस्व से लेकर स्वर्ग सुखऽऽ
शुद्धात्मा बनने हेतु वन्दे परमात्मा ऽऽ 'कनक' (4)

भक्ति आराधना तप त्याग ज्ञान...ध्यान-अध्ययन से ले प्रभावना
शोध-बोध न लेखन-चिन्तन...सभी में करो आत्म आराधनाऽऽ
आत्मोपलब्धि हेतु चारों आराधना ऽऽ 'कनक' (5)

परम आध्यात्मिक साम्यवाद-

मुझ से कोई न छोटा न कोई महान्

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : यमुना किनारे....)

श्रद्धा-प्रज्ञा से मुझे हो रहा है ज्ञान, मुझसे न कोई छोटा कोई न महान्।
''सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया'' से हुआ यह ज्ञान,
'सद्द्रव्य लक्षणं' से हर जीव है समान।।(1)
'अहमेक्को खलु सुद्धो' तीर्थंकरों (सर्वज्ञों) ने कहा,
''तत्त्वमसि'' महावाक्य वेदांत ने कहा।
'गुणपर्ययवद् द्रव्यं' से हर जीव में सम गुण,
'उदार पुरुषाणां वसुधैवकुटुम्बकम्।।' (2)
निगोदिया से सिद्ध तक सभी बने हैं भगवान्,
संसारी जीव ही मुक्त बनते आगम कथन।
'भेदादणु' से यथा स्कन्ध से बनते अणु,
''सिद्धिः स्वात्मोपलब्धि'' से संसारी बनते-सिद्ध।।(4)
सिद्ध में अनंतानंत गुण होते प्रगट,
अनंत ज्ञान-दर्शन सुखवीर्यादि अनन्त गुण।
कर्म के कारण जीवों में होती है विभिन्नता,
कर्मों से रहित जीवों में होती है समानता।।(5)
ऐसी दृष्टि होने पर होती है सुदृष्टि,
सुदृष्टि जीवों को ही होती है सुबोधी।
ऐसे जीवों में ही होती है समता,
ऐसे जीवों में ही होती उपरोक्त सुदशा।। (6)
यह है आध्यात्मिक परम समता,
आर्थिक-राजनैतिक समता से महानता।

मैत्री प्रमोद कारुण्य माध्यस्थ से सहित,
ऐसे परम आध्यात्मिक, को 'कनक' मानता श्रेष्ठ।।(7)

मैं हूँ निश्चय से शुद्ध-बुद्ध-आनन्द

- आचार्य कनकनन्दी

(चाल : पायोजी मैंने....)
जाना है मैंने मैं हूँ निश्चय से शुद्ध जीव। (आत्मधर्म)।
आगम अनुभव नय प्रमाण से मैं हूँ चैतन्य द्रव्य।। (स्थायी)
भले अनादि कर्म सम्बन्ध से बना हूँ अशुद्ध जीव।
तथापि मैं हूँ द्रव्यदृष्टि से शुद्ध-बुद्ध-आनन्द।। (1)

शुद्ध-बुद्ध व आनन्द हेतु ही कर रहा हूँ मैं धर्म।
तप-त्याग व ध्यान-अध्ययन समस्त श्रमण धर्म।।(2)

जिससे शुद्ध-बुद्ध-आनन्द मिले वह ही यथार्थ धर्म।
जिससे शुद्ध-बुद्ध-आनन्द न मिले वह ही पक्का अधर्म।।(3)

राग-द्वेष-मोह-काम-क्रोध-मद-ईर्ष्या-घृणा-तृष्णादि अशुद्ध।।
परनिन्दा-अपमान-वैर-विरोध आदि कुभाव है अशुद्ध।। (4)

ख्याति-पूजा-लाभ-प्रसिद्धि-वर्चस्व-पुरस्कार-तिरस्कारादि अशुद्ध।
अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा-आकर्षण-विकर्षण द्वन्द्व अशुद्ध।। (4)

अशुद्ध भाव से रहित ज्ञान होता है यथार्थ से बोध।
जितने अंश में होता है बोध उतने अंश होता बुद्ध।। (6)

जितने अंश में होते शुद्ध-बुद्ध उतने अंश में आनन्द।
पूर्ण शुद्ध-बुद्ध से होता है पूर्ण आनन्द यह परम अध्यात्म।। (7)

यह ही मेरा परम धर्म है यही मेरा स्व-धर्म।
यह ही मेरा परम लक्ष्य है 'कनक' चाहें आत्मधर्म।।(8)